जलसाघर

मूल

ताराशंकर वन्द्योपाध्याय

हिन्दी रूपान्तर

रंगनाथ राकेश



भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन



राष्ट्रभारती
लोकोदय ग्रन्थमाला : ग्रन्थांक 302

जलसाघर
(कहानी-संग्रह)
ताराशंकर बन्द्योपाध्याय

तृतीय संस्करण 1984
मूल्य : 24/-

प्रकाशक
भारतीय ज्ञानपीठ
बी/45-47, कनॉट प्लेस,
नयी दिल्ली-110001

मुद्रक
अंकित प्रिंटिंग प्रेस
शाहदरा, दिल्ली-110032
आवरण-शिल्पी : हरिपाल त्यागी



JALSAGHAR : (Stories) : by Tarashankar Bandyopadhyaya Published by Bharatiya Jnanpith B/45-47, Connaught Place, New Delhi-110001. Printed at Ankit Printing Press, Shahdrara Delhi. Third Edition 1984. Rs. 24/-

जलसाघर

अनुक्रम

•

रसकली

पाल-पोखर के घाट पर विशाल बरगद के पेड़ की एक जटा अजगर की तरह कुण्डली मारे, गर्त के भीतर धसी हुई, जैसे धूप ले रही हो। पुलिनदास उसी पर 'द' की तरह घुटने मोड कर नीचे झुका हुआ पानी मे मिट्टी के टूटे बर्तनों के गोल ढेलों से 'ब्याड् छुड़छुडि'[1] खेल रहा था। उस के कन्धे पर गमछा, कान पर थी एक जली हुई बीड़ी।

उस के साथी बलाईदास ने आ कर पुकारा—अरे ओ पेला, उठ आ। अरे ओ कोढ़ी काली, उठ आ। चाचा तो—

पुलिन ने हाथ के ढेले पानी के बदले जमीन पर फेंक कर कहा—तो बुड्ढा बेटा अब-तब है?

बलाई ने उत्साहपूर्वक कहा—अब देर नही, उठ आ।

दोनों ही गाँव की डगर पर चले, बलाई आगे, पुलिन पीछे।

पुलिन ने सहसा कहा—वह खूब रो-धोर ही है, क्यों रे बलाई?

बलाई ने कहा—ब-हु-त, गिर-पड रही है। उस का सिर गर्दन के पास लटक सा आया, दोनों होंठ ठुड्डी तक टेढ़े हो गये।

---

१. टूटे हुए मिट्टी के बर्तनों के गोल टुकड़ो को पानी की सतह पर इस तरह मारते हैं कि वह मेढक सा उछलता, सरकता चला जाये। इसे भोजपुरी में 'छिछली मारना' भी कहते हैं।—अनुवादक।

दोनों ही चुपचाप, रास्ता पकड़े चले जा रहे थे। जमीन-छूती लम्बी रस्सी में बँधी हुई गाय घास चर रही थी। पता नहीं किस कारण से पुलिन ने चट बायें हाथ की दोनों अँगुलियों से गाय की पीठ दबा कर साथ ही नाक में घों-घों-घड-घों की तेज आवाज की, तुरन्त ही गाय भी गर्दन हिला कर उछल पड़ी।

पुलिन तेजी से कूद कर हाथ हटाता हुआ बोला—बाप रे ! क्या रोब है ! मेरी बहू भी ठीक ऐसी है, हमेशा गरदन टेढ़ी किये रहती है।

केवल शरीर-सौन्दर्य को छोड़ कर पुलिनचन्द्र के पास कुछ भी प्रशंसा योग्य नहीं था। उस की देह सुन्दर थी, आकार दीर्घ, बलवान काठी, गोरा रंग, घुँघराले बाल और समूची देह पर जैसे एक मधुर लावण्य। इस के अलावा कोई भी गुण नहीं था। बुद्धि तो खैर कभी थी ही नहीं, बचपन में ही पाठशाला के गुरु जी—एक पैसे के तीन आम तो तीन आम के दाम, मुँह-जबानी सवाल उसे तीन घण्टे में भी नहीं समझा पा कर स्वयं ही उस का बोरिया-बस्ता बाँध कर उस के बगल में दे कर बोले थे—बेटा, तो शुभकर इस जन्म में बैरागी-कुल में जन्म ले कर हिसाब तक से वैराग्य ले चुके हैं, यह नहीं जानता था मैं। तुम्हें पढ़ाना मेरे बूते का नहीं है।

इस के ऊपर वह था मूर्तिमान् अगिया-बैताल।

मण्डली में भले ही लंकाकाण्ड की तरह गम्भीर आलोचना चल रही हो, बूढ़े जाम्बवन्त राय दे रहे हों, महफिल के सारे लोग निस्तब्ध, स्तम्भित हों ! सहसा वहाँ पुलिनचन्द्र जैसे आश्चर्य की गुदगुदाहट से खिलखिला कर हँस पड़ता है—हें-हें-हें-हे-हे-हेः, बाप रे यह तो मेरे बाबा के ही बारे में लिखा है। ये बड़े-बड़े बाल और इतनी बड़ी दाढ़ी, ठीक, ठीक, जाम्बवन्त, जाम्बवन्त—हे-हें-हें-हे-हें !

या हनुमान-सूर्य का प्रसंग चल रहा हो, देवता भी जहाँ हँसते-हँसते लोट-पोट हो रहे हों, वहाँ पुलिन आश्चर्य के मारे विजड़ित। दोनों आँखें तेल-भरे बड़े की तरह फटी-फैली-सी, आस-पास के आदमियों से कहता—बाप रे, क्यों हँसते हो ? इस के बाद उत्साह से वाहवाही देता—

बलिहारी है बाप हनुमान् ! बाबू लोगों के प्यादों से भी बढ कर तुम पहलवान हो।

ग्रन्थकार को भी वह नही छोड़ता था, पुलिन कहता था—किताब है लेकिन मजेदार, चटपटी, अचम्भे में डाल देती है यह !

रावण-वध का प्रसंग है, सीता के उद्धार से श्रोता मण्डली भावावेश मे जय-जयकार कर रही है। लेकिन पुलिन का रस-बोध विचित्र था, वह आँसू भरी आँखों कहता—उफ् ! इतनी स्त्रियाँ विधवा हुईं, ओह, ओह !

और साथ ही साथ घबरा कर जैसे खोजपूर्ण बात कह उठता—अच्छा, लंका मे तब मछली का भाव कितने सेर का था ? एक पैसा या दो पैसे सेर ? यह नही लिखा ?

लोग तभी उस की मूर्खता के ऊपर एक और रद्दा जमा कर कहते—पागल।

पुलिन क्रोध नही करता, हँसमुख ही रहता, उत्तर के रूप में कहता—एँ !

क्रोध करता है एक व्यक्ति, लज्जित और दुखी भी होता है एक दूसरा व्यक्ति। दोनों के बीच पहली है पुलिन की स्त्री, अठारह-उन्नीस साल की उम्र, गोल-गाल भरी-भरी देह, नाम गोपिनी।

लेकिन पुलिन कहता—सर्पिणी ! पुलिन की मूर्खता की लज्जा की खरोंच से गोपिनी को क्रोध आता, साँपिन की तरह वह फुँफकारती। उस की बातचीत भी होती थी लपलपाती सर्पिणी-जिह्वा सी ही तीक्ष्ण भयावह। मासूम, सभी के लिए हँसी के पात्र अपने पति के घर में सैंकड़ों लज्जा के बीच में गोपिनी को जो एक सान्त्वना का आश्रय मिला था, वह था वही द्वितीय व्यक्ति, जो पुलिन के लिए लज्जा और दुख से मर-सा जाता था, वह था पुलिन का एक बूढ़ा चाचा रामदास महन्त, जिस के साथ पुलिन जाम्बवन्त की तुलना देता था।

रामदास की हालत ठीक-ठाक, काफ़ी जमीन-जायदाद, घर में दुधारू गायें, गाँव में दस-पाँच रुपये का लेन-देन !

उस का चेहरा आज सिर्फ़ दाढ़ी और बालों के ही कारण कुरूप नही,

सदैव से ही कैसा श्रीविहीन सा था, युवावस्था में परम आग्रह से जिस श्रीमती के साथ घर-द्वार बसाया था, वही श्रीमती उस के उसी बुरे चेहरे के कारण घर-द्वार पर लात मार कर कहीं गायब हो गयी।

श्रीमती की खोज में, गृही वैरागी का वंशज रामदास लम्बा अँगरखा पहन कर, कन्धे पर झोला डाल कर घुमक्कड़ी भिखारी वैरागी बन गया, दुख के कारण उस ने संसार को झाड़-पोंछ कर त्याग दिया लेकिन संसार ने उसे नहीं त्यागा।

श्रीमती का पता नहीं लगा, लेकिन उस की झोली में किसी दिन श्री आ गयी और उसे संसार की ओर उन्होंने मोड़ दिया, तब भीख माँगने से ही उन के पास तीन सौ रुपयों की पूँजी जमा हो चुकी थी, घर की जमीन से असामियों और पट्टीदारों के यहाँ बहुत सारा धान भी जमा हो चला था। श्रीमती के अभाव में रामदास ने श्री को ले कर अच्छी तरह घर-द्वार बसा लिया।

दस-पाँच लोगों ने कहा—महन्त! इस बार अच्छी तरह से घर द्वार बसाओ, जरा देख-सुन कर एक अच्छी सी वैष्णवी···

रामदास ने कहा—राधे, राधे, ये बातें छोड़ दो भाई, राधारानी मेरे मन में ही ठीक है, ध्यान में ही ठीक है वे, बाहर कुछ बे-जा या टेढ़ी। जरा त्रिभंगी मुद्रा वाले कृष्ण की ही लाछना देखो न! जय राधे, श्रीमती, श्रीमती!

पता नहीं किस ने, उसी बीच, स्त्री जाति की निन्दा की, महन्त ने सिर हिला कर कहा—राधे, राधे, ये बातें मत कहो, यह नहीं कहना चाहिए। श्रीमती की जाति है, वे सभी अच्छी हैं।

किसी ने होंठ काट कर मज़ाक में कहा—तो तुम्हारी श्रीमती···

महन्त ने हँस कर कहा—अरे भाई, ये सब श्रीमती की जाति की है, सुन्दर के ही साथ तो उन का सम्बन्ध है। कुरूप को भला बाबा, कौन पसन्द करता है भाई?

इसी समय रामदास के बड़े भाई श्यामादास अपने मातृहीन आठ वर्षीय सुन्दर पुत्र पुलिन को छोड़ कर स्वर्ग सिधारे। रामदास पुलिन को गले लगा कर यशोदा की तरह माँ बन गये।

रूपवान् पुलिन बडा हुआ। वैष्णव का लड़का, कीर्तन के अखाड़े में झाल-मँजीरा छोड़ कर लाठी के अखाड़े में लाठी चलाना सीख गया। बलाई हुआ साथी। गाँजे की पडी लत। रामदास नियन्त्रण नही कर पाये। केवल दुख किया। मन-ही-मन सोचा कि सुन्दरी बहू पाने पर पुलिन आदमी बन जायेगा, मूर्ख पुलिन बुद्धिमान् हो जायेगा, घर-द्वार समझेगा-बूझेगा।

रामदास पुलिन के लिए विवाह योग्य कन्या खोजने लगा।

सौरभी वैष्णवी ने आ कर कहा—तो महन्त! मेरी बेटी मजरी के साथ पुलिन का विवाह क्यों नही कर देते? दोनो ही बचपन के साथी हैं, मेल-जोल भी है खूब—

रामदास ने कहा—राधे, राधे, वह भला कैसे हो सकता है, सौरभी? हम लोग ठहरे जन्मजात वैष्णव, तुम लोग 'भेखदारी'।

सौरभी थी धोबी की लडकी, वेष से वैष्णव हुई है। उस की लड़की के साथ भतीजे का विवाह रामदास को नही रुचा। नही तो सौरभी की बेटी मजरी सुन्दर थी, नजर लग जाये ऐसी लडकी। परन्तु तनिक चुलबुली, मदमाती-सी। उस की देह में जैसे तरगें उठती हैं, बातचीत करते-करते हँसी का झरना फूट पडता है। हँसने पर उस के गोल गालो मे गड्ढे पड जाते, खडी होती है वह तिरछी गर्दन कर के। नाक पर रसकली[1] बनाती है, जूड़ा बाँधती है केशों का, बोलने की शैली भी न जाने कैसी बाँकी। लोग पता नही क्या-क्या कहते, लेकिन वह उस पर कान नही देती। नदी की छाती को लोहे से काटने-चीरने पर भी उस पर निशान नही पड़ते, उस का प्रवाह बन्द नहीं होता। ऐसी थी रसकली।

मजरी पुलिन से चार वर्ष छोटी, पुलिन की बाल्य-सचहरी। दोनों जने की छनती भी है खूब। पुलिन समय-असमय मजरी के घर जाता, मजरी आदर सहित अभ्यर्थना करती। उस का मुखड़ा दमक उठता, रसोच्छला और भी चंचला हो उठती।

---

१. वैष्णवी स्त्रियाँ और वैष्णव पुरुष नाक के दायें-बायें, चन्दन से जो निशान बनाते हैं।—अनुवादक।

पुलिन कहता—क्यों री, रसकली, क्या कर रही हो ?

दोनों ही जने नाक पर रसकली रचा रहे हैं।

मजरी मुसकरा कर कहती—

सयत्न, तुम्हें इस अग पर, आँक रही हूँ।

पुलिन इस बात का उत्तर नही ढूँढ पाता।

मंजरी की माँ मुसीबत के समय कहा करती—देख तो मंजरी, दो रुपये किसी से मिल सकते हैं, नहीं तो तेरे खड ुए बन्धक रखने होंगे।

मजरी कहती—मैं अपने खड ुए बन्धक पर नहीं दूँगी, तुम रुपये ला दो कहीं से।

पुलिन अस्त-व्यस्त सा हो कर कहता—यह क्या, रसकली की माँ, उस के खड़ुए बन्धक दोगी ? मैं रुपये ला दे रहा हूँ।

अपने चाचा के सन्दूक से या वहाँ नही पाने पर चावल बेच कर पुलिन रुपये ला देता।

फिर कभी-कभी मजरी पुलिन का हाथ जोर से पकड कर कहती—नही, नही, तुम नही दे सकते, वह सब माँ की चालाकी है।

माँ-बेटी में झगडा होता, पुलिन जैसे परेशान सा हो उठता। लेकिन मजरी कहती—खबरदार ! कुट्टी कर लूँगी।

दस साल की ही उम्र मे मजरी का एक बार विवाह हो गया था लेकिन दूल्हा मजरी को पसन्द नही आया। मजरी ने उसे अस्वीकार कर दिया था। वह बेचारा कई बार मजरी के पास दौड़-दौड़ कर आया। लेकिन निराश हो कर उसे दूसरी जगह शादी करनी पडी। मजरी को उस ने बख्श दिया।

कई कारणो से रामदास सौरभी की बात टालते रहे।

रामदास ने सौरभी को लौटाया तो सौरभी ने पुलिन को वापस करते हुए कहा—बेटा, मेरी लडकी जवान उम्र की है। तुम अब मत आया करो। वैसे ही दस आदमी दस तरह की बातें करते हैं। मन में सोचा था कि तुम दोनों बचपन के साथी हो, दोनो का गठबन्धन देख कर आँखें जुड़ा लूँगी, लेकिन तुम्हारे चाचा तो विवाह के लिए राजी नही होते। मुझे तो अपनी बेटी ब्याहनी होगी।

बात पुलिन को बहुत गहरी लगी। उस ने दो दिन भोजन नही किया, सोया नहीं, खेतों-मैदानो घूमता फिरा।

रामदास अन्त मे राजी हो गया—ठीक है, मंजरी के साथ ही पुलिन का विवाह हो।

समय ठीक हुआ होनी का। रामदास के श्रीवृन्दावन से लौटने पर यह विवाह होगा, यही तय हुआ।

लेकिन ऊपर वाले की मशा थी कुछ दूसरी।

वृन्दावन मे हठात् एक दिन रामदास की भेंट खोयी हुई श्रीमती से हो गयी। उस वक्त श्रीमती हैज़े के कारण छटपटा रही थी। पास में बारह-तेरह साल की लडकी गोपिनी बैठ कर पुक्का फाड़ कर रोये जा रही थी।

स्त्री की दर्दभरी चीखों और बच्ची की रुलाई से दयावश रामदास आगे बढ़ कर रोगिणी के पास बैठा, एकाध क्षण उस की ओर निहार कर सस्नेह पुकारा—श्रीमती!

हैज़े के दर्द से तड़पती श्रीमती रामदास के मुँह की ओर ताक कर, फफक-फफक रोने लगी। रामदास ने अपने उत्तरीय के छोर से उस की आँखोकी कोर पोछ दी। श्रीमती ने रामदास के दोनों पैरो को जोर से पकड़ कर कहा—जाते समय मुझे अपने पैरों की धूलि दो। इस लड़की को ग्रहण करो। बड़ी अच्छी लड़की है, माँ की तरह नही। हो सके तो पुलिन के साथ विवाह कर देना। डर नही है, अजात लड़की नही है यह। वही, उस बाउल प्रेमदास की याद आती है तुम्हे? वह भी वैष्णव है, उसी की है लड़की।

रामदास ने कातरार्द्र स्वर में कहा—श्रीमती, राधारानी, मैं तो तुम्हारे ही लिए आज भी सूना घर बसाये बैठा हूँ।

श्रीमती ने इस बात का कोई भी उत्तर नही दिया, केवल अपनी पुत्री गोपिनी से कहा—बेटी, ये ही तेरे बाप हैं, इस के साथ जा, मुझ से भी अच्छी तरह से रखेंगे तुम को। और एक बात गोपिनी, याद रख, कभी भी पति को मत छोड़ना। वैष्णव हूँ, नियम-धर्म भले ही हों उस में, पर उस में सुख नहीं है।

श्रीमती को वृन्दावन में प्रवाहित कर के, गोपिनी को साथ ले, रामदास घर वापस आया।

सौरभी को बुला कर, पहले पचास, फिर एक सौ, अन्त में दो सौ रुपये उस के हाथ पर रख कर, रामदास ने कहा—मुझे बरी करो मेरे वादे से।

खूँट में एक मुट्ठी भर रुपये बाँध कर सौरभी हँसती हुई घर वापस आयी।

सौरभी ने मंजरी के लिए वर ठीक किया परन्तु मंजरी ने कहा—नहीं।

अन्त में क्रोधित हो कर माँ रामदास के रुपये ले कर वृन्दावन चली गयी।

मंजरी दो दिन रोती रही, फिर अपने को बटोरा उस ने, फिर हँसी वह। रसकली लगाती रही, लेकिन विवाह नहीं किया उस ने।

इधर पुलिन के साथ गोपिनी का विवाह हो गया। पुलिन पर से जैसे मंजरी का नशा उतर गया। वह रात-दिन घर के भीतर ही रहता—यह देख कर रामदास को सुख की हँसी आयी। मंजरी दो-चार दिन पुलिन की प्रतीक्षा करती रही, अन्त में एक दिन जूड़ा बाँध कर, नाक पर रसकली बना कर, पान चबाते-चबाते रामदास के घर आ पहुँची। रामदास तब घर में नहीं था, बाहर बरामदे में खड़ी हो कर, बन्द दरवाजे की ओर ताक कर ही मुसकरा कर मंजरी ने आवाज दी—क्यों रसकली, अरे, दुल्हन तो दिखाओ!

पुलिन घर में गोपिनी के साथ बात-चीत कर रहा था, मंजरी की आवाज सुन कर वह दूसरे दरवाजे से निकल भागा। गोपिनी घर में ही मुँह नीचे किये हुए खड़ी रही। मंजरी घर में जा कर गोपिनी का घूँघट उठाते हुए होंठों को बिचका कर बोली—तुम दुल्हन?

गोपिनी ने उस की ओर निहारा।

मंजरी फिर बोली—तो, हाँ, दुल्हन, तुम्हें रसकली ने पसन्द किया है?

गोपिनी इस बार जैसे चिकोटी काटती हुई बोली—नहीं।

मंजरी बोली—वाह, मैना तो बोल रही है खूब। तो हाँ, दुल्हन, क्यों नहीं पसन्द हुई, कुछ जान सकी हो ?

गोपिनी ने फिर उसी चिकोटी काटने के हो स्वर में कहा—मैं रसकली लगाना जो नहीं जानती, इसी से।

मंजरी सब कुछ समझ गयी। इस बार हँस कर आश्चर्य की मुद्रा में गाल पर हाथ रख कर बोली—हाय री अम्मा, इसी से क्या ? तो मुझ से रसकली लगाना सीखोगी दुल्हन ?

—सिखाओगी ? देखो, ठीक तुम्हारी ही तरह होना चाहिए।

—हाँ, सिखाऊँगी। लेकिन धीरज रख सकोगी तो ?

—हाँ, रख सकूँगी। तुम्हारे पास समय कहाँ से होगा ? मैं कहती हूँ, रसिकों से तुम्हें छुट्टी मिलेगी तब तो ?

—मेरे रसिकों की बात छोड़ो, वे तो असमय भी आ कर समय दे सकते हैं पर तुम्हारा रसिक तो एक क्षण भी तुम्हें नहीं छोड़ पाता, देख रही हूँ।—मंजरी ने कहा।

—वह तो दो दिन की बात है, अभी तो नरम-नरम सोआ-पालक का साग है री, बाद में बूढ़ा बैल ठीक जगह ही जा कर चरेगा, डर की बात नहीं है।

मंजरी ने थोड़ा झलक कर तीखेपन से कहा—तो भाई, बूढ़े बैल को बांध रखो, बस, जिस के पास पगहा नहीं हो तो उसे बैल पालने का शौक क्यों ?

गोपिनी भी झुंझला कर इस बार बोली—घोड़ा रहने पर क्या चाबुक की कमी होती है, री, नहीं। जब बैल पाल रखा है, तब पगहा क्या नहीं जुटेगा ? मैं कहती हूँ कि साड़ी तो है, आँचल से बाँधूंगी।

—अगर तोड़ कर भाग जाये तो ? मंजरी ने हँस कर कहा।

—इस्स, उस के बूते की बात नहीं ! गोपिनी बोली।

मंजरी ने कहा—देखो।

गोपिनी ने उसी दाम्भिक स्वर में कहा—तब नहीं होगा तो फटे आँचल को गले में डाल कर झूल पड़ूँगी, लेकिन अभी तो जिन्दे ही उसे गड्ढे में ढकेल नहीं सकती।

इस के बाद मजरी ने बातें नही कीं। अचकचा कर ही जैसे घर वापस आयी। तब उस के मुखडे पर हँसी नही थी। डबडबाये पनैले बादर सा हो गया था चेहरा।

दूसरे दिन से ही मजरी के घर पर पुलिन का आदर जैसे बढ़ गया। आदमी भेज कर उस ने पुलिन को बुलवाया। उस की लज्जा उड़ चुकी थी। अब पुलिन के गाँजे के अड्डे पर मजरी धरना नही देती। पुलिन के साथी बलाई को देख कर उदासीन भी नही होती। अब तो जैसे बात-बात पर ढुलकी सी पडती है। पान देती है। पुलिन ने फिर घर छोड़ दिया, पहले की तुलना मे मजरी के घर पर उस ने और ज्यादा बैठक-बाज़ी शुरू कर दी।

मजरी बीच-बीच मे यह भी कहती—

रसकसी, यह तो अच्छा काम नही हो रहा है।

पुलिन मूर्खों सा कहता—क्या ?

मजरी मुसकरा कर कहती—अरे यही मेरे घर मे ऐसे चौबीसों घण्टे पडे रहना।

पुलिन उसी तरह से पूछता—क्यो ?

मजरी सस्वर गाने लगती—

'पाँच चवन्नी की है तेरी वैष्णवी
अरे हो गये नाराज, हो गये नाराज !'

पुलिन कहता—धत् !

गोपिनी इस बार सचमुच ही नाराज हुई। लेकिन इस नाराजी को तोड़ता कौन ? जिस के ऊपर मान—उसी ने उस मान के ऊपर राख डाल दी। वह खाने की बेर आता, दस आदमियों के हँसी-ठट्ठे का विषय बन कर लौट जाता, मंजरी के घर पर बैठक जमाता, घर का रुपया-पैसा तक मजरी के घर मे दे देता। मजरी को सोने की नथिया बन रही है शायद—यह जान कर गोपिनी जल-भुन गयी। पुलिन जो दो-चार बातें भी करता, वे मंजरी के उल्लेख से भरी होती। उस दिन बात ही बात में पुलिन ने मासूमियत से कहा—

मजरी तुम्हें क्या कहती है, जानती हो ? गोपिनी नहीं, साँपिनी।

सो तो सचमुच ही हो तुम। हर बात में फुफकारती रहती हो।

गोपिनी एक जलती-तीखी नजर से उस की ओर ताक कर बाहर दौड़ आयी। रात गये दो घड़ी तक बाहर वह रोती रही। रोते-रोते याद आया कि उस ने कहा था—यदि आँचल फट जाये तो फटे आँचल की डोरी बना कर फाँसी लगा लूँगी उद्‌भ्रान्त व्यथाहता नारी सचमुच ही आँचल फाड़ कर डोरी बनाने लगी। घर मे पुलिन तब घोडा बेच कर सो रहा था, शायद रमकली का स्वप्न देख रहा था।

बगल के कमरे मे दरवाजा खोल कर बूढा महन्त बाहर आया। श्वेतवस्त्रा गोपिनी को देख कर अचम्भे मे आ गया वह, कहा उस ने—कौन? कौन? यह क्या बेटी, बाहर क्यो, मेरी बेटी?

गोपिनी फफक कर रो पड़ी। वृद्ध के स्नेह-स्पर्श से उस के हाथों बनायी हुई आँचल की रस्सी खुल कर गिर पड़ी।

महन्त ने गोपिनी को अपनी छाती से लगा रोते हुए कहा—बहू माँ, इस बूढे बेटे के मुँह की ओर देख कर धीरज धरो। मैं आशीर्वाद दे रहा हूँ—तुम्हारा भला होगा, भला होगा।

पुलिन के इस दुर्व्यवहार से शान्त, स्नेह-दुर्बल वृद्ध को मर्मान्तक पीड़ा हुई। कठोर होने की चेष्टा की बूढे ने। रुपये-पैसे देने से मुट्ठी सिकोड ली, बात-चीत बन्द कर दी, लेकिन जो पुलिन था, वही पुलिन रहा। अन्धे के लिये जैसे रात, वैसे ही दिन।

केवल मजरी के घर में बैठा, बलाई के साथ, अपने चाचा की उम्र के दिन गिनने लगा।

लेकिन रामदास जीना चाह रहा था। भीतर से मरा हुआ था वह, किन्तु जीना चाह रहा था गोपिनी के लिए। सदैव उसे यह लगता कि उस के मर जाने पर गोपिनी का क्या होगा?

लेकिन आदमी अमर नही है। मरने का परवाना वह पैदाइश के साथ लिये आता है। एक दिन रामदास की भी पेशी हुई। महन्त की उम्र हो चली थी, दमे का मरीज था वह। यकायक एक दिन दमा मृत्यु के रूप में उस की छाती पर आ सवार हुई।

गोपिनी आँसू ढरकाती हुई सेवा करने लगी। पड़ोसी भीड़ जमाये हुए

-बैठे हैं। कोई कहता—महन्त, हरि बोलो, बोलो जय राधारानी!

राधारानी के जय-गान में चिर-मुखर चारण-कण्ठ इस समय जै राधारानी का ध्यान नहीं कर पाया। मायाच्छन्न राजा भरत की तरह सिर्फ कहा—माँ गोपिनी, कुछ नहीं कर पाया माँ!

गोपिनी अन्त में पछाड़ खा कर गिर पड़ी। हाय, उस का नीड़ जो उजड़ा जाता है! भ्रष्ट नीड़ विहगिनी रोने के अतिरिक्त और क्या कर सकती है? टोले-मुहल्ले की स्त्रियाँ दूर खड़ी थी, लेकिन कोई गोपिनी को पकड़ने का साहस नहीं कर सका। बूढ़ा रोगी, कब आखिरी साँस टूट जायेगी, मरने के पहले, कम-से-कम सूचना भी नहीं देगा कि हम लोग भजन कर लें। मृतक को छू कर भला कौन अशुचि होगा?

पकड़ा अन्त में एक जने ने। वह थी मंजरी। आते ही शोक विह्वला गोपिनी को मजरी ने पकड़ लिया। बोली—डर क्या?

मरणासन्न महन्त एक लम्बी साँस फेंक, उखड़े-उखड़े स्वर में बोला—यहाँ गाँव के पाँच आदमी हैं, मैं अपनी अन्तिम इच्छा प्रकट करता जाऊँ—मेरा समस्त स्थावर सम्पत्ति की मालकिन हुई गोपिनी, और सभी से मेरी यह भीख है कि लड़के को उस वेश्या के हाथों से बचा दो।

इस बात पर सभी की नजर मजरी की ओर जा ठहरी। सभी ही सोच रहे थे कि वह कैसे बैठी है अब तक! लेकिन मजरी बड़ी निश्चिन्तता से गोपिनी की ढीली-ढाली काया को समेट-बटोर कर बैठी थी, बैठी ही रही वह, तनिक भी उद्विग्नता नहीं आयी उस में।

महन्त ने जब यह बात कही थी, पुलिन भी तब वहीं था, उस ने भी यह बात सुनी।

इस बात ने आज पहली बार चोट की उस पर, मान-अपमान का स्वाद शायद पहली मर्तबा समझा उस ने।

लोग तब महन्त की आखिरी इच्छा की आलोचना-समालोचना में व्यस्त थे। पुलिन दरवाजे से बाहर निकल पड़ा, किसी की नजर नहीं पड़ी, लेकिन मजरी ने पुकारा—जा कहाँ रहे हो?

पुलिन ने कहा—अब इस घर में नहीं।

मजरी बोली—छि, यही है क्या तुम्हारे नाराज होने का वक्त?

आओ, चाचा के मुंह में जल डालो, कान के पास भगवान का नाम सुनाओ।

टोले-मुहल्ले के सभी लोगों को, इस बेहया स्त्री की सीमाहीन निर्लज्जता से जैसे काठ सा मार गया, सभी उस का मुंह निहारने लगे। स्त्रियों ने गाल पर हाथ दिया—हाय राम! पुलिन ने भी मंजरी की ओर देखा, इस के बाद धीरे-धीरे चाचा के सिरहाने की ओर बैठ कर, मुंह में गगा-जल दिया उस ने, फिर जोर से कहा—बोलो चाचा, जय राधा-रानी!

बूढा बोला—जय राधारानी! दया करो माँ, अनाथिनी, दुखिनी पर कृपा करो माता!

अढाई पहर दिन ढले रामदास मरा, अन्त्येष्टि क्रिया समाप्त होते-होते एक पहर रात बीत गयी।

तब मजरी ने गोपिनी से कहा—अच्छा, तो मैं अब चलूं?

गोपिनी बोली—अच्छा।

मंजरी ने चारों ओर देख कर सरल भाव से ही कहा—मालिक कहां? अकेली रहने पर डरोगी तो नही?

गोपिनी को लगा कि मजरी उस से ठट्ठा कर रही है। उस ने उत्तर दिया—आना-जाना ही जब अकेले है तो अकेली रहने पर डर लगने से भला कैसे चलेगा? और प्राय अकेली ही तो रहती हूँ।

मंजरी ने बिना बात बढ़ाये कहा—लेकिन भाई, मैं तो अकेली नही रह सकती थी ऐसी हालत मे।

गोपिनी बोली—मैं अगर अकेली नही रह पाती तो गले में फाँसी की डोर लगा लेती, लेकिन—

मंजरी ने इस बार जरा झुंझला कर उत्तर दिया—वाह, कहने से ही हुआ क्या? मरूँगी क्यों? अच्छा चलूं भाई, लेकिन रसकली गया कहाँ?

गोपिनी क्रोध से पागल हो बोली—रसकली तो नाक पर ही है, घर पर जा आइने में देखो, तुम मुंह-झौंसी के चेहरे पर ही झलक रहा है।

मंजरी इस औचक आघात को नहीं सहन कर सकी। बहुत कष्ट के साथ उस ने अपने को सँभाला लेकिन आखिरी वक्त जवाब देते समय

कह ही दिया—रसकली तो अपनी नाक पर ही रहती है दुल्हन, इसे छीना नहीं जा सकता ! हाँ, तुम अगर चाहती हो तो मैं देने की कोशिश करूँ।

गोपिनी फुँफकार कर बोली—क्या कहा तुम ने ? तुम से मैं भीख नहीं चाहती, नहीं चाहती। जाओ, जाओ तुम।

एक ही साँस में ये बातें कह कर, भीतर घर में जा मजरी के सामने ही उस ने धडाम से दरवाजा बन्द कर लिया।

मजरी धीरे-धीरे घर लौटी। उस की छाती में जैसे आग जल रही थी। साँपिन का इतना विष ! अपने ही विष से अभागी अपने आप मरे !

अपने घर में प्रवेश करते ही मजरी ने देखा कि पुलिन उस के दरवाजे पर बैठा हुआ है।

मजरी की सारी देह को छूती हुई एक लहर तैर गयी, हँसी से उस का चेहरा भर उठा।

पुलिन ने खडा होते हुए कहा—रसकली !

मजरी ने हँस कर कहा—बैठो, मैं कहती हूँ।

पुलिन बैठ गया।

घर का ताला खोलते-खोलते मंजरी बोली—रसकली, तुम भाई बड़े भाग्यवान् पुरुष हो, स्त्री के भाग्य से धन पा रहे हो।

पुलिन ने क्रोध से ही कहा—वह धन मेरे लिए वैसे ही है जैसे भँसुर के लिए छोटे भाई की पत्नी को छूना भी पाप।

मजरी ने खिलखिला कर हँसते हुए कहा—और दुल्हन ? क्यों, चुप क्यों हो गये जी ? जवाब नहीं दे सके न ? अच्छा, तो मैं ही बता दूँ वह है तुम्हारे गले की माला, तुम्हारे होंठ की हँसी।

पुलिन बोला—नहीं, रसकली, नहीं बनी तेरी बात, वह है मेरे गले की फाँसी। हँसी नहीं कर रहा हूँ रसकली, एक बात तुम्हें बताने आया हूँ कि मैं कल से अपने घर रहूँगा। अब उस घर में नहीं रहूँगा।

अपने घर से तात्पर्य है पुलिन का पैतृक घर। वास्तविक आँखों से देखने पर तो घर जैसे मूर्त भयानकता का रूप हो, लेकिन कल्पना में वह सुन्दर, चबूतरेनुमे जमीन पर बनैले फूलों से घिरा हुआ, चहारदीवारी की

सीमा तोड़ कर निःसीम आकाश में अपने को मिलाता हुआ सा, घर के भीतर भी चाँदनी आँखमिचौनी खेला करती।

मंजरी ने कहा—ठीक, यह तो अच्छी बात है, कैसे खाओगे पर ?

पुलिन ने चट से जवाब दिया—वैष्णव का लड़का हूँ, भीख माँग कर खाऊँगा।

मंजरी बोली—और भी अच्छी बात है, लेकिन भीख मे तो मिलता है चावल, कौन पकायेगा भात ? बहू को साथ लिये जाओ।

पुलिन ने जोरदार विरोध मे गरदन हिलाकर कहा—नही।

मजरी बोली—क्यों ? और तुम्हारे नही लिवा जाने पर भी यदि वह तुम्हारा साथ न छोडे तो ?

पुलिन ने कहा—साथ नही छोडेगी ? मार के आगे भूत भागता है, यह जानती हो ? कहावत भी है—मान गये तो दूध-शक्कर, नही तो ले फिर लक्कड़ !

मजरी बोली—बिलकुल ठीक। रसकली मेरा कहता ठीक ही बात है। लेकिन यह तो ठीक वैसी बात हुई जैसे उस तरफ धान की बालियाँ पकी और इत्तर लंका का रावण चट् से मर गया। सो जो हुआ सो हुआ, आज तो रात भर के लिए घर जाओ।

पुलिन ने कहा—नही, और नही।

मजरी ने परिहास-छल से ही कहा—तो आज की रात पाल-पोखरे के बरगद पर ही काटोगे क्या ?

पुलिन बोला—नही, तुम्हारे दरवाजे पर ही पडा रहूँगा।

मंजरी हँसी। दो और दो मिल कर चार हुए—यही बात जो नही समझता, अगर वह चार का महत्त्व नही समझे तो उस के ऊपर क्रोध करने से क्या लाभ ?

फिर भी वह बोली—लोग क्या कहेगे ?

पुलिन बाहरी दरवाजे की ओर फिरा।

मजरी ने कहा—चले कहाँ ?

पुलिन ने उत्तर दिया—देखूँ कही भी।

मजरी ने आ कर उस का हाथ पकड़ते हुए कहा—नहीं, जाओगे नहीं,

आओ, सोओगे आओ।

पुलिन ने चिन्तित स्वर मे कहा—नही, नही, लोग क्या कहेंगे?

मजरी बोली—जो कहना था—उसे तो लोग कह ही चुके, अब और क्या कहेंगे? सुना नही तुम ने, आज ही तुम्हारे चाचा ने कहा—'उस···।'

पुलिन ने उस का मुँह दबा कर कहा—तुम्हारे पैरो पडता हूँ रसकली, छि, वे बातें तुम मत कहो।

मजरी ने हँस कर धीमे स्वरो में गाना शुरू किया—

'लोग कहते मैं कृष्ण-कलकिनी हूँ,
सखि, मैं तो उसी गर्व से गर्विता हूँ।'

पुलिन ने उस का हाथ जोर से पकड लिया। उस के स्पर्श मे कितना उत्ताप! मजरी ने मीठे झटके से अपना हाथ छुडा कर शान्त मधुर कठ से कहा—छोडो, बिछौना करूँ।

साफ़-सुथरा लकदक कमरा, लाल मिट्टी से लिपा-पुता, रंग-बिरंगी अल्पना से चित्रित छत, दीवालों पर कुछ पुराने ढर्रे के पट-चित्र—गौराग महाप्रभु, जगन्नाथ, राधा-कृष्ण, सभी के पाँवो मे चन्दन पुता हुआ। फर्श पर एक तख्तपोश, एक तरफ ऊँची वेदी पर झकझकाते बर्तन सजे हुए।

तख्तपोश के ऊपर मोड़-तहा कर रखे हुए बिछौने को बिछा कर, एक छोटी चौकी पर दूसरे बिछौनो के ढेर मे से एक सुजनी निकाल कर पुराने बिछौने के ऊपर उस ने बिछा दिया। सुजनी मजरी के अपने हाथो काढ़ी गयी थी, अद्भुत कारीगरी का नमूना थी वह सुजनी। बिछौने को इधर-उधर घुमा-फिरा कर फिर उसे बुलाया—आओ।

पुलिन घर मे आ कर तख्तपोश पर बैठ गया। उस ने देखा कि मजरी अपनी उसी तिरछी-बाँकी मुद्रा मे खडी है—वह हँसी, वही सब कुछ, केवल दृष्टि मे कुछ नवीनता है। वह तब मुग्ध, आविष्ट, एकाग्र थी।

पुलिन ने सकुचित भाव से गद्‌गद वाणी में कहा—रसकली!

मजरी जैसे सोते से जाग कर बोली—क्या?

पुलिन ने कहा—तुम···तुम···मेरी···मेरी···मेरी···

बात पूरी नही कर सका पुलिन, प्रत्येक बार ही अटक जाता और पुलिन लज्जा मे लाल हो उठता।

मंजरी खिलखिला कर हँसते हुए बोली—तुम्हारी···तुम्हारी··· क्या जी ?

फिर सहज कौतुक-भाव से गरदन तिरछी किये हुए, थोड़ी देर तक पुलिन के लज्जित मुख के ऊपर उजली दृष्टि डाल कर, मंजरी ने अपना मुँह पुलिन के कान के पास ले जाकर कहा—मैं तो तुम्हारी ही हूँ।

यह कह कर वह चट् से घर के बाहर हो गयी, छोटे-से त्वरित झरने की गति की तरह। बाहर जाते ही दरवाजा खींच कर उस ने साँकल चढ़ा दी। एक झोंका दक्षिण की बयार आ कर जैसे पुलिन को तृप्त करते हुए, उसे रस से सराबोर करते हुए चली गयी।

साँकल चढ़ा कर आँचल से मुँह पोंछते-पोंछते वह ढेकी-घर में आ कर अपना आँचल बिछा कर सो गयी।

रात को पुलिन आया नहीं, एक पहर रात बीत गयी, तब भी नहीं दिखा। गोपिनी उसे अगोरती रही थी, सहसा उस प्रतीक्षा के भाव को झाड़-पोंछ कर वह उठी, नहा-धो कर उस ने रसोई चढ़ा दी।

खट्, शब्द हुआ, शायद वह आया। मान भरी विकल दृष्टि को उस ने कड़ाही में आबद्ध किया, हाथ की कलछुल आवश्यकता से अधिक घूमने लगी—खन्-खन्-खन्।

लगा कि पुकार रही है वह—अरी ओ सौपिन !

पालतू बिल्ली दरवाज़े पर कूद पड़ी—म्याऊँ-म्याऊँ-म्याऊँ !

दृष्टि नहीं मानी, लौटी, लेकिन कहाँ ? सूना आँगन, उढकाया हुआ दरवाजा—इन से कहीं आदमी की गन्ध तो नहीं आयी।

हाथ की कलछुल को ज़ोर से बिल्ली की पीठ पर मार कर गोपिनी ने गाली दी—निकल, निकल, निकल जा आफत कहीं की !

कितनी देर हुई—गोपिनी को लगा कि एक युग बीत गया।

हठात् बाहरी दरवाजा खोल, बलाई चौखट पर आ कर बैठ गया। हाथ का हुक्का पीते-पीते उस ने कहा—सुना है मितनी, कल रात को मीत तो मंजरी के घर—

बलाई पुलिन का मित्र है, इसी से गोपिनी को कहता था—मितनी,

गोपिनी उसे कहती थी—मीत।

गोपिनी ने कहा—सुना नही, पर जानती हूँ।

बलाई बोला—अब अपना घर साफ़ हो रहा है, वहीं रहेगा, इस घर मे नही रहेगा।

एक लाज छिपाने के लिए और पाँच लाज सिर पर ढोनी पड़ती है। गोपिनी ने कहा—मैं रहने नहीं दूँगी, यह मैं ने कल कह दिया है, घर में आने पर झाड़ू से बात करूँगी।

बलाई ने जानकार की भाँति गरदन हिला कर कहा—ओह, तभी इतना सब! और सुना कि मजरी को वारिस बना रहा है वह!

छाती पर पत्थर दे कर भी आदमी उफ-आह कर सकता है पर इस बात ने गोपिनी के ऐसे मार्मिक स्थान पर चोट किया कि वह कुछ बोल नही सकी।

बलाई ने कहा—कल रात मे जमीदार गाँव मे आये हुए हैं, तुम नालिश करो।

गोपिनी ने तीव्र प्रतिवाद के स्वर मे कहा—नहीं!

इस के बाद दोनो ही नीरव, गोपिनी के हाथ की कलछुल नही हिलती, आँखें कड़ाही पर, लेकिन दृष्टि जैसे कही अन्यत्र, अपलक निर्निमेष।

बलाई मन ही मन कुछ सोच रहा था, आखिरकार दलाली के स्वर में जरा रसीला पुट दे कर बोला—उस बदमाश बैल की तुलना में सीधा-सादा ग्वाला ही ठीक है।

इस के बाद फिर हुक्के पर दम लगाया फड़र-फड़र। भर गाल धुआँ छोड़ कर कहा—हम लोगों मे तो माला टूटने पर उसे फिर से गूँथने का रिवाज है। भात रहने पर भला क्या कौओं का अभाव होता है, बोलो मितनी! मैं हूँ हो, सब ठीक कर दूँगा तुम्हारा।

अन्त मे सम्मति की आशा मे गोपिनी के मुखड़े की ओर ताका।

गोपिनी ने किसी बात का उत्तर न दे कर घर के भीतर जा, दरवाजा बन्द कर लिया। रसोई जलने लगी।

पुलिन हाथ मे कुदाल ले कर घर साफ़ कर रहा था। पसीने के मारे तर-ब-तर, माथ की नसें टन्-टन् करने लगी थीं, हाथों मे फफोले, पर काम

तो खत्म करना ही है। औरत जात की गुलामी ! छिः ! इस से बड़े शर्म की भला क्या बात होगी ?

बलाई ने आ कर कहा—अच्छे तो हो मीत ?

पुलिन ने कुदाल नीचे रख कर कहा—चिलम में कुछ है ? हुक्का नहीं, अशौच है मेरा।

बलाई ने हुक्के से चिलम निकाल कर पुलिन को थम्हाया। धतूरे के फूल की आकार वाली चिलम की पेंदी पर हाथ बाँध कर पुलिन ने कश खींचा—हुश-फूं-हुश-हुश।

बलाई ने कहा—तो एक काम क्यों नहीं किया मीत ? जमीदार आये है, उन के पास एक बार बात करने से क्या नहीं होता ? तुम्हारा तो है अपने बाप का सगा भाई यानी चाचा और उस का तो बस धर्म-पिता। वारिस तुम हुए। वह लड़की इस जायदाद की क्या होती है ? चल एक बार तू, जरा देख तो सही, तेरी सम्पत्ति तेरी ही हो जायेगी।

अद्भुत है पुलिन। विचित्र है उस का लौकिक बोध। उस ने कहा—उस का क्या होगा ?

बलाई ने कहा—तेरी बहू है, तू देगा उसे भोजन-वस्त्र।

पुलिन ने कहा—नहीं, नहीं, मैं तो रसकली को—

बलाई ने उत्साह से कहा—रसकली को तू वारिस बनायेगा, वह चूल्हे-भाड़ में जाये—जो मन मे आये वह करे। तेरा क्या ?

लेकिन यह तो अमानवीय हुआ, हजार भी हो क्यों न, पर है तो वह पत्नी ! पुलिन का मन ऐंठने-उमड़ने लगा। पहले उसके मन में था कि अपने इस प्राप्य सम्पत्ति के एवज में वह गोपिनी से अपने को मुक्त कर लेगा।

पुलिन ने कहा—नहीं मीत, यह नहीं हो सकता।

—जैसे देवता, वैसे देवी ! बलाई खीज में उठ कर जमीदार की कचहरी की ओर चल पड़ा।

पुलिन टूटे दरवाजे पर बैठ कर सोचने लगा।

जमीदार के पछाँह चपरासी ने आ कर टूटे काँसे के बरतन की सी आवाज में कहा—अरे ओ पुलिया, आ, आ, बाबू बुला रहे हैं।

पुलिन ने चौंकते हुए कहा—क्यों, क्यों, कैसे दरवान जी ?

चपरासी ने कहा—सो हामि जाने ना।

ज़मीदार की कचहरी में आ कर पुलिन ने प्रणाम किया।

बाबू फर्शी में तम्बाकू पी रहे थे। गुमाश्ता क़लम घसीट रहा था। कई मातबर लोग इस तरफ़ बैठे हुए थे, उस तरफ़ छाती तक घूँघट काढ़े बैठी थी सकुचिता गोपिनी।

बाबू ने कचहरी के लोगों और पुलिन को सुना कर कहा—वह हरामज़ादी कहाँ है ?

बैठे हुए लठैत राखाल ने कहा—वह नहा रही है, आती ही है।

पुलिन को बाबू ने कहा—पुलिन, तुम्हें अपने चाचा की सम्पत्ति छोड़नी होगी।

पुलिन अस्त-व्यस्त हो बोला—सम्पत्ति तो उसी की ही है, मेरी नहीं।

हाथ जोड़ कर उस ने गोपिनी की ओर उँगली से इशारा किया।

बाबू बोले—वही हुआ तो, वही हुआ। पति और पत्नी। मुँह रहते नाक से भला कौन खाता है रे ? तुम्हारे रहते वह सम्पत्ति का कौन होती है ? उसे कैसे मिली यह मिल्कियत ? बोलो जी, चुप रहने से नहीं चलेगा।

अन्त में गोपिनी मृदु कण्ठ से बोली—जी, वे मुझे दे कर गये हैं।

—तुम्हें ही तब ख़ारिज करना होगा, पाँच सौ रुपये लगेंगे।—बाबू बोले।

पुलिन ने कहा—जी, वह स्त्री है—

बाबू फटकार कर बोले—तू चुप तो रह बेटा ! बोलो जी, हाँ, तुम बोलो, फिर चुप लगा गयी जो, पाँच सौ रुपये चाहिए मुझे।

भूले बटोही को जो रास्ता दिखा दिया जाये, वह उसी पर चलता है। किंकर्तव्यविमूढ़ा गोपिनी ने पुलिन की ही बात को पकड़ कर कहा—जी, मैं तो स्त्री—

बाबू बोले—अरे, सम्पत्ति तो स्त्री नहीं। अच्छा, नहीं दे सकती तो यह सम्पत्ति तुम पुलिन के नाम कर दो।

पुलिन ने घबरा कर कहा—नहीं !

गोपिनी भी बोली—नहीं। बाबू बिफर कर बोले—अच्छा, तब सम्पत्ति सदर में ज़ब्त होगी। और हाँ, पुलिन, तुम बेटा उस मजरी को ले

कर गाँव में इतना घूरते-फिरते हो ? वह सब नहीं चलेगा। परिवार के ही साथ रहना होगा।

स्थान-काल के ज्ञान से विहीन गोपिनी ने पुलिन को चुप देख कर हाथ हिला कर कहा—नहीं।

गला फाड़ कर विरोध मे जमीदार बाबू चीखे—चुप रहो हराम-जादी ! उस पुलिन के ही साथ तुझे रहना होगा।

डर के मारे गोपिनी रो उठी।

ठीक उसी समय मंजरी ने जमीन छू कर प्रणाम करते हुए कहा—बाबू, मुझे तलब किया है ?

बिना मुँह फिराये बाबू और बात नही कर सके। सामने रसोच्छला युवती—चूडे के आकार में बँधे हुए केशों का जूडा, नाक पर रसकली अंकित, मुखड़े पर मीठी हँसी, गालो पर कपोलावर्त। मजरी को देख कर कुछ क्षणों तक तो बाबू की बोलती ही बन्द हो गयी।

मंजरी ने फिर कहा—हुजूर !

बाबू चौंक कर बोले—हाँ, आओ। और हाँ, सुनती हो जी, वह सब नही चलेगा, पुलिन के ही साथ घर-द्वार बसाना होगा।

आखिरी बात गोपिनी को लक्ष्य कर के कही गयी थी। इस बात के संकेत से मजरी की दृष्टि भयभीत गोपिनी पर पडी। जल्दी से उस के पास जा कर उस ने उसे अपनी ओर खीच लिया।

बात-चीत से भी आदमी पाता है भरोसा, दृष्टि से भी और स्पर्श से भी। गोपिनी को जकड कर स्नेह से मजरी बोली—रसकली ! उस की हँसी से मजरी का मुख चमक उठा, वह बोली—डर की क्या बात है रसकली ?

बाबू ने फिर कहा—समझी, यही है मेरा हुकम। जवाब दो, राजी हो या नही ? सुनता है रे पुलिन ?

पुलिन और गोपिनी दोनों ही चुप। उत्तर दिया मंजरी ने, वैसे ही हँस कर—हुजूर, पति-पत्नी का झगड़ा क्या डरा-धमका कर मिटाया जा सकता है ?

बाबू बोले—अलबत्ते मिटाया जा सकता है। नहीं मिटने पर कैसे चलेगा ?

मजरी बोली—यदि नहीं भी मिटता हुजूर तो कोई बात नहीं। हम लोग वैष्णव है जात के। टूट जाने पर हम लोग फिर से माला गूँथते हैं।

बाबू बोले—तो ठीक है, वह बलाई को वारिस बनाये।

गोपिनी तीव्र विरोध के स्वर में कहा—नहीं, नहीं।

उस तरफ बैठा हुआ बलाई भीतर-ही-भीतर मुसकरा उठा।

बाबू बोले—तब क्या मतलब है, सुनूँ? लेकिन मेरे राज में वह सब बदमाशी नहीं चलेगी।

पुलिन ने जैसे एक मरियल सा क्षीण विरोध किया, किसी ने उस तरफ़ ध्यान ही नहीं दिया। वह हिल-डुल कर बैठा, जैसे उस से बैठा नहीं जा रहा था अब। बिल में का साँप जैसे पकड़े जाने के पहले बाहर भी नहीं हो पाता लेकिन बिल के ही भीतर कुण्डली मार कर क्रोध से फुंकारता हुआ घूमता रहता है, वैसे ही पुलिन का मन घूम रहा था।

लेकिन मजरी ने खूब विनम्रता से जोरदार विरोध किया—जीभ काटती हुई वह बोली—छि: छि:, बाबू, यह बात आप को कहते नहीं सोभती।

बाबू जैसे इस बात के लिए तैयार नहीं थे, उसे डाँटते हुए बोले—अच्छा, अच्छा, तुम्हारा भी यहाँ रहना नहीं चल सकता है, दस आदमी दस तरह की बातें तुम्हारे बारे में करते हैं। तुम्हें गाँव छोड़ कर चले जाना होगा।

मंजरी ने विनयपूर्वक कहा—जी हाँ, कहाँ जाऊँगी? औरत जात मैं—

बाबू उसकी ओर ताक कर बोले—अच्छा, मेरे साथ चलो तुम, मेरे घर में रहना।

मजरी बोली—जी, मैं महरी का काम नहीं कर सकती।

बाबू बोले—अच्छा, तुम्हें काम नहीं करना होगा।

मजरी ने हँस कर कहा—बाप रे! तो बहूरानी मुझे भोजन क्यों देंगी?

बाबू इस बार सरस हो कर बोले—यह तुम्हें नहीं सोचना होगा। अपने बगीचे में तुम्हारे लिए एक कुटिया बनवा दूँगा। यहाँ जैसे हो, वैसे ही रहोगी तुम।—ऐसा कह मुँह से फेवकुर-सार घुमाते हुए बाबू हँसे, न जाने कैसी कुत्सित गन्ध उन की बात में लगी।

मंजरी ने कहा—मैं अपने इस जले मुँह को क्याक हूँ? सचमुच ही इस मुँह को फूँक देना होगा। आप राजा हैं, आप भी आखिर···नहीं हुजूर, मैं यह गाँव छोड़कर कहीं नहीं जाऊँगी। चाहे कोई कुछ भी कहे।

बाबू इस तरुणी की ढिठाई देख कर भौचक्के हो उठे थे, यकायक पागलों की तरह वे चीखें—क्या कहा हरामज़ादी? भूतसिंह! लगाओ जूते हरामज़ादी को!

वद्ध लौह-द्वार प्रमत्त हाथी भी नहीं खोल पाता ठेल कर। लेकिन अर्गला खुल जाने पर आघात के बिना ही वह खुल जाता है। पुलिन के हृदय-द्वार की अर्गला हाथ लगते ही खुल गयी! भीतर का पुरुष बाहर निकल पड़ा। एक विकट—भीषण दर्प से उस ने हुँकार ली—खबरदार!

राखाल लठैत की ढीली पकड़ से लाठी छीन, उसे पृथ्वी पर ठोक कर, पुलिन छाती फुला कर खड़ा हो गया।

पता नहीं बात कहाँ तक बढती, कौन जाने, लेकिन जितनी देर में लोग बात समझ पाते—तब तक मंजरी झपट कर पुलिन और गोपिनी को हाथ से खींच कर बाहर लिवा लायी।

भौचक्के-से बाबू जब होश में आये तो चीखे—भूतसिंह!

बलाई ने धीमे गले से कहा—हुजूर, उस मंजरी के साथ गोकुलबाटी थाने के दारोगा के परिवार से मेल-जोल है, जरा समझ-बूझ कर··· बलाई की बात को जैसे काट कर हाथ में लाठी ले कर भूतसिंह दनदनाता हुआ बोला—

हजौर! हुकुम?

बाबू बोले—कुछ नहीं. जाओ।

मंजरी दोनों जनों का हाथ पकड कर सीधे रामदास के घर आयी। रास्ते भर जैसे वह किसी दुश्चिन्ता में पड़ी रही। दुश्चिन्ता कहना ठीक नहीं होगा, वह एक आवेश था, एक नशा था।

घर के भीतर जाते ही मंजरी ने दरवाजा बन्द कर दिया, एक मोटी सी लाठी पुलिन के हाथ मे दे कर वह खिलखिला कर हँसती हुई बोली—ओ पहरेदार! बाहर बैठ।

पुलिन लाठी ले कर बाहर बैठा। घर के भीतर फ़र्श-भर बैठी नीरव

आँखो से दोनो नारियाँ आँसू बहा रही थीं। गोपिनी नत दृष्टि से और मंजरी जैसे नशे में उस के मुख की ओर ताकती हुई।

सहसा हँस कर उस ने कहा—रसकली !

गोपिनी मुँह उठा कर हँसी—बड़ी उदास हँसी, जैसे मलिन फूल !

मजरी बोली—कचहरी के लोगों के सामने तुम ने रसकली लगायी थी नाक पर, अब नहीं कहने से तो नहीं चलेगा।

गोपिन बोली—हाँ।

मजरी ने कहा—तो भाई, अनुष्ठान हो जाने दो, तुम मेरी नाक पर रसकली आँक दो और मैं तुम्हारी नाक पर। जो नियम है, उसे तो करना ही होगा। ऐसा कह कर सारे सामान ले कर तिलक घिसने लगी।

इस के बाद गोपिनी की गोद के पास बैठ कर मंजरी ने कहा—तुम ने भाई आगे कहा है, पहले तुम्हारी बारी है। चलो, मेरी नाक पर रसकली आँको।—ऐसा कह कर अपनी नाक की रसकली पोंछ दिया उस ने।

आश्चर्याहत गोपिनी ने काँपते हाथो से मंजरी की नाक पर चन्दन की रसकली उरेह दी।

मंजरी बोली—रुको !—ऐसा कह कर बाहर से पुलिन को पुकारा, उसी मधुर स्वर में—रसकली, मैं कहती हूँ आओ।

अपने हाथ में पुलिन का हाथ ले कर गोपिनी के हाथ में देते हुए वह बोली—

यह लो रसकली ! मैंने अपनी रसकली तुम्हे दी।

पुलिन की तो वाणी अवरुद्ध।

इसके बाद पुलिन से बोली—मैं दे रही हूँ, ना मत करो।

गोपिनी और पुलिन दोनों ही विस्मित, अवाक्।

सहसा गोपिनी मजरी का हाथ खींचती हुई बोली—नहीं, नहीं, तुम भी आओ, हम दोनो बहनें···

रसोच्छला मंजरी रसोच्छला की ही तरह बोली—धत्, मैं तो रसकली हूँ न !

शाम ढल जाने पर मंजरी बोली—ज़रा रुको, मैं एक बार गाँव का हाल-चाल तो लेती जाऊँ।

पुलिन ने बाधा देते हुए कहा—यह क्या ? अकेले ही ?

मजरी हँसती हुए लोट-पोट हो उठी, बोली—भय क्या है ? मेरी रसकली तो साथ है—ऐसा कह कर नाक की रमकली दिखा दिया उस ने। फिर बोली—डर की बात नही है, मैं बाहर ही बाहर खोज-ख़बर लूँगी। समझ-बूझ कर मैं गोकुलबाटी थाने पर जाऊँगी। आज शायद रात को न भी लौट पाऊँ, समझे ? ख़बरदार ! तुम दोनों जने मत निकलना बाहर, कसम रही, निकलो तो मेरा ख़ून पीना !

मंजरी चली गयी, रात को नही लौटी।

दूसरे दिन सुबह बलाई ने आते ही पुकारा—मीत !

मंजरी की ख़बर पाने की आशा में अपनी विपत्ति की आशंका को ताक पर रखकर पुलिन ने दरवाज़ा खोलते हुए कहा—आओ !

बलाई ने कहा—ठीक, ठीक है, पर मंजरी के हाथों क्यों रुपया भिजवाया ? ख़ुद जाने से ही होता। ख़ैर, वह भी ठीक ही हुआ। बाबू ने भी कहा—बलाई, जब पुलिन ने पचास रुपये जुर्माना दे ही दिये, तो उस पर अब मेरा क्रोध नही है। शायद पुलिन ने डर के मारे ख़ुद नहीं आकर मंजरी के द्वारा रुपया भिजवाया। मंजरी को भी माफ़ कर दिया है। तो एक बार आज जाना, बाबू को प्रणाम कर आना। डर की बात नही, मैं ने भी सब कुछ कह-सुन दिया है।

पुलिन की तो बोलती बन्द !

बलाई की बात जमी नही, कई बार हुक़्के पर दम लगा कर वह चला गया।

पुलिन स्तम्भित सा, पता नही कितनी देर तक खड़ा रहा। एक पोटली काँख मे दवाये हँसती हुई मंजरी ने पहले की ही तरह पुकारा—रसकली !

पुलिन नही बोला।

हँस कर मंजरी बोली—रसकली, नाराज़ हो ?

पुलिन ने मान भरे स्वर मे कहा—तुमने ज़मीदार···

मंजरी ने कहा—पानी में रह कर घड़ियाल से दुश्मनी करने पर चलेगा क्या ? इसी से निपटा दिया।

पुलिन बोला—रुपये···?

मजरी बीच में ही से बात छीनती हुई बोली—वह तो तुम्हारा ही है, मैं क्या तुम्हारी कोई नही ? इस के बाद पुलिन के दोनों हाथ थाम कर बोली—अच्छा, चलूं।

विभ्रान्त सा पुलिन बोला—कहाँ ?

मजरी बोली—वृन्दावन !

पुलिन ने रूठने के-से स्वर में कहा—रसकली !

मजरी बोली—अरे ! मैं तो तुम्हारी ही हूँ।

गोपिनी दरवाजे के पीछे खडी थी, सामने आ कर अधिकार भरे स्वर में बोली—नही, जाने नही पाओगी।

मजरी बोली—तीर्थाटन की सारी वेश-भूषा छोड कर अब कुक्कुर बनूं ?

गोपिनी बोली—तो कहो कि फिर लौटोगी ?

मजरी ने कहा—आऊँगी।

गोपिनी बोली—आओगी तो ? देखो।

जवाब न दे कर मंजरी हँसती हुई पोटली उठा कर रास्ते पर चल पडी। विचित्र थी वह हँसी, रहस्यावृत मायामयी मधुरता से भरी हँसी, कौन बता सकता है उस का अर्थ ? चलते-चलते उस ने गाना प्रारम्भ किया—

'लोग कहते मैं कृष्ण कलंकिनी हूँ,
सखि, मैं तो उसी गर्व से गर्विता हूँ,
री उसी गर्व से गर्विता हूँ।'

नाक पर उस के रसकली, मुखड़े पर हँसी, गति में एक विचित्र हिल्लोल, जैसे रस-धारा सर्वांग से झर रही हो उमड कर।



नारी और नागिन

ईंट के पैजावे मे से लँगडा शेख ईंट उचाड रहा था। लँगडे शेख़ का क्या नाम है—यह कोई नही जानता, शायद लँगडे को भी याद नही। पता नही कब से बचपन में उसके बायें पैर के टूटने के बाद से ही उसे लँगडे के ही नाम से जाना जाता रहा है। केवल उस का पैर ही लँगडा नही है, यौवन में दुश्चरित्रता के परिणामस्वरूप कुत्सित रोग के कारण लँगड़े की नाक बैठ गयी है, वहाँ सिर्फ़ बस एक बीभत्स गह्वर दिखाई पड़ता है। उस के बाद उसे हुई चेचक, चेचक के दाग वाला कुत्सित लँगडा देखने मे और भी भयंकर हो उठा।

अपने में ही डूबा हुआ लँगड़ा ईंटें उचाड रहा था।

थोडी दूर पर ही अदाई उर्फ वाहिद शेख बैलगाड़ी हाँकता चला आ रहा था। दोनों बैलो की पूँछ मरोड़ कर उसने एक अश्लील गाना अलापना शुरू किया। लेकिन हठात् उस का ताल-भग हो गया। दोनो बैल यकायक ठमक कर खड़े हो गये, अदाई एक धचका खा कर, गाना छोड कर बोला—स्साले बैलों की ऐसी की तैसी, कहता हूँ कि कुछ नहीं···

क्रोध मे बौखला कर उस ने बाँस का पैना उठाया कि उन्हे सजा दी जाये। लेकिन दोनों बैल लगातार फों-फो करते हुए गुर्रा रहे थे। अदाई का पैना हवा मे ही रह गया, वह

बैंतों को पीट नहीं सका और चीख उठा—लँगड़ा ! अरे लँगड़ा, साँप ! साँप !!

अदाई की बैलगाडी के सामने ही एक साँप का पोवा अपना फन उठाये झूम रहा था। अदाई बैलगाडी से कूद कर एक ईंट उठा कर मारने को तैयार।

उधर से लँगडाते-लँगडाते लँगडा शेख आ रहा था, अदाई के हाथ में ईंट देख कर वह बोल उठा—मारना मत, अदाई, मत मारना। मैं आ रहा हूँ।

अदाई के हाथ की ईंट उठी ही रह गयी, वह बोला—वाह, क्या खूबसूरत साँप है! उसका मुँह तो सिन्दूर की तरह लाल टक्-टक् है। माथ पर का चक्कर कितना खूबसूरत है! लेकिन भागा, वह भागा, जल्दी आ।

साँप अब बड़ी तेजी से भाग रहा था। लेकिन जा रहा था लँगड़े की ही ओर। अदाई को पीछे छोड कर भागना ही साँप का उद्देश्य था। लँगड़े को उस ने नहीं देखा।

लँगड़े शेख ने हाँक लगायी—अरे अदाई, अपना पैना तो घुमा कर मार। लो, वह तो ईंट के पँजावे में जा घुसा। उदयनाग था वह साँप, यह साँप जल्दी नहीं मिलता। पकड़ लेता तो कुछ आमदनी होती रे!

लँगडा शेख साँप का ओझा है। सिर्फ ओझा ही नहीं, साँप का खेल भी दिखाता है। छप्पर के घर के भीतर लटके हुए सिकहरों पर बड़ी-बड़ी हाड़ियों के मुँह बाँध कर उसने रख छोड़ा है। इन्हीं के भीतर वह साँपों को क़ैद करता है। कमजोर और पुराना हो जाने पर उन साँपों को वह दूर मैदान में छोड़ आता है। कितने साँप मर भी जाते हैं। जब साँप रहते हैं तब लँगडा मजूरी नहीं करता है। तब तो वह महुअर और खँजरी ले कर साँप का खेल दिखाने निकल पड़ता है। आमदनी भी बुरी नहीं होती। लेकिन गाँजे-अफीम की लत और बढ़ जाती है तब। कभी-कभार शराब भी चलती है। फलतः साँपों के न रहने पर लँगडा अपनी खाँची और बिड़वा ले कर चल पड़ता है। अच्छे खाते-पीते गृहस्थों के घर के सामने

आ कर, वह अपना बदसूरत चेहरा बढ़ा कर आवाज लगाता है—अरे, मजूर चाहिए—मजूर ?

ख़ुशामदी लहजे मे वह हँसता, उस का वीभत्स भयकर मुख और वीभत्सतर और भयंकरतर हो उठता। जिस दिन मजूरी का काम मिलता वह जान लड़ा कर काम करता, उस काम मे कोताही नही करता। जिस दिन मजूरी का काम नही मिलता, वह भीख माँगने निकल जाता। जो कुछ भीख से मिलता उसी से अफीम-गांजा खरीदता। इस के बाद भी यदि कुछ बच रहता तो जरा-सी ठर्रे की शराब गले मे उड़ेल कर घर लौटता, अपनी बीवी जुबैदा का पैर पकड़ कर रोते-रोते कहता—'मेरे हाथ मे पड़ कर तेरी दुर्दशा हो रही है। तुझे खाना नही दे कर मैं मार डाले जा रहा हूँ।'

जुबैदा हँसते-हँसते पति के माथ पर हाथ फेर कहती—चलो, चलो, पागलपन मत करो। छोड तो मुझे—कही से चावल तो लाऊँ।

लँगड़ा की रुलाई और भी बढ जाती, वह इस बार जुबैदा का गला जकड कर कहता—एक नयी साड़ी तेरे लिए कभी नही खरीद कर ला सका। पुराना ही पहन कर तेरे दिन बीत गये!···

खैर, वे सब बातें जाने दें। दूसरे दिन बिल्कुल भोर में लँगड़ा ईंट के पँजावे के पास आ कर हाजिर हो गया। हाथ में एक छोटी सी लाठी। बगल में एक झाँपी। सामने पूर्व दिशा मे बस अभी-अभी ललछौंही आभा दीख पड़ना आरम्भ हुई थी। पेड़ो के झुरमुट में बैठ कर पक्षी बार-बार कलरव कर रहे थे। गाँव के किसी देव-मन्दिर मे आरती की शख-घण्टा ध्वनि बज रही थी। एक ऊँचे टीले पर बैठ कर लँगड़ा चारों ओर सतर्क तीक्ष्ण दृष्टि से ताक रहा था।

पूर्व दिशा मे अरुणिमा की प्रगाढ़ता एक परिधि में बढ़ती जा रही थी। उस रंग की झाई में पँजावे के अधजले ईंट और भी लाल लग रहे थे। लँगड़े के मैले कपडे तक लाल रग मे रँग उठे थे। लँगड़ा उठ कर खड़ा हो गया।

यही—यही है न ?

थोड़ी ही दूर पर मैदान मे शायद यही साँप पूर्व की ओर मुँह उठाये हुए

अपना फण नचा रहा था। प्रातःकालीन सूर्य की रक्ताभा से साँप का रंग अरुणिम हो गया था। उस प्रगाढ़ लालिमा के भीतर उस के फण के चारों ओर का काला चक्राकार चिह्न अपूर्व सौन्दर्य से उद्भासित हो उठा था। तितली के लाल पंख में काले चकत्तों सा ही ख़ूबसूरत लग रहा था वह। लँगड़ा मुग्ध हो उठा। अपने आप ही वह बोल उठा—वाह !

इस के बाद वह धीरे-धीरे आगे बढ़ा। उदीयमान सूर्य के अभिनन्दन में सर्प-शिशु इतना प्रमत्त हो उठा था कि लँगड़े की पद-चाप से भी उस की मुग्ध लीला नहीं टूटी। बहुत समीप आने पर उस ने चकित हो कर अपना मुख घुमाया। दूसरे ही क्षण फों-फों करता हुआ फण मारा उस ने। लेकिन फिर वह अपना फण उठा नहीं सका। लँगड़े ने बड़ी फुर्ती से बायें हाथ की लाठी से उस का सिर धर दबाया। दाहिने हाथ से साँप की पूँछ पकड़, उसे दो बार झटका दे कर, लँगड़े ने साँप को अच्छी तरह से देख कर कहा—नागिन।

छह महीने बाद। गाँजे की दुकान से लौट कर लँगड़े ने जुबैदा से कहा—देखो, क्या लाया हूँ।

सामने के बरामदे में झाड़ू लगाती हुई जुबैदा ने कहा—क्या?

कपड़े की खूँट से लँगड़े ने एक छोटी सी नथुनी निकाल कर अपनी हथेली पर रखा।

जुबैदा ने सवाल किया—क्या होगी इतनी छोटी नथुनी?

हँसकर लँगड़े ने कहा—बीबी को पहनाऊँगा।

जुबैदा को तो काठ मार गया। हँसते-हँसते लँगड़ा घर में घुसा। इस के बाद गले में एक साँप लपेटे हुए बाहर आया। वही साँप था। इतने दिनों में ज़रा और बड़ा हो चला था। लेकिन वह तेज नहीं था उस में। शान्त-भाव से वह अपना सिर उठाये हुए लँगड़े के गले और कन्धे पर घूम रहा था।

जुबैदा बोली—देखो, यह किसी का नहीं है। माने अब उस में वह दम नहीं है, लेकिन उस जाति का विश्वास नहीं है।

हँस कर लँगड़े ने कहा—विश्वास नहीं है उस के विष के दाँत का।

नही तो वे भी तो प्यार करते है जुबैदा ! विप-दांत नहीं हैं लेकिन और दांत तो हैं, परन्तु मुझे तो काटता नही है। कैसी अच्छी लडकी की तरह 'बीवी' मेरी घूम-फिर रही है, देखो न ! ऐसा कह कर उस ने सांप के दोनों होंठों को हाथ से दबा कर उस के मुंह पर एक चुम्बन जड दिया।

जुबैदा को आश्चर्य नही हुआ ! यह दृश्य उस के लिए नया नही है। लेकिन वह नाराजगी से बोली—छिः छिः छि ! तुम्हे क्या घृणा भी नही लगती ? कितनी बार तुम्हें मना किया है, जरा बताओ तो ?

इस बात पर लँगड़े ने कान ही नही दिया। उस ने कहा—देखो-देखो, कैसे मेरे हाथ को लपेट रखा है ? जरा देखो तो सही। जानती हो, सांप और सांपिन जब आपस मे खेलते हैं, तब ऐसे ही आपस मे लिपटा-लिपटी करते हैं वे। कभी देखा है क्या ? आह, क्या मजेदार खेल होता है, कसम खुदा की।

जुबैदा ने कहा—मुझे देखने की जरूरत नही है, तुम ने देखा है वही अच्छी बात है। लेकिन तेरा खेल भी वही समाप्त करेगी, मैं समझती हूँ।

लँगड़ा तब एक सूई ले कर 'बीवी' की नाक में छेद करने बैठा। पैर के अँगूठे से सांप की पूँछ दबा कर और बायें हाथ से उस का मुख पकड़े है वह। दाहिने हाथ की सूई से नाक मे छेद कर के सांप को नथुनी पहना कर, उस ने उसे छोड़ दिया। पीडा और क्रोध से फों-फों करती हुई 'बीवी' बार-बार लँगड़े को फन मारने लगी। झांपी का ढक्कन ढाल की तरह पकड़ कर लँगड़ा वार रोकने लगा, वार बचाते-बचाते वह बोला—गुस्सा मत कर बीवी, गुस्सा मत कर। जरा देख तो सही, कैसी, खूबसूरत लग रही है तू। दे तो जरा आइना, जुबैदा, दे जरा तो। एक बार अपना चेहरा तो देखे।

जुबैदा बोली—नही दूंगी।

—दे, दे, तेरे पैरो पर पड़ता हूँ। देखूं तो जरा वह अपना चेहरा देख कर क्या करती है ?

जुबैदा अपने पति के इस अनुनय की उपेक्षा नहीं कर सकी। वह आइना लेने के लिए घर मे घुसी।

लँगड़े ने कहा—एक जीरे के बराबर थोड़ा सा सिन्दूर भी लेती आना जरा मिहरबानी कर के।

जुबैदा घर के भीतर से ही बोली—क्यों, होगा क्या?

मौज में मस्त सा लँगड़े ने कहा—देखेगी ही तू, क्या होगा। आगे नहीं बता रहा हूँ।

आइना और सिन्दूर ले कर आयी जुबैदा, उस ने थोड़ी दूर पर ये दोनों चीजें रख दी। लँगड़े ने बड़े कौशल से साँपिन को पकड़ कर, एक तीली से उस के माथ पर सिन्दूर की रेखा उरेह दी। इस के बाद वह हो-हो कर के हँसता हुआ बोला—उस से मैं ने निकाह कर लिया, ओ री जुबैदा, वह तेरी सौतिन हुई।

इस क बाद साँपिन की ओर मुड़ कर उस ने कहा—देख, देख, बीबी, जरा देख तो सही, क्या खूबसूरती फटी पड़ रही है। साँपिन को छोड़ कर आइना उस के सामने रख दिया उस ने और खँजड़ी बजा कर कर्कश नक-नकाते अनुनासिक स्वर में गाने लगा—

जानि ना गो एमँन हबे—
गोकुल छाड़िया केष्टो मथुरा जाबे
ओ जानि ना गो—

(नहीं जानती थी, अरे! ऐसा होगा—गोकुल छोड़ कर कृष्ण मथुरा जायेंगे, अरे, नहीं जानती थी—)

कई महीने बाद।

बारिश के बीच घोर बदली। लँगड़ा पता नहीं कहाँ गया था, लौट नहीं सका। जुबैदा ने अनुभव किया कि घर के भीतर से कैसी एक क्षीण लेकिन मदमाती मीठी सी गन्ध आ रही है! इधर-उधर घूम-फिर कर भी वह पता नहीं पा सकी कि यह क्या है?

दो दिन बाद लँगड़ा लौटा। जल-देवता को एक अश्लील गाली दे कर उस ने कहा—कुछ खाने को दे जुबैदा! बड़ी भूख लगी है री।

जुबैदा एक थाली में पान्ता भात[1] (पानी-मिला भात) ले आयी। पैर की कीचड़ धो कर ज्यो ही लँगडा घर में घुसा त्यों ही उस ने कहा—जुबैदा, यह कैसी गन्ध है री ?

जुबैदा बोली—पता नही, दो दिनो से ऐसी ही गन्ध आ रही है।

लँगडा कुछ भी नही बोला, सिर्फ लम्बी-लम्बी गहरी साँस लेता हुआ वह गन्ध को पहचानने की कोशिश कर रहा था। इधर-उधर घूम फिर कर 'बीवी' की झाँपी के पास वह खडा हुआ। आदमी के पैरों की आवाज पा कर झाँपी के भीतर की नागिन फुंफकार उठी।

लँगड़े ने कहा—हूँ !

जुबैदा ने उत्सुकता भरी जिज्ञासा की—क्या है, बताओ ?

लँगड़े ने कहा—'बीवी' के देह की गन्ध है। साँपिन है न, साँप के साथ मिलने का वक्त हो गया है, इसी से। इसी गन्ध से साँप चले आते हैं।

जुबैदा को काठ मार गया। बोली—पता नही रे, तुम लोगों की बातें हैं। अच्छा उठ, चल अब पान्ता भात तो खा ले।

भात खाते-खाते लँगड़े ने कहा—उसे मैदान मे छोड़ आना होगा मुझे। इस समय कैद कर के रखना पाप है।

एक गहरी साँस ले कर उस ने बात खत्म की।

जुबैदा ने परम तृप्ति की साँस ले कर कहा—वही अच्छा है, इसे मैं फूटी आँखों से नही देख पाती। इतने साँप मरते हैं, यह तो मरती भी नही !

भात खा कर झाँपी से 'बीवी' को लँगडे ने बाहर निकाला। उस का मुँह दबा कर उसे प्यार किया उस ने।

जुबैदा बोली—यह लो, कई दिन हुए, उस के दाँत तोड़े नही गये हैं, उस के दाँत उग आये होंगे। अब फिर क्या मोह है रे! जा न, उसे छोड़ ही आ।

---

1. थाली में बासी भात की मेंड़ बना कर बीच में भीतर और बाहर पानी मिला कर रख देते है ताकि खराब न हो—अनुवादक।

लँगड़े ने कहा—देख, देख तो सही, कैसे मेरे हाथ को लपेट रखा है, देख तो !

दोपहर को लँगड़ा उदास बैठा था। 'बीवी' को पास के जंगल में छोड़ आया था वह। जुबैदा बोली—ऐसे क्यों बैठा है, बोल तो ? जा गाँजा-वाँजा खरीद कर तो फूंक मार।

लँगड़े ने कहा—'बीवी' के खातिर मन कैसा हो रहा है री !

जुबैदा ने हँस कर कहा—मर तू, मर। तेरी बात सुन कर तो मेरे···

—नहीं री जुबैदा, मन बहुत उदास है।

जुबैदा इस बार पति के पास बैठ, उस के गले में बाँहें फँसा कर बोली—क्यों रे, मैं तुझे अच्छी नहीं लगती क्या ?

आदर में उसे चूम कर लँगड़े ने कहा—तेरे ही बल पर तो बचा हुआ हूँ री जुबैदा ! तू मेरी जान से भी बढ़ कर है।

जुबैदा बोल उठी—देख, देख 'बीवी' लौटी आ रही है। वह देख—नाली के बीच !

सचमुच ही नावदान के मुहाने पर फन उठाये 'बीवी' घूम रही थी।

लँगड़े ने उठने की कोशिश करते हुए कहा—पकड़ लाऊँ, जरा ठहर।

पति को प्राणपण से कस कर धरती हुई जुबैदा बोली—नहीं !—और इस के बाद कर्कश स्वर में बोली—जा-जा, भाग जा, हट, हट।

बायें हाथ से एक रोड़ा उठा कर उस ने नागिन को मारा। नागिन ने क्रोध से मिट्टी पर कई बार फन मारा और धीरे-धीरे नावदान से बाहर चली गयी।

तब शायद दोपहर रात थी। जुबैदा चीत्कार कर उठी—उठ, उठ, पता नहीं किस चीज ने मुझे काट खाया है !

हड़बड़ा कर शीघ्रता से उठा लँगड़ा। रोशनी जला कर उस ने देखा—सचमुच ही जुबैदा के बायें पैर की उँगली पर एक बूंद खून झलमला रहा था।

जुबैदा फिर चीख़ कर बोली—'बीवी'···तेरी 'बीवी' ने मुझे काटा है, वह देख।

एक हाँडी के इर्द-गिर्द नागिन धीरे-धीरे चल-फिर रही थी। फुर्ती से झपट कर लँगडे ने साँपिन को फिर से झाँपी मे कैद कर दिया। फिर उस ने कहा—जुबैदा अगर नही बची तो मैं तुझे भी मार डालूंगा।

लेकिन जुबैदा बची नही। सूर्योदय के संग ही सग उस की देह मे मृत्यु के लक्षण प्रकट हो उठे। सिर के बाल जरा ना खीचते ही उपड आये। ओझा लोग चले गये। लँगड़े शेख का बीभत्स भयकर मुख कैसा करुण हो उठा था जुबैदा के सिरहाने बैठे-बैठे !

एक उस्ताद ने कहा—तू भी जाता लँगडे, पर बाल-बाल बच गया। इन साँपों का गुस्सा बडा तेज होता है, शायद तुझे भी काटने ही आयी थी।'

आँसू भरी आँखों से उस उस्ताद के मुँह की ओर निहार कर कहा—नही।

लँगड़े ने अब फकीरी वेश धारण कर लिया है। उस का पैतृक घर खँडहर के ढूह मे बदल गया है। लंगड़े के घर के बगल से ही एक पगडडी जाती थी, वह पगडडी अब बन्द हो चुकी है। कोई भी उधर से नही जाता। लोग कहते हैं—साँपों का बडा डर है। बडे डरावने साँप हैं—उदय नाग। प्रत्यूष मे उषाकालीन सूर्योदय की वेला में उन्हे फन काढे हुए झूमती अवस्था मे यहाँ देखा जा सकता है।

'बीवी' (साँपिन) को लँगडा मार नही सका। उसे छोड़ दिया उस ने जंगल मे। सिर्फ यही कहा था उस ने—तेरा क्या दोष ? औरत जात का स्वभाव ही है यह ! जुबैदा भी तुझे फूटी आँखों से नही देख पाती थी।

घास का फूल

रानीगंज-खपरैलो (टाइलो) से छाया हुआ उत्तर-दक्षिण तरफ का लम्बा बँगला कोलियरी का ऑफिस है। ऑफ़िस के उत्तर मे ही पूर्व-पश्चिम की ओर लम्बाकार फूस से छाया हुआ बँगला कोलियरी के बाबुओं का मेस है। दोनों बँगलो के बीच के बड़े मैदान के बीच अतुल चहलकदमी कर रहा था। चारो तरफ *अँधेरा। बॉयलर की चिमनियो के मुँह पर आग* की लपटें धू-धू कर के जल रही थी। इधर-उधर कुलियों के केरासिन की ढिबरी का प्रकाश जुगनुओं की तरह काँप उठता था। मेस के एक घर मे कुली-रिक्रूटर (कुलियों की भरती करने वाला) चन्द्रकान्त हुक्का पीते-पीते सर्वेयर से कह रहा था—भाई मेरे, सोलह आने के भीतर साढ़े पन्द्रह आने झूठ बात कहता हूँ—सो मैं झूठ नहीं बोलूँगा ?

बड़े टेबिल के ऊपर कोयले की खान के नक्शे पर एक नयी लकीर खींचते-खींचते सर्वेयर ने जवाब दिया—हाँ, वह नहीं रहने से नौकरी रहेगी क्यो ? जरा रोशनी जरा ऊँची कर दे चन्द्र बाबू, चश्मे से दीख नहीं पड़ता।

बगल के कमरे मे लेबर-रजिस्ट्रार सीतापति अपने मे डूबा हुआ एक चित्र बना रहा था। उस के सामने एक आदमी ठूँठ की तरह निष्पलक भाव से बैठा हुआ था।

उस के बगल के कमरे में बूढ़े कम्पाउण्डर आँखों पर ऐनक चढ़ाये अपनी पत्नी को पत्र लिख रहे थे—'यहाँ भगवान् की दया से वृष्टि हुई है। वहाँ बारिश हुई कि नहीं, पत्र में लिखना। असामियों की हालत देख-सुन कर धान वगैरह बीज उधार देना।'

एक और दूसरे घर में लॉटरी का टिकिट ख़रीदा जा रहा था। मैनेजर के नाम एक लॉटरी की रसीद-बुक आयी थी। उसी के टिकिट बड़े बाबू बेच रहे थे। अठन्नी दाम थे हर टिकिट के। प्रथम पुरस्कार पाँच हज़ार रुपये। कालीपद एक छद्म नाम खोज नहीं पा रहा था। बड़े बाबू कलम पकड़ कर बैठे हुए थे, बोले—क्या नाम बैठाऊँ, बोलो जी, कालीपद ?

कालीपद ने कहा—श्री वत्स—कैसा रहेगा ? उस नाम पर शनिश्चर की भी दृष्टि नहीं रहती। रुकिए, रुकिए, महालक्ष्मी—कैसा रहेगा ? कहिए न ?

बिल्कुल पास वाले कमरे में एक सुन्दर युवक हारमोनियम ले कर गला साध रहा था—

'कि घूम तोरे पेयेछिलो हतभागिनी !'

(कैसी नींद तू सो गयी थी री अभागिनी !) यह तरुण कोयलरी के मालिकों के नाटक में नायिका का पाठ करता है। इसी से उस की नौकरी है यहाँ। तनख़्वाह बाईस रुपये थी। अब दो रुपये घट कर हो गयी है बीस।

पास के बरामदे में स्टोर-कीपर अमूल्य कुलियों को तेल बाँट रहा था, उस ने कहा—'विनोद, तू किसी 'यात्रा'-दल में शामिल हो जा। अच्छी तनख़्वाह पायेगा। क्यों बीस रुपये में पड़ा सड़ रहा है?' गाना रोक कर विनोद ने कहा—बहुत बड़ी चूक हो गयी गोदाम बाबू ! उस बार 'वीणा-पाणि' अपेरा वाले मेरे पीछे पड़े थे, कहा था—तुम पैंतीस रुपये से काम शुरू करो—छह महीने बाद पचास हो जायेगा। तीन साल में एक सौ रुपये महीने तनख़्वाह हो जायेगी। 'यात्रा' की मण्डली समझ कर मैं ने...

अमूल्य ने कहा—मैं एक दूकान करूँगा, भाई ! बैगनी, फुलौरी, बाड़े

की। समझे कि नहीं ? बीवी घर मे बना देगी, एक छोकरे को रख लूगा। काफ़ी फ़ायदा है।

तीन बच्चे दौडते-दौड़ते आ कर विनोद के बिस्तर पर कूद पड़े। एक लड़की ने कहा—घर मे गाना सुनाना होगा विनू चाचा ! चलो, माँ ने बुलाया है।

दूसरी लडकी ने नकियाते हुए कहा—पकड़ कर ले जाऊँगी, हाँ नहीं तो।

छोटे लडके ने तब तक हारमोनियम की रीड दवा कर एक बेसुरी ध्वनि पैदा कर दी। विनोद ने हँस कर कहा—चलो, चलो, चलें फिर। कंघी कहाँ रखी गोदाम वाबू ? मेरी ड्यूटी है, तो चलो, दो गाने सुना कर चला आऊँगा।

पहली लडकी ने कहा—किताब ले जाने को कहा है माँ ने। कई कोठियों के मालिक यहाँ रहते हैं। विनोद को बीच-बीच मे इन के घरो मे गाना सुनाना पडता है। रेलवे के कर्मचारियो की लाइब्रेरी से उपन्यास ला कर देना भी इस का एक काम है। हारमोनियम ख़ुद ही ले कर विनोद चला गया। गोदाम बाबू बोले—देखा जी बाबू की बाबरी सँवारना ?

विनोद के साथ एक कमरे मे रहने वाले आदमी ने अपना बाल सँवारते-सँवारते कहा—हूँ।

इस के बाद दर्पण ले, कई कोणों से अपना चेहरा देख कर उस ने कहा—अच्छा है भाई, और भला क्यो नहीं रहेगा ? चेहरा सुन्दर है, गला मीठा है। स्टोर-कीपर फिक् से हँस कर बोले—किताब लाना है—वह नहीं। मजदूरिनों को देखो तो वे तो बस टाइम बाबू के लिए पागल हैं।

अतुल सोच रहा था—हेनरी फ़ोर्ड ने जिन्दगी शुरू की थी काठ के मिस्तरी के रूप मे—एडिसॅन नाम का एक लड़का अख़बार बेचा करता था। अतुल यहाँ आया है डेढ़ सौ मील पैदल चल कर, रास्ते बरसाती नदी। नाव मे उतराई का पैसा यदि देता तो खाने के पैसे टँट मे नहीं बचते—उस ने वह नदी तैर कर पार की थी। आज वह कोई कोयलरी का मैनेजर सा हो उठा है। एक साल बाद मार्इनिंग की परीक्षा देगा।

पास में ही दो कर्मचारी आ रहे थे। एक तो जोरदार आवाज़ में अंट-शंट बकता चला आ रहा था। अतुल ने समझ लिया। मैनेजर ने आ कर कहा—'यह आप, अतुल बाबू, मैं तो बस आप को ही खोज रहा था। आज कोयले की तहों में बारूद जल गया है। क्रमश: तह गरम होती जा रही है। आग न लग जाये कहीं।

अतुल ने मीठे स्वर में पूछा—गन-पाउडर जल गया ?

ओवरमैन क़द्दावर और मिहनती आदमी था। वह बात न कर के जैसे भाषण सा देता था। हाथ-पैर हिला कर, अभिनय कर के हर बात समझाना उस का स्वभाव है। वह कह उठा—'जी हाँ, दक्षिण ओर की मेन गैलरी के ५८ नम्बर पिट के भीतर की दीवाल पर इतना बड़ा चट्टाननुमा कोयला जमा पड़ा है।' ठण्डाराम सरदार ने कहा—बाबू, उस कोयले को दाग दूँ। बारूद का टोटा तैयार कर के ठण्डाराम को ले गया था दिखाने—कि ज़रा अपनी आँखों से एक बार वह देख ले। हठात् झुक कर ओवरमैन ने कहा—ठण्डाराम, बारूद का टोटा ज़रा नीचे कर ले। फिर खड़े हो कर हाथ उठाते हुए वह बोला—मैं देख रहा हूँ—और बाबू—यह कोयले की चट्टान—और इधर बस फ़स्स् करती हुई बारूद ! एकबारगी बस जैसे सूरज उग आया हो उस अँधेरे में।

तनिक थम कर, पीछे कई हाथ हट कर फिर शुरू किया उस ने—मैं तब पीछे हटने लगा था। समझ गया था कि नहीं, इसी से, लेकिन बेटा ठण्डाराम मुँह बाये उल्लू की तरह खड़ा था।

हक्के-बक्के-से मूर्ख का अभिनय किया उस ने और तब रुका। इस के बाद अपना बायाँ हाथ ग़पाक् से पकड़ कर फिर उस ने कहा—ऐसे ही गप्प् से बेटे का हाथ पकड़ कर उसे घड़घड़ाता हुआ खींच लाया।

इस के बाद वह पानीपत युद्ध के विजयी अहमदशाह की तरह गम्भीर हो गया।

मैनेजर सीधा-सादा आदमी था। बुद्धि तो स्थूल थी ही उस की, आकार का भी स्थूल था। उस भले आदमी ने कहा—क्या किया जाये अतुल बाबू ?

अतुल ने सोच-समझ कर कहा—उस पिट में काम बन्द करवा दीजिए।

मैनेजर बोले—लेकिन मान लें अगर आग लग जाये!

हँस कर अतुल बोला—आग तो धरेगी ही।

बहुत परेशान हो कर मैनेजर बोले—तब?

—तो हम लोग क्या करें? आप उन लोगों को सूचित कीजिए जो यहाँ के मालिक हैं। हेडऑफिस को टेलेग्राम कर दें, बस मामला रफादफा।

मैनेजर बोले—वही तो है—कोयलरी मेरे अपने हाथ द्वारा बनायी गयी है···

अतुल ने हँस कर कहा—मैं चला तीन नम्बर की पिट में। मेरी ड्यूटी है वहाँ।

भारी-भरकम बीम। गियरहेड एक भयंकर कंकाल की तरह छत को छूता हुआ। उसी के तले साढ़े तीन सौ फीट गहरा एक बड़ा कुआँ पृथ्वी की छाती में छेद करता हुआ नीचे चला गया है। उस तरफ़ इंजिन-शेड है। उस के पास ही दो बॉयलरों के कलेजों में रावण की चिता जल रही है। इंजिन-शेड के उलटे तरफ एक छोटा शेड। यह पिट-क्लर्क ऑफ़िस है। एक ओर छोटी सी बेंच। बीच में एक टेबिल। इस तरफ़ एक चेयर। टेबिल के पहर एक लालटेन असहाय भाव से चारों ओर के विराट् अन्धकार में टिमटिमाती-सी। शेड के बाहर लोहे की बड़ी बोरसी में दह-दह करते हुए कोयले जल रहे थे।

उसी आग पर अपनी भीगी हुई झोली सेंक कर सुखा रही थी एक कुली की लड़की। चेयर पर अतुल बैठा हुआ है चुपचाप—उस तरफ़ की बेंच पर विनोद नाम का, वही छोकरा, एक खाते में कुलियों के नीचे उतरने-चढ़ने का हिसाब कर रहा था। लेबेर-रजिस्ट्रार की पदवी है उस की। विनोद के पास बैठा था श्यामापद—दो नम्बर ओवरमैन। उसी ने कहा—ओ री छोकरी! अपनी झोली जला देगी क्या रे?

इधर पिट-माउथ पर घण्टा बज उठा—टन्-टन्-टन्। नीचे से यह संकेत था कि आदमी ऊपर जा रहा है।

इस संकेत के प्रत्युत्तर में 'टालवान' चिल्ला उठा—हो-इ ! यह संकेत था इंजिन ड्राइवर को।

घरघराता हुआ, शोर करता हुआ इंजिन चलने लगा। इंजिन की गति के साथ-साथ गियर हेड के चक्के पर मोटे तार की डोरी का एक लपेटा सनसनाता हुआ उस अन्धकूप में उतर गया। साथ-ही-साथ एक और लौह-डोरी ऊपर की ओर आ रही थी। उसी डोरी के साथ एक 'केज' आवाज करता हुआ पिट के मुँह से आ लगा।

उस पिंजड़ेनुमा घर में थे चार आदमी।

विनू ने पूछा—कौन हो रे ?

उत्तर आया—हम हैं जी, भक्ता के आदमी—नारायण भक्ता।

इस पिंजड़े से बाहर आयी—कीचड़नुमा कोयले से पुती हुई बीभत्स काली मूर्तियाँ। जलते हुए कोयले के प्रकाश में वे प्रेत-सरीखे लगते थे। नंग-धड़ंग। सिर्फ एक लँगोटी। औरतों के हाथ में झोली। कोयले की कालिमा-लिप्त सारी देह में दो सफ़ेद चमकती आँखें देख कर डर लगता। बात करने पर दृष्टिगोचर होते उन के सफेद दाँत। शेड से बाहर आ कर वे जरा मुँह उठा कर खड़े हुए। अतुल सोच रहा था कि वह मैनेजरशिप की परीक्षा में प्रथम स्थान पायेगा ही, उसे बिन्दु मात्र भी सन्देह नहीं है। खनिज-विज्ञान में वह दक्ष हो उठा है। यही जो आग है—पृथ्वी के वक्ष के भीतर लाखों-लाखों टनों कोयले की परतों में जो भयंकर अग्निकाण्ड होता है—जो आग पानी से नहीं बुझती—उसी आग को बुझा देने का आविष्कार उस ने किया है। लेकिन अपनी जिन्दगी खतरे में डाल कर क्यों दूसरे का उपकार करने जायेगा वह। उस के जीवन का मूल्य, उस की जिन्दगी की कीमत पचास रुपये नहीं !

टन्-टन्-टन् ! फिर हुआ संकेत। एक 'केज' नीचे उतर गया, दूसरा पिट के मुँह पर आ डटा—धचाक् ! 'केज' के भीतर कोयले भरी टब-गाड़ी। लेबर-रजिस्ट्रार ने पूछा—क्या है आदमी या कोयला ?

ओवरमैन एक कुली से कह रहा था—अरे, क्या नाम है—क्या नाम है रे तेरा ? गुरुचरना ! सुन, सुन, इधर सुन !

—हे-हो ! होशियार !—छोटी लाइन पर कोयले से भरी टब-गाड़ी ठेल कर चिल्लाया टालवान। आवाज करती हुई गाड़ी लाइन पर सरकती चली गयी।

उस ओर पिट के मुँह पर घण्टे पर घण्टे बजते जा रहे थे। 'केज' ऊपर-नीचे आ-जा रहे थे। गुरुचरन कह रहा था—मुझे नीचे उतरने को कह रहे हैं क्या?

ओवरमैन नाराजी से बोल उठा—नहीं—कहता हूँ जी गुरुपुत्तर मेरे! मेरे पास दयापूर्वक आ बैठिए—मैं तुम्हारे पाँव पखारूँगा।

लेबर-रजिस्ट्रार बिनू अपना खाता लिखते-लिखते गुनगुना रहा था—'तुम आये थे आज सवेरे ओ रे सुन्दर!

अतुल मन-ही-मन हँसा। सचमुच मजे में है यह छोकरा, घर में चाहे भूँजी भाँग न हो लेकिन यहाँ वह पोशाक पहन कर रानी सजता है। दो रुपये उस के कटते हैं और वह घर के भीतर गाना गा कर अपने को धन्य समझता है। कोयले का हिसाब लिखते समय भी वह गाता है—'सुन्दर तुम...!'

नीचे के अन्धकूप से आदमियों की हलकी आहट आ रही थी।

ओवरमैन चिल्लाया—हाँको-हाँको-हाँको!

पिट के मुँह पर खड़े दोनों टालवान एक साथ झुक कर आवाज दे उठे—हो-हे-ओ-हे!

अतुल जरा अन्यमनस्क हो कर चतुर्दिक् पसरे अन्धकार की ओर ताक रहा था। गम्भीर अन्धकार में कोयलरी में जलती हुई कोयलों की रोशनी जैसे रात्रि की देह पर कोढ़ की दाग हों।

टन्-टन्-टन्!

इस बार और कई कुली ऊपर उठे। बिलासपुर के आदिवासी। औरतों की देह पर रूपे और जस्ते के गहने। गले में हँसुली, पैरों में झाँझ, नाक में बेसर, एक हाथ में काँसे की चूड़ियाँ।

थोड़ा सा विराम। इंजिन रुका हुआ है।। 'केज' स्तब्ध सा झूल रहा है। केवल बॉयलर स्टीम की शक्ति के कारण काँप रहा है—उसी कम्पन

का आघात हवा की पर्तों को आन्दोलित करता हुआ शेड के खपरैलों से छाये घरों को भी कँपा रहा है। खपरैल कँपते हैं, उस पर की छोटी खिडकी कँपती है। फुरसत पा कर 'केजमैन' और टालवान कौडियों को गिन कर मजदूरी का हिसाब करते हैं।

जहाँ लोहे की बोरसी मे कोयले दहक रहे थे, वहाँ दो-चार कुली आ कर जमा होने लगे। ये इस बार नीचे जायेंगे कुएँ मे। किरासिन की ढिबरी जला कर एक तरुणी ने बीडी सुलगा ली और झट से ढिबरी बुझा दी। वह बोली— बाबू, कितनी देर तक बैठी रहूँगी, नीचे उतार दो अब।

अतुल सोचता है—यह उन का नशा है या भूख की प्रेरणा ?

बिनू ने कहा—नीचे खान मे जा कर सोयेगी। फिर रात को जा कर कही काम पर लगेगी। घर पर ही सो तो सकती है।

तरुणी हँस कर बोली—अच्छा, तू एक गाना सुना दे न बाबू !

ओवरमैन बोला—तू नाचेगी तो, बोल ?

वह खिलखिला कर हँस पडी और हँसते-हँसते बोली—मेरा भरतार मारेगा जो धमाधम, मार-मार कर हड्डी तोड़ देगा, नही तो···

फिर यकायक एक बुढिया को पकड कर बोली—यह नाचेगी, इस का भरतार मर चुका है।

आस-पास की सभी जवान औरतें हँसी से फट पडी। उस तरफ अठारह-उन्नीस साल का एक लड़का अकारण ही दहकती हुई आग में ढेला फेंक रहा था। इसी इमारत की साईडिंग-लाइन के ऊपर लोकोमोटिव की बाँसुरी तीक्ष्ण होती जा रही थी। अतुल ने पीछे घूम कर देखा। दक्षिण की ओर बहुत दूर पर रेलवे जंक्शन के यार्ड में अनगिनत बिजली के बल्व कतार के कतार जुगनुओं की तरह जगमगा रहे थे। इस तरफ बॉयलर की चिमनी मे से ऊर्ध्वमुखी अग्नि-शिखा सर्प-जिह्वा-सी लपलपा रही थी। उस अग्नि-शिखा के मस्तक पर अन्धकार से भी प्रगाढ़तर धुआँ जैसे फूल-फूल कर बरसता जा रहा था। बीच-बीच में आग की लपटों के साथ

आती हुई ध्वनि क्षीणतर हो उठी। इंजिन का शब्द अब नहीं सुनाई दे रहा था। पिट के दोनों ओर से पानी बह रहा था। नीचे के पानी बहने का शब्द और साफ़ सुनाई पड़ने लगा।

केज की गति धीमी होते ही इस बार केज आवाज़ करता हुआ थम गया।

विनोद चुपचाप स्तब्ध सा बैठा था। उस केज के ऊपर आते ही विनोद ने कहा—तो तू ऊपर आ ही गयी?

केज से बाहर निकली वही युवती। युवती का नाम था चुड़की। चुड़की बोली—

जो धुआँ और गर्मी है गड्ढे में—भाग अइली—इस के बाद फ़िक् से हँस कर बोली—तोर गाना सुनै ख़ातिर।

विनोद ने नाराज़ी से कहा—जा भाग यहाँ से।

शेड के कोयले की धूल पर ही आँचल बिछा कर चुड़की सो रही। बोली—तोर बड़ा गुमान हो गएल हू न रे बाबू जी!

विनोद चुप रहा।

चुड़की अपने ही मन बोली—तोरे से नीक गाना हम जानी ला। सुन बा तू? और उस की सम्मति की अपेक्षा किये बिना ही उस ने अपनी भाषा में गाना शुरू कर दिया। गाने के बाद वह चुप हो गयी। थोड़ी देर बाद वह फिर बोली—आकाश में ऊ जौन तरई चमकत बा उ भूला (ध्रुवतारा) तारा हू न बाबू?

विनोद ने तब भी कोई जवाब नहीं दिया। चुड़की इस बार उठ कर उस के पास आ बैठी। फिर बोली—एक ठो गाना तू काहे नहीं सुनावा बाबू? सभी तो तुम्हारा गाना सुन चुके—हम को तो मेरी माँ नहीं सुनने देती—जानत हो बाबू—का कहती है वह—तू बाबू को 'पियार' करने लगेगी!

विनोद को जैसे धीरे-धीरे नशा चढ़ रहा था। उस का नवजाग्रत् यौवन अहंकार से भर उठा। उस ने हँस कर कहा—गाना तो ख़ैर मैं तुझे सुना दूँगा; तू क्या देगी बदले में मुझे?

चुड़की जैसे चिन्तित हो उठी। उस के बाद बोली—एक अढ़उल का लाल फूल मैं तुझे रोज दूँगी।

विनोद बोला—धत्! अढ़उल का फूल ले कर क्या करूँगा मैं?

—काहे, कान पर रख सकत हो, नाही तो जुलफी में खोस लिहे। तू हमका रोज गाना सुनैबै तो।

एक बहुत बडी टनेल के बीच से अतुल चल रहा था। गैस की रोशनी मे कोयले के तीक्ष्ण-सूक्ष्म कण चित्रवत् उदभासित हो रहे थे। हाथ की वह गैस-डिबरी मुँह के पास ले जा कर एक बीडी सुलगाने की कोशिश की अतुल ने, पर श्वास के कारण वह बुझ गयी। घुप्प अँधेरा। कहीं कोई शब्द नहीं। धुएँ के मारे साँस लेने में तकलीफ हो रही थी। पॉकेट से दियासलाई निकाल कर अतुल ने फिर से रोशनी जलायी। टनेल अब तिरछी हो गयी थी। थोड़ी दूर चलने के बाद अतुल ने धुएँ के बीच कुछ अंगार जैसी रोशनी देखी। आदमियों की बातचीत की भनक भी सुनी उस ने। कोई बाँसुरी बजा रहा था। टनेल के बगल मे ही कुलियों ने बिछौने लगा रखे थे। दो कुली युवक बाँसुरी बजा रहे थे अपने मे ही डूबे-से। कितनी तरुणियाँ गा रही थी। अतुल पश्चिमी गैलरी की ओर मुडा। इधर ही आग है। गर्मी और धुआँ क्रमश. बढते जा रहे थे। अतुल खड़ा हो गया। उस के जीवन का काफ़ी मूल्य है। वह लौट कर मजदूरों से बोला—तुम सब लोग पिट के मुहाने पर चले जाओ, मैनेजर के आने पर काम करना।

यह हालत देख कर मालिक बिचारा तो माथे पर हाथ रख कर बैठ गया। मैनेजर परेशान हो उठे।

अतुल ने कहा—मैं कर सकता हूँ। हाँ, जिस जगह आग लगी है, वह अवश्य सदैव के लिए खत्म हो जायेगी। और दूसरी जगहें सुरक्षित रहेंगी।

मालिक उस का हाथ पकड़ कर बोले—यही करिए, जो भी खर्च हो, कोई फ़िक्र की बात नहीं।

अतुल ने बिना लाग-लपेट के स्पष्टतः कहा—लेकिन मैं किस स्वार्थ से अपनी जिन्दगी को दाँव पर लगा कर आप की भलाई करूँगा? मेरी मजदूरी देंगे तो?

मालिक तो अवाक्! उन्हें याद आया, कई वर्षों पहले का फटेहाल-भूखा-प्यासा-थका-हारा एक लड़का। उस दिन दया के कारण उसे नौकरी दी थी उन्होंने। एक दीर्घ निःश्वास लेकर मालिक बोले—यह बात आप से सुनने की उम्मीद नहीं थी अतुल बाबू!

अतुल ने हँस कर कहा—लगता है आप सोच रहे हैं कि मुझे शरण और नौकरी दी थी आप ने। लेकिन मैं जो इतने दिनों तक आप के पास रहा, क्या मैं ने बिना मेहनत के कोई तनख्वाह ली है? मैं जो मेहनत करता था, उसी की मजदूरी आप देते थे। खालिस अदला-बदली है यह, दान नहीं, आज तक मैं ने अपनी जिम्मेदारी में जरा भी कोताही नहीं की।

मालिक बोले—आप चाहते क्या हैं?

अतुल ने कहा—एक बड़ा माइनिंग इंजीनियर जो लेता, वही लूंगा मैं। हाँ, पचास रुपये मेरी तनख्वाह उस में से काट लेंगे आप।

मालिक राजी हो गये। बोले—वही पायेंगे।

अतुल बोला—कन्ट्रैक्ट कानूनी दृष्टि से ठीक-ठाक होना जरूरी है। कागज पर लिख कर दे दीजिए।

वह भी हो गया। अतुल बोला—फायर-ब्रिक्स और फायर-क्ले चाहिए। जिन गैलरियों में आग लगी है, उन्हें बन्द कर देना चाहता हूँ मैं।

मालिक ने प्रश्न किया—उस से क्या होगा?

अतुल ने हँस कर कहा—उसी में आग बुझेगी, सर! नहीं तो पानी भर देने से भी आग नहीं बुझेगी। जिस दिन पानी निकाल कर काम शुरू करेंगे, उसी दिन फिर गैस शुरू हो जायेगी।

इंजिन आज बिलकुल बन्द है। कोयले की खानें भी बन्द हैं। केवल स्टीम के साथ-साथ पम्पिंग की आवाज आ रही थी।

लॉरी की आवाज से कोयलरी मुखरित हो उठी। लॉरी में माल-असबाब आ रहे थे। जोर-शोर से काम शुरू हुआ। पहली बारी खत्म हो गयी। लेकिन कुली नीचे उतरने को राजी नहीं हो रहे थे। कुली-रिकूटर कुलियों में सब का प्यारा था। वह दरवाजे-दरवाजे घूम कर वापस आ

कर बोला—कोई भी नीचे नहीं उतरना चाहता। वे सब कह रहे हैं कि बिना साँस लिये हम सब मर जायेंगे, बाबू! वह हम लोग नही कर सकेंगे। कितने कुली तो भय के मारे कल भाग गये।

हाफ़पैंट के पॉकेट मे दोनों हाथ डाल कर अतुल ने कहा—दो रुपये रोज दूंगा। चार घण्टे का काम है। आप फिर जा कर कहिए।

रिक्रूटर चला गया। अतुल स्वय एक फ़ायर-ब्रिक्स से भरी टब-गाडी को ठेलते-ठेलते बोला—इडियट कहीं के! रुपये से दुनिया खरीदी जा सकती है—आदमी क्या दुनिया से बाहर है?

इस के बाद ख़ुद ही घण्टा बजा कर आवाज दी उस ने—हे-हो-हइया!

इजिन चलने लगा।

मेस के कमरे मे बाबुओं की व्यस्तता की सीमा नही रही। पता नहीं कब किस की पुकार पड़ जाये! कालीपद लॉटरी के टिकिट का नम्बर भूल गया है। सर्वेयर बाबू प्लान-पेपर्स ले कर बैठे है। गैस कहाँ तक बढ़ आयी—इसे आँकने मे लगे हुए हैं। निशान पर निशान लगाये जा रहे हैं। विनय की हारमोनियम बन्द है। सीतापति क्लर्क की चित्रों की कॉपी बक्स मे बन्द हो चुकी है। रंग की कटोरियाँ सूख चली हैं। स्टोर बाबू माल-असबाब जमा करते-करते और खर्चा लिखते-लिखते हाँफ चले हैं। विनोद नीचे उतरने की पोशाक पहिन रहा था। घर के उत्तर की तरफ़ एक खुला मैदान। उसी ओर के जंगल से कोई बोला—एक ठो गाना सुना न रे बाबू!

विनोद ने घूम कर देखा कि घुड़की है। सिर्फ घुड़की ही नहीं और भी दो-तीन लड़कियाँ। इन काली-कलूटी उजड्ड-अक्खड़ लड़कियो के मारे तो उस की नाक मे दम रहता है। जितने मुँह उतनी बातें सुनाई पड़ती हैं उसे ले कर। ख़ुद भी घृणा होती है।

उस ने कहा—जा, जा, परेशान मत कर।

एक दूसरी लड़की बोली—काहे गोस्सा करत हो बाबू? एक ठो गाना सुनाय दे, हम सब चल जावें।

एक ने कहा—चुड़की तोर खातिर अड़उल फूल लियाइल बा। दे न रे चुड़की—बाबू के दे न रे फूल!

चुड़की ने अड़उल फूल फेंक दिया विनोद के बिछौने पर। फिर वह बोली—ले बाबू, ओके कान पे धर ले। बहुत नीक लागी रे तोके।

विनोद की इच्छा हुई कि फूल को नोच कर वह फेंक दे। लेकिन यह भी नही कर सका वह। यह उस की एक कमज़ोरी है। वह किसी को आघात नही कर सकता। परेशान हो कर विनोद ने प्रार्थना करते हुए कहा—भाग जाओ तुम लोग अभी। अभी मत सिर खाओ। देखती नही कि मैं नीचे खान मे उतरने जा रहा हूँ।

आश्चर्यान्वित हो कर चुड़की ने कहा—खान तो जल के खाक हो गइल तोर रे।

—तेरा सिर हुआ है। तुम सब काम भी नही करोगी—अब तुम्हारा काम हम लोगों को करना पड रहा है।

चुड़की बोली—सच्चे कहत हउवे त? नीचे खान मे गइले पर मर त न जावे?

अपने आप हँस कर विनोद ने कहा—अच्छे मूरख से पाला पड़ा—क्यो मरेगी भाई? यह देख, मैं तो जा रहा हूँ। तुम लोगों को दो रुपये—तीन रुपये हाज़िरी दूँगा। आओगी तुम लोग?

एक तरुणी बोली—हाँ रे बाबू, सच्चे त? तीन रुपये क हिसाब से देबे त? अउर मरद नाही जावें न?

—अरे, नही, नही, नही। कितनी बार कहूँगा तुम सब को?

चुड़की बोली—तू रहबे त तो बाबू नीचे खान मे? हमने क नीचे पहुँचा के खुद भाग त ना अइबे न?

—अच्छी आफ़त है रे बाबा! अरे भाग कर आने की हिम्मत कहाँ है? नौकरी चली जायेगी जो।

अपनी भाषा मे आपस मे बक-बक कर के चुड़की ने कहा—अच्छा, मरद-मजूरा सब के बोला लियाई रे बाबू! लेकिन तोहे एक ठो गाना सुनावे के होई!

इस के बाद अपनी सहेलियों को पुकार कर कहा—'देला बो' ! अर्थात् चलो, चलो।

जगली, काली-कलूटी तरुणियाँ नाचते-नाचते चली गयी।

थोड़ी देर बाद कुछ मजदूरिनें आयी और उन्होंने पूछा—सचमुच तीन रुपया क हिसाब देवे ?

अतुल ने कहा—वही पाओगी !

—हाँ रे बाबू, तोहनीक त संगे रहवे न ?

हँस कर अतुल ने कहा—तुम लोगो की बगल मे मैं खड़ा रहूँगा। इस के अलावा राजमिस्तरी रहेगा और बाबू लोग भी रहेंगे। तुम लोग अकेले नही रहोगी।

—तब त ठीक ह बाबू ! लडकियन सब के नीचे उतरे देवे त ?

अतुल जानता था कि इन औरतों को छोड कर ये कही नही जा सकते। राजगद्दी पाने पर भी नही। हँस कर अतुल ने कहा—ठीक है, वे भी नीचे उतरेंगी।

मैनेजर ने धीमे स्वर मे कहा—यह तो गैर-कानूनी होगा अतुल बाबू !

केज-ब्रेक खोलते-खोलते अतुल बोला—नेसेसिटी हैज नो ला ! कानून मानने पर तो ये खानें जल ही जायेंगी।

इस के बाद उस ने आवाज दी—हे-हो-हइया ! ईंटों की गाड़ी लाओ !

अँधेरी खान में आदमियों के काम-धाम का कोलाहल अविराम गति से चल रहा था। ऊपर भी वही हाल था। खान के मुहाने पर खजांची चमम लि कर बैठा था। साथ ही साथ कुलियों की मजदूरी चुकता कर दी जा रही थी। शेड के बीच बैठा था बूढ़ा डॉक्टर। गियरहेड के दोनो चक्के अनवरत घूम रहे थे—घड़्-घड़्-घड़्।

नीचे से संकेत आ रहा था कि लोग ऊपर आ रहे हैं।

टालवान ने इंजिन ड्राइवर को संकेत दिया—हे-हो-हे। दो मिनट बाद हड़हड़ाता हुआ केज ऊपर आ रुका। एक क्लर्क, एक कुली और एक कुली युवती उतरी। युवती की छाती में दर्द हो रहा था। ऑक्सीजन-

सिलिण्डर की चाभी खोल कर उस का ट्यूब युवती की नाक के पास ले आ कर डॉक्टर ने कहा—डर नहीं है।

नीचे से फिर संकेत आया—घड़-घड़। एक आदमी ऊपर आ कर बोला—माटी, माटी की गाड़ी जल्दी भेजो।

खजाची हिसाब कर रहा था—तीन दूने छह—यह ले केवट, छह रुपये मजदूरी तुम सब की। नीचे की खान से बिछी हुई पटरियों पर गाड़ी धीरे-धीरे चल रही थी, एक आदमी ने उसे ठेल कर उस की स्पीड जरा तेज करने का प्रयत्न किया। और भी भीतर की ओर जहाँ आग लगी हुई थी वहाँ गैलरी के मुहाने-मुहाने पर ईंटें जोड़ी जा रही थीं। बीस-पचीस मिनट के अन्तर पर दूसरा आदमी आता था। कोयले की गैस के कारण श्वास बन्द होती जा रही थी—विवर्ण पांशु कुली झूमते-झूमते, गिरते-पड़ते ऑक्सीजन-सिलिण्डर के फनेल के पास आ कर खड़े हो रहे थे। अतुल की पीठ पर गोताखोरों की तरह एक छोटा-सा ऑक्सीजन सिलिण्डर बँधा हुआ था, उस के दोनों नल नाक के पास लगे थे जो श्वास-प्रश्वास में सहायता दे रहे थे। अतुल लगातार घूम-घूम कर गलरी की निकासी की ओर आ-जा रहा था।

उस ने कहा—जल्दी-जल्दी—अब सिर्फ तीन गैलरियाँ और हैं। चलो भाई, चलो, शाबाश! देरी हुई कि सब स्वाहा। तब गैस सभी गैलरियों से निकलना शुरू करेगी।

विनोद एक गैलरी के मुहाने के पास खड़ा था। चुड़की गारा ढो रही थी। उस का केवट ईंटें बैठा रहा था। गारे का बरतन फेंक कर चुड़की बोली—अब नाहीं कर सकब!—वह हाँफ रही थी।

विनोद बोला—जा जा, यहाँ चली जा, हवा ले ले।

—हट जाओ—हट जाओ—ईंटा की गाड़ी है।

विनोद सरक कर खड़ा हो गया। हड़हड़ाती हुई गाड़ी चली गयी।

—मिट्टी-मिट्टी-फायर-बने—अतुल चीख रहा था। उधर से कोई चिल्लाया—आदमी गिर पड़ा है यहाँ, जल्दी से जाओ।

अतुल तेज़ी से विनोद की बगल से होता हुआ कहता जा रहा था—और दो गैलरी—बस दो गैलरी !

धुआँ तेज़ी से बढ़ रहा था। विनोद को कष्ट हो रहा था। वह ज़रा सरक कर पचीस नम्बर की गैलरी के मुहाने के पास खड़ा हुआ। जगह ज़रा एकान्त थी और उधर अट्ठाईस नम्बर में काम हो रहा था। बस सत्ताईस नम्बर की गैलरी बन्द होते ही लड़ाई खत्म। पृथ्वी के गर्भ की अग्नि श्वासरुद्ध हो कर मृत हो उठेगी। इसी बीच पता नहीं किस ने उस की आँखें मूंद ली। एक झटके में विनोद ने उसे धकेल कर अपने को छुड़ा लिया। उस के क्रोध की सीमा नहीं रही। चुड़की गिर कर भी खिल-खिल कर हँसती रही। जूते की एक ठोकर चुड़की के मुँह पर मारते हुए विनोद ने कहा—मारे डंडों के मैं तेरी खोपड़ी चूर कर दूंगा।

चुड़की फफक कर रो पड़ी। वहाँ से विनोद भाग आया। जाते-जाते पीछे घूम कर ताका उसने।

धुएँ में कुछ भी साफ नहीं दीख पड़ा। लेकिन एक दबी हुई रुलाई का स्वर वह अब भी सुन रहा था। विनोद पीछे घूमा। पुकारा उस ने—चुड़की ! अरी ओ चु-उ-ड़-अ-की-ई ! जा काम पर जा, जा, जा।

—नाहीं, मो जावो ना। तू हमरा के काहे जूता से मारली रे ?

उधर से हड़-हड़ करती हुई टब-गाड़ी आ रही थी। जो उसे ठेल कर ला रहा था—उसी ने आवाज़ दी—हे-हो-हइया, हट जाओ। खबरदार ! हे-हे-हो, हट जाओ।

विनोद वहाँ नहीं रुक पाया। सिलिण्डर के पास ऑक्सीजन लेने के बहाने वह खड़ा रहा। औज़ार आदि टब-गाड़ी से लौटाये जा रहे थे। शायद काम खत्म हो गया था। कई आदमी किसी को धर-पकड़ कर उठा लाये।

—घंटी मारो टालवान, घंटी मारो जल्दी, पाँच आदमी गिर गये हैं। पीछे से एक आदमी और आया। विनोद ने पूछा—क्या मामला है जी ?

—और क्या होगा ? एक ओर से गैस ज़ोर मार रही है। पीछे लौट आना पड़ा।

—कितने नम्बर तक पीछे हटना पड़ा? सन्-सन् करता हुआ केज ऊपर उठ चला। उत्तर नहीं सुनाई पड़ा। विनोद तेज़ी से खान की ओर बढ़ चला।

पन्द्रह नम्बर गैलरी का मुंह बन्द हो रहा था।

अतुल किसी को कह रहा था—कोई उपाय नहीं है, बारह गैलरियाँ छोड़ देनी पड़ी।

विनोद चिल्ला पड़ा—जुड़ाई रोक दो—भीतर आदमी है।

उस का मुंह दबा कर अतुल ने कहा—गेट आउट।

विनोद सकरुण दृष्टि से ताक कर बोला—चुड़की।

अतुल ने बीच में ही रोक कर कहा—ऊपर चले जाओ तुम—फिर अँगरेज़ी में एक स्लिप लिख कर उस के हाथ में देता हुआ बोला—कैशियर को देना।

कागज पढ़ कर बीस रुपये विनोद की हथेली पर रखते हुए कैशियर बोला—तुम्हारी तनख्वाह है। एक घण्टे के भीतर कोयलरी छोड़ कर चले जाओ तुम।—छोटू सिंह!

—हुजूर!—छोटू सिंह वहीं था।

—एक घण्टे के भीतर बाबू को अपनी चौहद्दी से बाहर कर दोगे।

नीचे का काम समाप्त हो चला था। अतुल ने रूमाल से अपना माथ पोंछते-पोंछते मन ही मन कहा—हो सब्ज़ हर! सब से कह देता। फूल! जानता नहीं कि जो सम्पत्ति बच गयी है, उस से उस लड़की की तरह के हज़ारों औरतों-मर्दों की रोटी-रोज़ी हो गयी है।—पैकिंग दो। फायर-बने की पैकिंग दो। एक बूंद भी गैस न आने पाये।

आग थम गयी है। कोयलरी वैसे ही पहले की तरह चल रही है। केज नीचे-ऊपर आता-जाता है। रात को कामगर कुली औरत-मर्दों की भीड़ आती है—बाबू सांग नाम लिखते हैं। टालवन चिल्लाता है—हे-हो-हो—इंजिन चलता है—केज नीचे उतरता है।

सन्ध्यामणि

हिन्दू शासनकाल का अक्षय-पुण्य महिमामय एक स्नान-घाट। गंगा यहाँ दक्षिण की ओर बहती है। राढ़ प्रदेश की विख्यात बादशाही सड़क लगातार पूर्व की ओर आती हुई इसी घाट पर ख़त्म हुई है।

सड़क के दोनों तरफ़ घाट के ठीक ऊपर ही एक छोटा सा बाज़ार है। बाज़ार माने बीस-बाईस दुकानें, कई मिठाइयों की, दो बनियों की, छह्-सात कुम्हारों की, मनिहारी और पान-बीड़ी की तो हैं ही। घाट के बिलकुल ऊपर दो आदमी गंगाफल अर्थात् केले और डाब बेचते हैं।

दोपहर तक पुण्यकामी तीर्थयात्रियों के समागम से इस छोटे से बाज़ार में तिल धरने को भी स्थान नहीं रहता। चीत्कार और कोलाहल से सारा बाज़ार गूँजता रहता है, जैसे एक मेला हो। अस्तायमान सूर्य के संग सभी यात्री अपने-अपने घरों की ओर चले जाते हैं। अन्धकारपूर्ण, जनहीन बाज़ार तब सांय-सांय करता है। तब दस-पाँच व्यक्ति जो आते हैं वे थके-माँदे मुरदे जला कर लौटने वाले लोग। किराये के घर में आ कर ये भाग्यहीन लोग देह ढीली कर के पड़ रहते—कोई शोक और क्लान्ति के कारण सो जाता, कोई चुपचाप लम्बी साँस ले कर करवट बदलता रहता, कुछ की आँखों से आँसू चूते रहते। दो-चार बातें मृतक अथवा मृत्यु के सम्बन्ध में

भी परस्पर बातचीत में उठ जाती। ठीक जैसे बुलबुलों की तरह ये बातें होतीं, फिर चुप्पी छा जाती।

बाज़ार का कोलाहल इन भाग्यहीन जनों से और नहीं बढ़ पाता। उस समय जो आवाज़ होती—वह कुछ दुकानों की होती। दुकानदार अपनी-अपनी दुकानों में बैठ कर दिन भर का नफ़ा-नुक़सान मिलाते। हँसी-ठट्ठा चलता, और काम भी होता रहता।

कार्तिक के उत्तरार्द्ध की एक शीतकातरा सन्ध्या। बीड़ी का दुकानदार छक्कू अपनी बीडियाँ सेंक रहा था। किसी मेले से लौट कर आया हुआ कालीचरण अपनी दुकान सजाने में व्यस्त था। पास का बूढ़ा कुम्हार कुछ गढ़ रहा था। उस के हाथ में फंदे की तरह सनी हुई मिट्टी का लौंदा। लौंदे से बन गया डमरू। निपुण उँगलियों के दबाव से देखते-देखते उस डमरू के दोनों ओर दो कान गढ़ डाला उस ने। बीच में लम्बा चिपटा मुँह, पीछे ऐंठी हुई पूँछ, नीचे चार पैर। सब कुछ मिला कर बन गया एक घोड़ा। पास के सब लम्बे पीढ़े के ऊपर एक के बाद एक कर के पक्षिराज गरुड़ की वाहिनी सजा कर रखी जा रही थी।

बूढ़े कुम्हार के घर के सामने ही रास्ते पर ब्राह्मण की लड़की कुसुम का घर। अपने छप्पर के घर के बरामदे में बैठी लालटेन के प्रकाश में चटाई बुनते-बुनते बूढ़े कुम्हार के साथ गप्प मार रही थी। लड़की कम उम्र की थी, लावण्यमयी भी, लेकिन अभागिन। आगे-पीछे कोई नहीं, बस आवारा पति। चटाई बुनना ही उस की जीविका थी। रोज़ ही ऐसी बातचीत होती रहती—सुख-दुख की बात, दो-चार हँसी की भी बातें। एकाध दिन बूढ़ा कुम्हार दूसरी कहानियाँ भी सुनाता, काम करते-करते कुसुम हूँ-हाँ करती जाती। बूढ़े कुम्हार के रुक जाने पर वह कहती—उस के बाद?

पाल कहता—इस के बाद बक-बक कर के बूढ़े का गला सूख उठता, तम्बाकू पीने की इच्छा होती उसकी—लेकिन नातिन यह सब नहीं गढ़ पाती।

नातिन कौतुक से हँस उठती।

उस तरफ़ बनिये की दुकान पर एक रुपये को ठोक-बजा कर देखा जा रहा था। खरीदारों की भीड़ मे पता नही कब किसने ठगा था बनिये को। पास के दुकानदारों में से कोई कहता था चलेगा, कोई कहता था नही चलेगा। बनिया बार-बार रुपये को पटक कर आवाज़ बढ़ाना चाह रहा था, लेकिन उस से टन् की आवाज़ नही आ पा रही थी।

पास के दुकानदार बीडीवाले छक्कू के बाप द्विजदास ने कहा—पटकने पर चीख पैदा होती है भाई, स्वर नही निकलता। तुम उस रुपये को गगा जी के नाम मे खर्च खाते दिखा कर हाथ धो लो।

द्विजदास की बात बनिये को अच्छी नही लगी। वह अपने ही आप उस ठगने वाले को गाली दे उठा—किस साले ने गगा के तीर पर आ ऐसा पाप किया पुण्य करने आ कर भी।

द्विजदास ने चटखारा ले कर कहा—फल तो उसे हाथों हाथ मिल गया। इस रुपये का सोलहो आने ही उस का लाभ है।

उधर कान देने से दुख का बोझ भारी हो उठता। बनिया शाप देता हुआ सा कह रहा था—जा, जा, गगा के तीर पर जैसे तू ठगा है, वैसे ही नरक मे जायेगा तू। मेरा तो खैर सोलह आना गया। फिर एक क्षण बाद उस ने कहा—बारह आने मे तो चल ही जायेगा, रानी मार्का है। क्यों दास, क्या राय है तुम्हारी?

दास हँसा चुप मे। उस के साथ भी उस दिन ठीक ऐसा ही हुआ था।

बदरोयँ आसमान की छाती से ले कर माटी की गोद तक एक घना जमा हुआ अँधेरा। मृदुस्वरा गगा चाँदी के पत्तर सी चमचमा रही थी। घाट के ऊपर पीपल के प्राचीन वृक्ष के किसी कोटर में बैठा हुआ एक उल्लू चीख रहा था। उस की तीक्ष्ण बोली से सर्वांग सिहर उठता!

गगा की मृदु ध्वनि के ऊपर कभी-कभी पतवारें छप्-छप् करती कोई नौका कटरा बाजार की ओर चली जाती। नौका के भीतर की क्षीण प्रकाश-रेखा मे गगा के वक्षस्थल पर तरग खचित प्रतिच्छवि दीख पड़ती। दूर श्मशान घाट से आवाज़ सुनाई पड़ती—बोलो हरि, हरि बोल, बोलो!

बनिया बोला—दास, एक दूसरा नम्बर आया!

गम्भीर हो कर दास ने कहा—हिसाब की वही कहाँ है रे छक्कू ?

छक्कू ने अपने बाप के हाथ में हिसाब-वही दे दी। हिसाब-वही ले कर दास श्मशान की ओर चला गया।

श्मशान घाट इस बार द्विजदास ने ठेके पर लिया है। जमींदार को वार्षिक चन्दा देना पड़ता है ग्यारह सौ रुपये। प्रति मुरदे पीछे वह दो रुपया एक आना लेता है।

बनिये ने कहा—तुम लोगों का भाग्य अच्छा है छक्कू ! इस बार खूब आ रहे हैं मुरदे।

यह बात छक्कू को उतनी भली नहीं लगी। उस ने बिना जवाब दिये ही बीड़ी के बण्डल इधर-उधर सरकाना शुरू कर दिया। उधर बूढ़ा कुम्हार घोड़े की पूँछ टेढ़ी करता कह रहा था—आजकल सब कुछ उलटा हो चला है, जानती हो—

जिन के पास नहीं है धन वह चैन से सोता,
जो धनवान, चिन्ता उस को रात सदा जगता।

कहानी चल रही थी डकैती की। धागे के बीचोबीच चटाई की पत्तियाँ बुनते-बुनते कुसुम ने हँस कर कहा—तब तो रात को तुम्हें नींद नहीं होती पाल ?

पाल के जवाब देने के पूर्व ही मैले-कुचैले चीथड़े लपेटे हुए अन्धकार में से केनाराम चटर्जी टपक पड़ा दुकान के सामने—क्यों री, किसे नींद नहीं आती ?

पाल कह उठा—नतिदामाद अरे ! आओ, आओ ! कब आये बेटा ?

कुसुम ने घूँघट खींच लिया। केनाराम ही कुसुम का पति है। एक ही गाँव में ही विवाह हुआ है। लेकिन केनाराम किसी से एक कौड़ी उधार नहीं लेता। बन्धन-विहीन मुक्त, स्वच्छन्द मस्तमौला है यह। माँ नहीं, बाप नहीं। बन्धन में है बिचारी कुसुम—वह बन्धन भी तोड़ फेंका है केनाराम ने। पहले तो वह घर में रहता भी था, तब तो सचमुच ही एक बन्धन था—तीन-चार साल की लड़की थी सन्ध्यामणि। तीन महीने हुए वह लड़की चल बसी, तब से सब कुछ छोड़ दिया है। इस मुहल्ले में वह खूब आता-

जाता भी नहीं, एक भी बात कुसुम को नहीं कहता। कुसुम भी उसे कुछ नहीं कहती। कहाँ जाता है—दस दिन-बीस दिन कहाँ रहता है, फिर एक दिन आता है।

पाल की उस आवभगत पर चटर्जी ने ज़रा भी कान नहीं दिया। किसे नींद नहीं आती—इसे ले कर उस ने सिर भी नहीं खपाया। उधर काली की दुकान पर उस की नज़र पड़ी, काली को देख कर उस ने कहा —अरे काली, तू! तू कब लौटा मेले से? एँ?

दो डग आगे बढ़, काली के दुकान पर बैठ कर, उस ने फिर पूछा— इस के बाद कह—हाँ, मेला कैसा लगा? अरे, बीड़ी तो ज़रा दे, भाई!

ख़ुद ही उस ने बीड़ी-माचिस उठा ली।

काली ने संक्षेप में कहा—ख़ूब मज़ेदार है मेला, भीड़ भी है काफ़ी, ख़रीद-बेच भी ख़ूब है।

ब्राह्मण ने सद्यः बीड़ी सुलगायी थी, उस के मुँह में काफ़ी धुआँ भरा हुआ था। काठ की आलमारी में सिगरेट के ख़ाली डिब्बे सजाते-सजाते काली ने कहा—इस बार वहाँ मेले में पतुरियों को नहीं बैठने दिया, सभी को भगा दिया।

चटर्जी के मुँह का धुआँ हठात् हुश् शब्द के साथ बाहर हो उठा, वह बोला—यह कैसे रे? किस ने भगा दिया?

—सरकार की ओर से साहब आये थे। चौबीसों घण्टे दारोग़ा और पुलिस तैनात थे। उन्होंने ही भगा दिया। ओह, दारोग़ा कितना मोटा था, ठीक जैसे गगा का सोईस, समझा रे छक्कू।

केनाराम चुपचाप पता नहीं क्या सोच रहा था, हठात् उस ने कहा— भगा दिया? क्या हुआ उन का, रे काली?

उस तरफ़ पाल की आवाज़ सुनाई पड़ी—अरे मतनी, कहाँ चली इतने सवेरे?

कुसुम की ओर से कोई उत्तर नहीं। ठीक इसी समय सारा बाज़ार कुछ क्षणों के लिए निस्तब्ध सा हो उठा। ऐसा भी कभी-कभी होता है—

-बहुत-से लोगों और शोर-शराबे के बीच भी यकायक एक निस्तब्ध क्षण आ जाता है।

चाटुज्जे[1] ने सर्वप्रथम नीरवता भंग करते हुए प्रश्न किया—वे बहुत गरीब हैं न रे काली?

काली ने नीचे मुँह किये कहा—बहुत।

उस ओर से छक्कू ने आवाज दी—यात्रा करना होगा चाटुज्जे मोशाय—हम लोगों ने यात्रा-दल सगठित किया है।

चाटुज्जे चुप रहा।

छक्कू ने फिर कहा—सुन रहे हैं ब्राह्मण देवता?

नाराज हो कर चाटुज्जे गंगा घाट की ओर चला गया अँधेरे में।

काली ने हँस कर कहा—उन स्त्रियों के बारे में सोच रहा होगा।

एक संकेत करते हुए छक्कू ने कहा—अपनी बीवी की बात कौन सोचता है!

धीरे से काली ने कहा—क्यों, पास दादा तो हैं!

दोनों जन हँस पड़े।

चाटुज्जे उसी समय फिरा। गाल पर हाथ रख कर चिन्ताकुल स्वर में उस ने कहा—उन औरतों का अन्त में फिर क्या हुआ रे, काली?

—अरे भाई, उसी जगह बेचारी सब बिना खाये-पिये सूख कर...

छक्कू ने बीच में ही बात काट कर कहा—नहीं ब्राह्मण देवता, बेकार की बातें क्यों सुनते हैं? उन सब को भाड़ा दे कर उन के घर पहुँचवा दिया है।

चाटुज्जे गद्गद हो उठा। उस ने कहा—बहुत अच्छा हुआ है। साहब का दिमाग है न भाई!—इस के बाद रुक कर कहा—हाँ, तू न जाने क्या कह रहा था छक्कू?

हम लोगों ने यात्रा-दल गठित किया है। हरिश्चन्द्र का श्मशान में

---

१ बोलचाल में चटर्जी को चाटुज्जे (चट्टोपाध्याय, मजूमदार) कहते हैं बंगाल में।
—अनुवादक

शैव्या से मिलन का पार्ट होगा—लेकिन तुम्हे हरिश्चन्द्र का पार्ट करना होगा।

ऐसे ही अपनी देह पर का कपड़ा कमर मे लपेट कर चाटुज्जे ने कहा —हरिश्चन्द्र तो मैं यूं ही हूं रे, देखेगा ?—शैव्या, शैव्या ! रोहिताश्व ! रोहिताश्व !! लेकिन नगे बदन जाडा लगता है रे !

—अरे, बाभन को जाडा, अरे जिस के मुंह की फूंक से आग जलती है वह ! लेकिन बाभनदेवता ! इस बोली से तो नही चलेगा, किताब की बोली का अभ्यास करना होगा। यह देखो, पुस्तक ख़रीदी है।

शंकित दृष्टि से एक बार चाटुज्जे ने छक्कू की ओर ताका। इस के बाद तनिक हँस कर कहा—सच कह रहा है रे छक्कू ?

—कब तुम से झूठ कहा है, ज़रा बताओ तो ?

—दे, ज़रा किताब दे तो अपनी। क्या बोलना होगा ज़रा देखूं।

छक्कू ने उसे किताब थमा दी। किताब लेते ही चाटुज्जे ने भाषण आरम्भ कर दिया—रानी, रानी, तुम तो कोमल शैय्या के अतिरिक्त कहीं नही सो सकी, उफ़ ! आह ! बेटे रोहिताश्व ! ओ मेरे लाल (रोहित का गला अपनी बांहो मे जकड कर)—

उस तरफ काली ने मुंह बना कर चिढाते हुए कहा—बाप रे बाप युधिष्ठिर ! हनुमान् केला खाने लगे !!

इस मजाक को चाटुज्जे समझ गया। किताब को छक्कू की दुकान पर फेंक कर क्रोध से उस ने कहा—देख रे कलिया ! तेरे पास मान लिया कि पैसे हो गये है, इस का मतलब यह तो नही कि छोटे-बडे का विचार नही करेगा !

काली इस से भी नहीं दबा, अग-भंगी करते हुए उस ने कहा—वन मॉर्न आइ मेट् ए लेम मैन इन ए लेन क्लोज़्ड टु माई फार्म !

अंगरेजी की बात आते ही चाटुज्जे दम्भ सहित इस के आगे-पीछे की पंक्तियाँ झर-झर सुना गया।

चाटुज्जे ने क्रोध मे झुलसते हुए कहा—मैं यदि ब्राह्मण हूँ तो तेरा—क्या होगा, जानते हो ?

—क्या होगा जरा बताओ तो?

कई क्षण सोचने के बाद चाटुज्जे ने कहा—नहीं जानता, जा, जा, चला जा। फिर चाटुज्जे वहाँ नहीं रहा। दनदनाता गंगा घाट की ओर चला गया। काली का मजाक उस के कलेजे को बेध गया था। जाते-जाते एक लम्बी साँस ले कर अपने मन में ही कहा उस ने—जा, तू ने जो कहा सो कहा, मैं श्राप नहीं दूँगा तुझे। बड़ी बुरी मौत मरता नहीं तो।

बूढ़े पाल की बैठक में तब कहानी का दौर जम चुका था। कुसुम कब से आ कर वहाँ खड़ी थी, किसी ने नहीं देखा। कहानी सुनाते-सुनाते हठात् उसे देख कर पाल ने कहा—अरी मालिन, आओ, आओ। रात अधिक नहीं हुई है। बिना तुम्हारे तो बैठक ही नहीं जम रही है।

कुछ भरी-सी आवाज में कुसुम बोली—नहीं, तबियत बहुत ठीक नहीं है मेरी। फिर अनावश्यक भाव से सफाई देते हुए कुसुम ने कहा—दीया फिर बुझ गया, तेल लेती आऊँ।

बुझी हुई लालटेन ले कर वह घाट के पास वाली बनिये की दुकान पर चली गयी। दबे स्वर में छक्कू ने काली से कहा—तबियत ठीक नहीं है! चाटुज्जे आज इस मुहल्ले में आया है न, इसी से!

काली ने गरदन हिला कर स्वीकृति दी। दुकान पर लालटेन रख कर कुसुम ने कहा—एक पैसे का तेल भर दो तो!

बनिये ने डण्डीदार कटोरीनुमा नपनी से तेल भरते-भरते कहा—तेल तो है इस में!

कुसुम गंगा-घाट की ओर मुँह किये खड़ी रही, उस ने कोई भी जवाब नहीं दिया।

लालटेन की ढँनी बन्द करते-करते बनिये ने कहा—बत्ती जला दूँ बहू जी?

अचकचा कर कुसुम ने कहा—हूँ?

—बत्ती जला दूँ?

—नहीं, रहने दो, घर पर मैं जला लूँगी। लालटेन ले कर कुसुम चली गयी।

पाल की बैठक में तब घोड़ा आकाश में उड़ रहा था। चाटुज्जे घाट से लौट कर वहीं आ खड़ा हुआ।

छक्कू ने उसे बुला कर कहा—उठ कर बैठ जाइए चाटुज्जे मोशाय, क्रोध किया है क्या?

चाटुज्जे ने कहा—नहीं, अब और नहीं बैठूंगा। उस मुहल्ले में जा रहा हूँ।

तब पाल कह रहा था—पक्षिराज की पीठ पर राजकुमार चढ़े और सन्-सन् करता हुआ पक्षिराज आकाश में उड़ चला।

चाटुज्जे का जाना ठप्प हो गया। उसी क्षण पाल की दुकान में घुस कर विरोध करते हुए उस ने कहा—इस बूढ़ी उमर में गंगा के किनारे बैठ कर इतनी झूठी बातें क्यों करते हो? सन्-सन् करता हुआ आकाश में उड़ा! घोड़ा आकाश में उड़ता है?

घोड़े का कान गढ़ते-गढ़ते पाल ने हँस कर कहा—आओ—आओ भाई, नतजमाई आओ। दे रे दे, मोढा दे बैठने को। यह लो तम्बाकू पिओ!

चाटुज्जे मोढ़े पर बैठा। ब्राह्मण के हुक्के में नलकी लगा कर चाटुज्जे को थमाते हुए पाल ने कहा—तब भला कहानी किसे कहते हैं?

हुक्का पीते-पीते चाटुज्जे ने कहा—इस का मतलब तो यह नहीं कि सब झूठी बातें बोलो।

धागे से बँधी कमानीदार चश्मे से चाटुज्जे की ओर ताक कर बूढ़े ने कहा—जितने नाती-नातिन हैं, सभी आ कर मुझे पकड़ते हैं, क्या करूँ, बताओ?

—तब तुम जितना चाहो—झूठ बोलो, पेट भर कर झूठ बोलो। हुँः, घोड़ा कहीं आसमान में उड़ता है!

कहानी आगे बढ़ी—प्रवालद्वीप के ऊँचे महल का कँगूरा दिखाई पड़ रहा है, राजकुमारी के मुक्त केश वायु में लहर रहे हैं। कमल-फूलों से सुवासित जल में स्नान किया है उस ने, उस के केशों में कमल-वन की गन्ध महमहाती है, उसी सौरभ से आकृष्ट हो कर मधुमक्खियाँ उस के चारों

और भिनभनाती हुई उड़ रही है। वह सुगन्ध राजकुमार के हृदय को स्पर्श कर गयी। सौरभ-मत्त राजकुमार कहते हैं—और तेज पक्षिराज ! और तेज !

यकायक बूढ़ी हलवाइन की हँसी से बाधा पड़ी—अरी मेरी माँ, यह कौन है री ! ई-हिः-हिः हिः-हि-हि-हि-ही—कौन गुदगुदा रहा है यह !

जो गुदगुदा रहा था, उस की भी आहट आयी—कँउ-कूँ-कूँ-कूँ-कूँ-कँ-ऊ कूँ ऊँ...

एक कुत्ते का पिल्ला था ! पता नहीं कहाँ से आ कर बुढ़िया की पीठ चाटना शुरू कर दिया था !

बुढ़िया तो जल-भुन कर खाक ! बोली, अरे मुँहझौंसा कुक्कुर ! मर मर मुहफुँकना !! मैं भी सोचती थी कि कौन गुदगुदा रहा है ? मार झाड़ू से, झाड़ू से मार।

कहानी छोड़ कर हैरान-परेशान-से पाल ने कहा—भगाओ, भगाओ ! दुकान में अगर घुस गया तो सत्यानाश कर देगा, सब कुछ तोड़-फोड़ देगा। अरे लाठी कहाँ है, लाठी है कहाँ ?

बुढ़िया खोज रही थी झाड़ू, पाल खोज रहा था लाठी। चाटुज्जे ने जल्दी से हुक्का नीचे रख कर पिल्ले को अपनी गोद में उठा लिया। इस के बाद उजाले में उसे उलट-पुलट कर देखने पर कहा—अरे तू कहाँ से आ गया ? यह तो श्मशान भैरवी का बच्चा है अरे मोटू ! यहाँ क्यों आ गया बेटा श्मशान छोड़ कर ? चल अभागे, तुझे तेरी माँ के यहाँ दे आऊँ ! सब गड़बड़-सड़बड़ करता है, हुँः—चाटुज्जे उठ पड़ा।

पाल ने कहा—सुनो, सुनो, जाना मत। बुला रही है, तुम्हें बुला रही है।

सामने ही कुसुम का खुला हुआ दरवाज़ा। दीपक जलता हुआ। दरवाज़े के फ़र्श पर कुसुम खड़ी थी। चाटुज्जे ने उधर फिर कर भी नहीं ताका। पिल्ले को गोद में ले कर अन्धकार में एकाकार हो गया।

पाल ने कहा—तुम्हारी तबियत ठीक नहीं है, दरवाज़ा बन्द कर के सो जाओ मालिन !

कुसुम तब तक दीया लिये हुए बाहर ही आ गयी। बरामदे मे चटाई बुनने का उपक्रम कर रही थी वह।

—तुम्हारी तबियत खराब है, तुम ने कहा था न नातिन?

कुसुम नीचे मुंह किये हुए बोली—इसे कल ही देना होगा जो दद्दू! ग़रीब की तबियत ख़राब हो तो भला कैसे चलेगा? बोलो। हाँ, तुम अपनी कहानी सुनाओ न, काम भी होगा और कहानी भी सुनूंगी।

पता नही किस ने कहा—क्या कर गया बाभन यह।

पाल के लड़के सिरिचरन ने कहा—जैसे सोने की सूरत!

किसी दूसरे ने कहा—चाटुज्जे तो भला-चंगा ठीक ही था। लड़की के मर जाने के बाद···

यह प्रसंग बदल कर पाल ने ऊँची आवाज में कहा—चुप, चुप, चुप रहो। हाँ, कहानी सुनो—घोड़ा उडते-उडते उस प्रवाल-द्वीप के महल के छत पर पहुँच गया। उस के पैर छत छूते ही···

—हरि बोल, बोलो हरि।—इस शोर-शराबे के बीच पाल की कहानी दब गयी। श्मशान-घाट से यह ध्वनि आ रही थी।

गंगा-किनारे के घने वन के पास से ही पश्चिमी तट की ओर पतली सी पगडंडी है। गगा के ही साथ-साथ यह रास्ता भी समानान्तर चला गया है। नहान-घाट के उत्तर कुछ दूर पर एक आदमी के चलने भर का ही एक पतला रास्ता गंगा जी के भीतर की ओर चला गया है। इस के दोनों ही तरफ़ जंगल। बडे-बड़े पेडों की डालियाँ आकाश को छाये हुए हैं। एक उत्कट सी तीव्र गन्ध से यह वातावरण भरा हुआ है। यहाँ आते ही हृदय मरोड़ खा उठता है!

जले हुए मनुष्य-शरीर की गन्ध!

यही है श्मशान-घाट!!

चाटुज्जे ऊपर से उतर इसी रास्ते की ओर चला। थोड़ी देर आगे पर ही चौरस जमीन है। एक ओर बाँसों का जजाल है, पास मे ही ताड़ के पत्ते से बुनी चटाइयाँ और कुछ खटिया भी हैं। यहाँ-वहाँ दो-चार खोपड़ियाँ भी पड़ी हुई हैं, हड्डियो के टुकड़ो से तो जमीन भरी हुई है।

जरा सा आगे बढ़ने पर चाटुज्जे एक टूटे-फूटे टिन के छप्पर में जा घुसा। इस छप्पर के उत्तर तरफ मैले-कुचैले फटे बिछौनों का स्तूप सा। बीच में एक बड़ी सी दहकती धूनी। धूनी के पास ही एक चारपाई पर बिछौना बिछा हुआ, छप्पर की कड़ी में से झूलते हुए तार पर एक लालटेन भुक्-भुक् कर के जलती हुई। पश्चिम की ओर बाँस की चटाई से तैयार किया हुआ एक घर।

नीचे गंगा की ढालू रेती पर कई अगार-पुंज धक्-धक् करते हुए जल रहे थे—लपटें शान्त थीं—पर आग दह-दह दहक रही थी। मनुष्य-देह को खा कर भी जैसे यह अग्नि तृप्त नहीं हुई—अभी भी हो-हो कर के चीख़ रही थी! एक नयी चिता में अग्नि दी गयी है। आग की लपटें आस-पास उझक कर झाँक रही थीं—उस लपट के प्रकाश में राशीकृत धुआँ ऊपर-नीचे कुण्डली मारता हुआ दिखाई पड़ रहा था। चिता पर एक शिशु-देह—दस-ग्यारह वर्ष की बच्ची! छोटे-छोटे केश झूल गये थे—कुछ जल चुके थे—कुछ जलने को बाक़ी थे। एक काठ उस शव की छाती पर भी रखा था। शव के पैर की तरफ़ एक आदमी बाँस की लाठी के सहारे खड़ा हो गंगा जी की ओर ताकता हुआ। अल्हड़ जवान, कसौटी पाथर सा रंग। घुँघराले लम्बे केश आग से दहकती वायु के कारण धीरे-धीरे हिल रहे थे।

यह था श्मशान-प्रहरी चाण्डाल!

चाटुज्जे ने पुकारा—पैंह!

घूम कर पैंह ने आदरसहित कहा—'परनाम'—देवता महाराज! आइए, आइए। कब आये आप?

—इसी दोपहर को रे। और सब बता? ठीक से है तो तू?

—आप की 'किरपा' है महाराज!

—लड़के-बच्चे तेरे?

—सभी अच्छी तरह हैं देवता!

कपड़े से ढँके हुए पिल्ले को बाहर करते हुए चाटुज्जे ने कहा—अरे, तुम्हारा यह मुटल्ला पिल्ला बाज़ार में चला गया था। बस ज़रा सी देर में सियार उसे गड़प कर जाता।—ऊँची आवाज़ में चाटुज्जे ने पुकारा—भैरवी! भैरवी! कल्लू!! कल्लू!! महादेव!! साथ हो साथ पास के घर

से एक झुण्ड कुत्ते पूँछ हिलाते हुए चाटुज्जे को घेर कर खड़े हो गये। एक तो चित हो कर अपने पंजे से चाटुज्जे के पैर खरोचने लगा।

अपनी गोद से पिल्ले को उतार दिया चाटुज्जे ने, वह भी पूँछ हिलाने लगा। उन कुत्तो मे से भैरवी नामक कुतिया के कान मलते हुए चाटुज्जे ने कहा—माँ हो कर भी बेटे की खोज-खबर नही रखती हरामजादी !

भैरवी कातर भाव से कूँ-कूँ करने लगी। मानो अपनी ग़लती के लिए क्षमा चाह रही हो।

चाटुज्जे ने हाथ हिलाते हुए इशारा किया—जाओ, भाग जाओ सभी, बड़ा गुमान हो गया है न ? जा, जा, भाग जा।

कुत्तों का झुण्ड तब भी नहीं हिला।

पैंरू हँसा। हठात् सारे कुत्ते भों-भों करते हुए जगल की ओर दौड़ पड़े। इस के बाद ही सियारों की कर्कश ध्वनि सुनाई पडी—हुआँ-हुआँ। भीतर खाट पर कोई जैसे हिला-डुला। कम्बल के भीतर से एक बच्चे का मुँह दिखाई पड़ा, जो रोते-रोते पुकार रहा था—बाबू-ए बाबू, बाबू हे !

पैंरू ने कहा—आया री बिटिया, आया, सो जा री बेटी !

बच्ची ने फिर मुँह छिपा लिया।

चाटुज्जे ने कहा—तेरी वही बेटी है न पैंरू !

—हाँ, महाराज, आज मुझे किसी तरह भी नही छोड़ा इस ने।

चिता जल रही थी लपलपाती हुई चट्-चट् करती। हाथ-मुँह धो कर पैंरू ऊपर आया, उस ने बच्ची को प्यार से कम्बल उढ़ा दिया। उस के बाद बच्ची के केशों को सुलझा कर सहलाता हुआ कहने लगा—मेरी बेटी बहुत अच्छी है देवता, मुझे बड़ा प्यार करती है।

चाटुज्जे चिता की ओर ताक रहा था, उस ने कोई जवाब नही दिया। बीड़ी निकाल कर पैंरू बोला—बीड़ी पियेंगे महाराज ?

चिता की अग्नि की ओर देखते हुए ही चाटुज्जे ने कहा—दे।

धूनी की आग में बीड़ी सुलगा कर चाटुज्जे चिता की ही ओर ताकता रहा।

पैंरू बोला—थोड़ा बैठेंगे महाराज ?

—हूँ !

—तब जरा बैठिए, मैं खा लूं।

पैरू एक झाड़ू ले कर उन कुत्तों के घर में घुसा। चारों ओर गन्दगी। एक कोने में झाड़ू लगा कर, पानी छिड़क दिया उस ने। उसी जगह, चौड़े मुंह के बरतन में ढंके भोजन को ले कर, खाने बैठ गया वह।

इस ओर लपलपाती चिता-ज्वाल शान्त होती जा रही थी।

चाटुज्जे ने कहा—चिता तो बुझने को आयी पैरू, अंगारे झाड़ देने होंगे न।

पैरू ने खाते-खाते कहा—मैं आ रहा हूँ महाराज!

—तेरे खा कर उठने में कितनी देर है?

—थोड़ी देर तो है पर मैं ही जाता हूँ।

—रहने दे, तू खा, मैं ही झाड़ देता हूँ।

कपड़ा ठीक करते-करते चाटुज्जे नीचे उतर गया।

पैरू भागता हुआ आया और कहने लगा—नहीं, नहीं देवता, तुम घर जाओ। जाड़े की रात है। फिर 'अस्नान' करना होगा।

अधजले मुरदे को हिलाते हुए चाटुज्जे ने कहा—तेरी इसी धूनी के पास सोऊंगा आज।

दुखित हो कर पैरू ने कहा—नहीं, नहीं, देवता! ई सब तो चाण्डाल के काम है। हम के पाप पड़ी हे देवता!

—अरे, धत्! शिव स्वयं ही यह काम करते हैं, जानता भी है? तुम लोग शिव के वाहन नन्दी की सन्तान हो।

पैरू घर में घुसा गया। बाहर के ऊपरी रास्ते से पता नहीं किस ने आवाज दी उसे—पै-ए-रू-ऊ!

जल्दी से बाहर आया पैरू, पुकारने वाले को देख कर अपराधी सा ही कहा पैरू ने—माई जी!

रास्ते पर कुसुम खड़ी थी।

कुसुम बोली—एक बार बुला दो पैरू!

पैरू ने जोर से आवाज दी—महाराज! महाराज!! हे देवता!!!

महाराज तब चिताग्नि को प्रज्वलित करते-करते स्वगत-भाषण कर रहे थे—गैय्या! गैय्या!!

पैरू फिर चिल्लाया—अरे हे-ए देवता ऽ !

चिता चट्-चट् कर के जल रही थी। उसी लेलिह्यमान शिखा की ओर देख कर चाटुज्जे ने परम आनन्द से कहा—देख ले बेटा, देख ले, इसे कहते हैं चिता ! जानता है रे पैरू, ऐसी चिता यदि दिन-रात लगातार जलती रहे तो आधी रात को श्मशान-काली को आना पड़ेगा। यह एक यज्ञ है रे ! पैरू फिर पुकारने जा रहा था, लेकिन कुसुम ने उसे रोकते हुए कहा—रहने दे पैरू ! मैं भोजन दिये जाती हूँ, तुम खा लेना, यह मत बता देना कि मैं दे गयी हूँ।

एक हाथ से छप्पर का एक कोना पोछ दिया कुसुम ने। इस के बाद आँचल से ढँके भोजन और पानी भरे लोटे को वहीं रख कर वह बाहर आ गयी। पीछे से पैरू ने कहा—साथ में हमहूँ चली माई जी !

कुसुम तनिक हँसी, फिर बोली—नहीं भाई, तुम जाओ, किसी तरह से उसे खिला देना। मैं अकेली ही जा सकती हूँ।

घोर अन्धकार में कुसुम विलीन हो गयी।

एक लम्बी साँस ले कर पैरू लौटा।

चिता की आग को हिलाते-डुलाते चाटुज्जे ने कहा—क्या ?

—हाथ-मुँह धोइए, खूब जल रही है चिता।

—तू ने खा लिया ?

—हाँ, आप जल्दी आइए। फेंकिए, बाँस फेंकिए ! पैरू की आवाज में एक दृढ़ता थी। चाटुज्जे उस के अनुरोध की अपेक्षा नहीं कर सका।

इशारे से भोजन दिखा कर पैरू ने कहा—भोजन करिए। किसान के उस छोकरे को भेज कर मँगवाया है मैं ने।

पैरू के मुँह की ओर ताक कर चाटुज्जे ने कहा—कुसुम दे गयी न पैरू ?

—हाँ, एतनी रात में माई जी अइहैं न इहाँ ?

एक ठण्डी साँस ले कर चाटुज्जे खाने बैठ गया।

खाते-खाते उस ने कहा—सचमुच ही बड़ी भूख लगी थी रे पैरू ! तुझे मैं इसी लिए इतना प्यार करता हूँ रे !

पैरू चुप रहा। वह माई जी की बात सोच रहा था। श्मशान का डोम

है वह, दुख-वेदना का उच्छ्वास उस ने बहुत देखा है, कलेजे को छू देने वाली रुलाई उस ने सुनी है बहुत पर दुख का इतना नीरव प्रकाश उस ने कहीं नहीं देखा।

चाटुज्जे मन ही मन जैसे अपने से ही कह रहा था—बोल रे पैरू—मुझे कोई प्यार करता है—तेरे अलावा ?

पैरू के मन में आया कि वह कहे कि जिस दिन माई जी चिता पर चढ़ेंगी, उस दिन शायद हृदय में संचित मेरे रुदन से चिता भी नहीं जलेगी, चिता बुझ जायेगी। चाटुज्जे ने कहा—कुसुम भी मुझे प्यार करती है पैरू, लेकिन···

उस ने अपनी बात पूरी नहीं की।

पैरू ने व्यग्र सा हो कर पूछा—क्या कह रहे थे महाराज जी ?

चाटुज्जे चुप रहा।

पैरू ने आवाज दी—देवता !

चाटुज्जे ने मुंह उठा कर ताका। चिता के प्रदीप्त आलोक में पैरू ने देखा कि चाटुज्जे की आंखों से आंसू की धारा बह रही है। हक्का-बक्का सा हो कर चाटुज्जे ने कहा—लड़की की याद आ गयी पैरू ! कुसुम की बातचीत होते ही मुझे बच्ची की याद आ जाती है। जानता है रे पैरू, कुसुम की ओर ताकने पर मुझे रुलाई आ जाती है। मेरी हीरे जैसी बिटिया सन्ध्यामणि का मुखड़ा उस के चेहरे में तैरता रहता है।

पैरू की आंखों में भी आंसू उमड़ चले। चाटुज्जे ने फिर कहा—लेकिन जानता है पैरू, बिटिया मणि के लिए उसे ज़रा भी दुःख नहीं हुआ, उस के लिए वह रोती भी नहीं।

पैरू ने बीच में रोक कर कहा—ऐसा मत कहो, देवता, माई जी की रुलाई से तो गंगा में बाढ़ आ गयी। तुम्हें आंख नहीं है क्या ?

चकित हो कर चाटुज्जे ने पैरू के मुंह की ओर देखा—सच पैरू ?

दृढ़ स्वर में पैरू ने कहा—सामने यह गंगा जी जैसी सच है महाराज, वैसी ही सच्ची बात है यह। अगर झूठ हो तो मेरे सिर पर 'बज्जर' गिरे देवता !

थोड़ी देर बाद चाटुज्जे ने धीरे-धीरे कहा—लोग कितनी ही बातें

करते हैं उस बूढ़े पाल को ले कर, लेकिन वह झूठ है, मैं जानता हूँ। लेकिन बिटिया के लिए कुसुम रोती है ? सारे दिन ही तो वह चटाई बुनती रहती है, दिन-रात बस पैसा-पैसा !

पैरू ने इस बात का जवाब नहीं दिया।

सहसा जैसे चुप्पी को तोड़ कर एक कोलाहल उभरा—बोलो हरि, हरि, बो-लो-। कोई नया महापथ-यात्री आ गया।

उस कोलाहल की गूँज जगल मे, गंगा के तीरवर्ती प्रदेश में घुल-मिल गयी। स्यारों का दल हुआँ-हुआँ कर उठा। पेड़ों पर गिद्धों के झुण्ड अपने डैने फड़फड़ाते हुए बैठ गये।

उस टिन की झोपडी मे बैठे हुए दोनो ही जने उठ खड़े हुए। हाथ-मुँह धो कर चाटुज्जे ने बीड़ी सुलगायी, पैरू मुरदे के लिए लकडी जुटाने नीचे चला गया। मुरदे के ऊपर-नीचे का बिछौना-कपडा तह कर के नीचे रख दिया पैरू ने, फिर मुरदे के पैरों की ओर खडा हुआ वह। एक बाँस पर भार दे कर गंगा जी की ओर मुँह किये खडा हो गया पैरू।

—पैरू !—चाटुज्जे वापस आ बोला।

—महाराज !

चिता जल उठी धू-धू कर के। पैरू ऊपर चला आया।

चाटुज्जे ने धीरे से कहा—पैरू !

—महाराज !

—कुसुम रो रही है। मैं खुद जा कर सुन आया हूँ गुप-चुप।

चिता की प्रज्वलित अग्नि मे पैरू का मुँह दिखाई पड़ रहा था—प्रसन्नता से वह मुख दीप्त था। पैरू ने कहा—गगा मइया सच है देवता, झूठ तो नहीं !—धूनी के पास एक कम्बल बिछा कर चाटुज्जे वहीं लेट गया। चिता के बुझने की प्रतीक्षा में श्मशान की छाती पर चाण्डाल युवक पैरू जागता रहा।

सुबह होते ही स्नान-घाट का रूप एकदम पलट गया। बाजार में और घाट पर लोग जैसे अँट नहीं पाते अब। स्तुतियों और कीर्तनों की ध्वनि से पक्षियों का कलरव भी दब सा गया। गंगा जी के वक्ष पर नौकाओं का मेला लग गया। बड़ी-बड़ी महाजनी नावें, वजन के कारण रस्सी से खींच कर

ने जायी जा रही थी किनारे-किनारे। मल्लाहों की नावें केले के फूल के ऊपरी खोल की तरह इधर-उधर हिल-डुल रही थी एक निश्चित सीमा में। उस पार वाले घाट पर यात्रियों की भीड़, माल-लदी बैलगाड़ियों की पाँतें, गाय-भैंसों के झुण्ड। रास्ते के बगल में काने-लँगड़ों की पाँतें।

—अन्धे पर दया करो रानी बिटिया!

—लँगड़े को एक पैसा देते जाइए न!

एक बाऊलों की मण्डली दो बच्चों को राधा-कृष्ण के रूप में सजा कर भीख माँग रही थी। कुसुम भी उन के बीच दिखाई पड़ रही है। उस मुहल्ले की विश्वास की बहू और कुसुम के दूर के रिश्ते की मौसी—कुसुम को देखते ही बोली—बेटी कुसुम, कल ही सब कुछ सुना मैं ने। क्या करोगी बेटी, पेड़ पर सारे फूल तो नहीं रहते! बस यही समझो कि तुम्हारी नहीं थी वह।

कुसुम की आँखों से आँसू बहने लगे। आँसू पोंछ कर उसने कहा—वह मेरी ही थी, किसी दूसरे की नहीं हो सकती वह। देखना, वह फिर वापस आ जायेगी। वही मुखड़ा, वही आँखें, वैसी ही तोतली बातें ले कर जन्मेगी।

—वही हो बिटिया, आशीर्वाद करती हूँ मैं। तेरी वह खेलने गयी है, फिर तेरी गोद में आये।

स्नान-घाट के ऊपर बैठे हुए चाटुज्जे ने देखा कि पिछले साल में टूटे हुए बालू के कगार में नीचे एक रेती उठ आयी थी। उसे ही हल से जोत कर लहराती हुई फ़सल के रूप में बदल दिया गया था। कहीं-कहीं फूल भी दिखाई पड़ रहे थे। चाटुज्जे उठा और घर की ओर चल पड़ा।

द्विजदास की दुकान पर तब बहुत भीड़ थी, लेन-देन का हिसाब चल रहा था वहाँ। बनिए की दुकान पर उड़द या किसी और चीज़ का वज़न हो रहा था—रामे-राम-रामे-राम, राम दो-दो राम'''पास की दुकान पर रंग-बिरंगे खिलौनों की क़तारें। चाटुज्जे अपने दरवाज़े के पास पहुँचा। वहीं वह ठमक कर खड़ा हो गया। दरवाज़े के पास सन्ध्यामणि नामक फूल का छोटा पौधा फूलों से लदबदा गया था। कुसुम ने दूर ही से उसे देख लिया था। घर ही में से बोली वह—आओ।

चाटुज्जे अपराधी की तरह खड़ा ही रहा।

कुसुम ने फिर पुकारा—आओ !

सकोच से चाटुज्जे ने कहा—ज़रा तेल दो तो, पहले नहा लूं, रात को श्मशान में···

—ठीक है, कोई बात नही।—कुसुम बीच ही में बोली।

चाटुज्जे ने कहा—सन्ध्यामणि फूली है, बिटिया ने बोया था !

दुकान-दुकान पर आवाज़ें आ रही थी—

—तूफानी बीडी, मीठा पान !

—गगाफल लेती जायें माँ !

—खिलौने ले माँ, खिलौने।

कुसुम पनियारी आँखों प्रत्याशा से हँस कर बोली—वह फिर आयेगी।



मेला

उत्तर-दक्षिण लम्बी एक बावली के चारों ओर मेला लगा हुआ था। किसी पर्व के उपलक्ष्य में नहीं, किसी एक सिद्ध महापुरुष के महाप्रयाण की तिथि के ही कारण यह मेला था।

दुकानदार कहते हैं कि ये बड़े सिद्ध महात्मा थे। जो कुछ दुकान पर आता है बिक जाता है। किसी को कुछ भी वापस ले कर नहीं लौटना पड़ता।

बात सच है, किसी की कोई चीज़ नहीं फिरती और मेला देखने वालों के टेंट का पैसा भी वापस नहीं जाता। शिवड़ी का एक हलवाई तीन साल पहले ग्यारह सौ रुपये पा गया था, नफ़े के रूप में। शिवड़ी के दुकानदार के पास ही सामपुर की दो मिठाइयों की दुकान है। एक हरिहर की और दूसरी रामसिंह की। रामसिंह की दुकान के बाद ही पश्चिम ओर की दुकानें पूरब की क़तार की ओर मुड़ गयी हैं।

उत्तर की तरफ़ मनिहारी की दुकानों की पंक्तियाँ हैं। पहली दुकान घनश्याम घोष की है। घन्नू अपनी दुकान पर बैठा हुआ बीड़ी पी रहा था। ग्राहक तब जुटे नहीं थे। रामसिंह की दुकान तब तक ख़ूब चमक गयी थी। दुकान के ऊपर एक सुन्दर सी चाँदनी टँगी हुई थी। नीचे चौकी के ऊपर एक दरी बिछी हुई थी, उसी के ऊपर सीढ़ीनुमा आकार में बड़ी-बड़ी मिठाइयाँ सजायी गयी थीं। बर्फ़ियाँ ऐसे रखी हुई थीं जैसे

पत्थरों की कटी जाली, रंग-बिरंगी गाजा मिठाइयाँ जैसे चोटियों की तरह लग रही थीं। बड़े-बड़े खाजे सफ़ेद पत्थरों की तरह दिखाई पड रहे थे, सामने ही चौड़े बरतनों मे रसगुल्ले, खीरमोहन और गुलाबजामुनें तैर रही थीं। इस के आगे ठीक रास्ते के सामने लाई और चूड़े में गुड मिला कर एक तरह की मिठाई बनायी गयी थी जिसे 'ढूढा' कहते हैं।

बाजार के इस रास्ते पर दस-पाँच लोग आ-जा रहे थे। उन की उदासीनता से घनश्याम नाराज़ हो उठा। अधजली बीडी को फेंक कर रामसिंह के साथ उस ने बात शुरू कर दी।

—लगता है कि बिक्री जो कुछ भी होगी वह कल से शुरू होगी, तुम्हारी क्या राय है रामसिंह ?

रामदास ने कहा—शाम होते ही आदमी जुटेंगे, देखना इस बार ख़ूब जमघट होगी।

घनश्याम उत्साहित हो उठा, उसने कहा—मैं ने देखा है। इस बार एक सौ चौंतीस दुकानें आयी हैं, चार तो झूमुर (पतुरियों) के दल हैं। औरतें देखने-सुनने मे अच्छी है, चटक-मटकदार हैं।

सिंह ने भी हुँकारी भरी—हाँ, बीस-पचीस के भीतर ही इन की उमर होगी। चार-पाँच तो बहुत ख़ूबसूरत हैं।

घनश्याम ने गरदन हिला कर कहा—कमली और पटली नाम की जो दो हैं, उन्हें क्या देखा है तुम ने, बाप-रे-बाप क्या फ़ैशन है ? छोकरों की भीड़ लग गयी है उन के पास।···क्या चाहिए जी तुम्हें ?

एक मेला देखने वाला इसी बीच आ कर खडा हो गया था। उस ने चलना शुरू कर दिया।

सिंह ने कहा—कितने रुपये पर जुए का बोल हुआ है, जानते हो ?

उदास हो कर घनश्याम ने कहा—ऍं जुए की बोल ? पन्द्रह सौ रुपये।

—किस ने बोल लगाया ?

घनश्याम ने उत्तर नही दिया।

दस-ग्यारह साल का एक लडका दुकान के पास से हो कर जा रहा था। उस के पीछे एक छह-सात साल की चंचल लड़की भी थी। लड़की ने लड़के का हाथ पकड़ कर पीछे खींचा। लड़के ने कहा—क्या ?

घनश्याम की दुकान पर रस्सी मे झूलती हुई गुड्डे-गुड़ियाँ सजी हुई थी। यह एक मेम-खिलौना था, इस मे चाभी दे दी गयी थी और वह घूम रही थी। लड़की ने अँगुली से इशारा कर के उसे दिखाया। लड़के अपने पॉकिट में हाथ दे कर कहा—चली आ, चली आ, यह कुछ भी नही है।

घनश्याम ने उन्हें देख कर ही कहा—आ री लड़की, आ, खिलौना लेती जा।

साथ ही साथ उस ने चाभी दिया हुआ हवाई जहाज वाला खिलौना हिला दिया। चाभी के कारण टिन का प्रोपेलर फरफराने लगा। हवाई जहाज हिलता था इसलिए ऐसा लगा जैसे वह उड ही रहा हो। लड़की ने कहा—भइया ?

घनश्याम ने लड़के को पुकार कर कहा—आइए खोका बाबू, जहाज लेते जाइए। देखिए न, कैसा उड रहा है।

घनश्याम के बातचीत मे लड़का खुश हो उठा, उस ने पूछा—क्या दाम है ?

—किस का ? खिलौने का या जहाज का ?

इस का उत्तर देने मे लड़के ने पहले अपनी बहन की ओर ताका, बहन भी भाई के मुँह की ओर ताक रही थी।

घनश्याम ने फिर पूछा—कौन सा लेंगे, बोलिए ?

—दोनो ही लेंगे।

—दोनो का दाम डेढ़ रुपये होगा।

लड़के ने एक बार अपने पॉकिट मे हाथ दे कर पता नही क्या सोचा। दूसरे ही क्षण बहन का हाथ पकड कर उसे खींचते हुए उस ने कहा—ओ री मणि !

घनश्याम ने साथ ही साथ कहा—हवाई जहाज लेते जाइए न खोका बाबू। दोनों आदमी आप लोग खेलेंगे, उस का दाम एक रुपये है।

उस ने घुटनो के बल खड़े हो कर खिलौनो की डोरी पर हाथ लगाया।

लड़के ने कोई उत्तर नही दिया। लेकिन लड़की ने पक्की गृहिणी की तरह मीठी वाणी मे कहा—नही मणि, हम लोगों के पास पैसा नही है।

एक झुण्ड बाउल, इकतारा और 'गावगुवागुव'[1] तथा खजड़ी बजाते हुए गाते-गाते चले जा रहे थे—

कीचड़ में डूब रहा—
नहीं पा सका कमल, रे मन !

पीछे-पीछे कीर्तन वालों का एक दल चला आ रहा था और उस के पीछे एक बड़ा ही सुन्दर स्वस्थ सन्यासी।

हलवाइयों ने बताशे बिखेर दिये, दोनों ओर से लोग उठ कर प्रणाम कर रहे थे, घनश्याम भी उठ कर खड़ा हो गया। बताशे की लालच में कीर्तन के पीछे-पीछे लड़कों का एक दल कोलाहल करते चला आ रहा था। उन के पीछे-पीछे फटे-चीथड़ों में कुछ अछूत औरत भी थी।

कीर्तन दल चला गया।

लड़की तब भी कह रही थी—नहीं भाई, हमारे पास तो केवल दो आने पैसे हैं। घनश्याम ने कहा—यह देखो, कड़ाही देखो। बड़ी-बड़ी कड़ाहियाँ हैं। ओ छोकरे, सामने क्यों खड़ा है?

पीछे कई लोग खड़े हो कर कुछ देख रहे थे।

लड़की का नाम मणि था। मणि ने अपने भाई से कहा—आओ भइया, आओ, चलें। इन सबों को बकने दो।

सिंह की दुकान पर खड़ा हो कर मुसलमानों का एक दल मुरब्बों का दर कर रहा था।

सिंह कह रहा था—पहले आँख से देख लीजिए, अगर अच्छा न हो तो दाम न दीजिए!

दुकान पर बैठे हुए छोकरे ने आवाज लगायी—खा कर दाम दीजिएगा, इस में केवड़े का जल दिया हुआ है!

मणि ने अपने भाई से कहा—मुरब्बा नहीं खाओगे भइया?

भाई ने बहन को अपने पास खींच कर चलना शुरू कर दिया और एक दुकान की दूसरी पटरी पर चला गया।

---

१. एक प्रकार की लम्बी सी ढोलक के आकार का बाजा जिसे कांख में दबा कर बजाते हैं। इसे वीरभूमि और वर्दवान में देखा जा सकता है।—अनुवादक।

सिंह तब कह रहा था—क्या कहते हैं ? बासी है ? फल भी क्या कभी बासी होता है ?

छोकरे ने कहा—अरे भाई, जो मिठाई आप चख कर खा गये हैं उस का दाम देते जाइए। आप के कहने से क्या खराब हो जायेगी ?

मणि ने चलते-चलते हँस कर अपने भाई से कहा—सभी तुम्हें खोका बाबू कहते हैं। तुम्हारा नाम कोई नहीं जानता, अमर कृष्ण कहने से ही तो होता।

—चुप रहो मणि ! किसी को अपना नाम, अपना घर कभी नहीं बताना। हम लोग चोरी कर के भाग आये हैं, जानती हो न, खबरदार !

—दीजिए न बाबू, दीजिए आप के जूते की एड़ी कैसी घिस गयी है, लगा दूँ ?

जूता की दुकानों के पास मोचियों की कतार पर कतार बैठी हुई थी। अमर के जूतों की हालत देख कर एक मोची ने यह बात कही।

अमर ने बात नहीं की। टूटे हुए जूते के कारण उसे सचमुच ही तकलीफ हो रही थी, लेकिन वह करता भी क्या ? मणि का हाथ पकड़ कर वह आगे-आगे चल रहा था। लेकिन मोची भी हार मानने वाले नहीं थे। अमर जितना ही आगे बढ़ता दोनों ओर से आवाजें आतीं—आइए न बाबू, आइए ! दीजिए न बाबू, दीजिए ! एकदम नया बना दूँगा।

मणि ने कहा—क्यों भाई, तुम लोग क्यों कह रहे हो ? हमारे पास पैसा नहीं है···हम लोग अपने घर से···

बीच में ही मणि चुप हो गयी। भाई की बात उसे याद हो उठी। मोची ने हँस कर कहा—आइए खोका बाबू, जूते की एड़ी मैं ठोक कर ठीक कर देता हूँ, पैसा नहीं लगेगा आप का।

अमर का सिर जैसे घूम रहा था। उस ने तपाक् से एक तमाचा मणि के गाल पर जमा दिया। मणि रोने लगी। मोची जल्दी से उठ कर पकड़ने के लिए दौड़ा। लेकिन मणि तुरन्त चुप हो कर बोल उठी—नहीं, नहीं, भाई, मुझे मत छूना—इस कुबेला में मुझे स्नान करना होगा।

एकाएक चपत मार कर अमर जैसे लज्जित हो गया था। लेकिन

उस ने गम्भीरता बनाये रखी। उसी तरह उस ने गम्भीर हो कर कहा—आ-रे मणि, आ।

मणि ने क्रोध में कहा—मैं जाऊँगी ? किसी भी तरह न जाऊँगी। सभी को तुम्हारी बातें बता दूँगी।

अमर इस बार आगे आ कर मणि का हाथ पकड़ते हुए कहने लगा—तुम बिलकुल लक्ष्मी हो। आओ, अब घर जाना होगा।

—तुम ने मारा क्यों मुझे ?

उस तरफ डम-डम करता हुआ कुछ बज रहा था। अमर ने जल्दी से मणि को खींचते हुए कहा—आ-आ चल उधर से देखें।

चलते-चलते मणि सहसा रुक गयी, और बोली—दादा, मखमल की चिट्टी कैसी है ?

अमर ने कहा—आ-आ। उस से बढ़िया चिट्टी मैं खरीद दूँगा तुझे।

मणि बोली—अगली साल तो तुम कलकत्ते चले जाओगे पढ़ने के लिए। मुझे सचमुच ला दोगे, भइया ?

—हाँ-हाँ, ला दूँगा।

अमर छठवें दरजे में पढ़ता है।

भीड़ जैसे क्रमश: बढ़ती जा रही थी।

बड़ी-बड़ी दुकानों के सामने वाले रास्ते पर छोटी-छोटी दुकानें भी बैठी थीं। वे चिल्ला रहे थे—

—शंखालू, पालक साग !

—एक पैसा का एक बण्डल बीड़ी बाबू !

—हल के लिए काठ लेते जाओ भइया !

—हल के काठ का क्या दाम है भाई ?

—दस आना, बारह आना, खाँटी बबूल है !

हलों की दुकान के पास ही शीशे की आलमारी में नक़ली गहनों की दुकान थी, वह गरीब ग्राहकों को बुला कर कह रहा था—तीन नगीनों वाली अँगूठी लेते जाओ, लेते जाओ भइया ! चार पैसे, खाली चार पैसे में।

कुछ लोग चले गये। लेकिन कुछ लोग रुक गये, दुकानदार कह रहा था—बस भाई, बस।

लाठी में कीलें ठोंक कर फ़ीते लटकाये हुए एक आदमी रास्ते में आवाज़ देता हुआ जा रहा था—चार हाथ फ़ीते ले लो—दो पैसा। बड़े-बड़े फ़ीते ले लो, दो पैसा। किस्म-क़िस्म के फ़ीते ले लो, दो पैसा। फ़ीते में दामाद को बाँध लो, दो पैसा। खींचने पर टूटेगा नहीं, केशों में बाँधने पर फूलेगा नहीं, नहीं लेने पर मन से उतरेगा नहीं···ले लो भाई, दो पैसा। रंग-बिरंगे फ़ीते, दो पैसा।

पटरी के मोड़ से उतरते ही भीड़ का कोलाहल बढ़ता जा रहा था। अमर और मणि उसी भीड़ के भीतर जैसे डूबते गये। भीड़ दोनों ओर से बढ़ती जा रही थी। एक ओर बाजे बज रहे थे। क़तारों पर क़तार वाले तम्बू लगे हुए थे। अमर मणि का हाथ पकड़ कर तम्बू की ओर ले जा रहा था। उधर देख···उधर देख—वह देख, वहाँ जादू हो रहा है।

उस ने कहा—कहाँ भाई ?

और भी पीछे भीड़ जैसे बढ़ती जा रही थी। सभा-बत्ती अभी ही हुई थी। इसी भीड़ के कारण चारों कोनों पर बड़े-बड़े रोशनी हण्डे जल रहे थे। उसी प्रकाश में छोटे-छोटे छप्परनुमा घर भी दिखाई दे रहे थे। झुण्ड के झुण्ड लोग चंचल हो कर इधर-उधर जा रहे थे। उस तरफ़ जाते ही पता नहीं एक गन्ध आती थी और मनुष्य का हृदय जैसे भीतर से कचोट सा उठता था। शराब, गाँजा, बीड़ी, सिगरेट, सस्ते सेण्ट की तीव्र गन्ध से जैसे वातावरण भारी सा हो उठता था।

बीचोबीच जनता की भीड़ बढ़ती जा रही थी और सारी की सारी भीड़ बस एक ही तरफ़। लड़के, बूढ़े, जवान, बंगाली, बिहारी, उड़िया, मारवाड़ी, अफ़ग़ानी, हिन्दू, मुसलमान, सभी कुछ इस के भीतर थे। जाति, धर्म, वर्ण सब कुछ यहाँ एकाकार हो उठे थे।

इसी का नाम था 'आनन्द बाज़ार' अर्थात् वेश्याओं का मुहल्ला।

प्रत्येक घर के सामने छोटी-छोटी चारपाइयों पर औरतें बैठी हुई थीं। और जैसे उनके शरीर को चाटती हुई सी भूखी पाँच सौ जोड़ी आँखें। सस्ती, अश्लील रसिकता के कारण एक प्रकार का अट्टहास चारों ओर से सुनाई पड़ रहा था।

इस तरफ़ इस के बाद उस दरवाज़े पर, फिर दूसरे दरवाज़े पर···

मतलब यह कि हमेशा इधर-उधर लोग आ-जा रहे थे। पियक्कड़ों का हल्ला-गुल्ला, और यहाँ तक कि जैसे आकाश के निस्तब्ध अन्धकार को भी वे मात कर दे रहे थे।

इस सारे शोर के बीच-बीच मे जुआडियों के अड्डे से चीख-पुकार आ रही थी। आँगन के बीचोबीच जुआ हो रहा था। किसी-किसी घर मे औरतें अश्लील गाने गा रही थी। बाहर भीड उन अश्लील गानों को सुन कर हो-हो कर रही थी। मनुष्य के भीतर कितना कीचड है, कितनी पशुता है, इस का उदाहरण यहाँ दिखाई पड रहा था। जैसे गन्दा पानी बार-बार पछाड मारता हुआ वह रहा हो।

उधर से कही आवाज आ रही थी— बक्-वा बक्-वा बक्-वा बक्-वा ! एक लडकी को उबकाई आ रही थी। और उसी दुर्गन्ध में सने हुए लोग उसे देख भी रहे थे क्योंकि उस औरत की देह पर कपडे नही थे। उसी उबकाई पर बैठ कर वह लडकी गा रही थी—

सखी, मरूँगी, जरूर मरूँगी !

भीड भी हँस पड़ी—हाहा-होहो, हाहा-होहो।

एक पनवाडी चिल्ला रहा था—मनमोहिनी बीड़ा बाबू, मनमोहिनी बीड़ा बाबू। जो जिस उमर का होगा, इस पान को खाने पर उसी तरह रह जायेगा।

तितली की तरह सजी-बजी एक सुन्दरी तरुणी ने गाना शुरू कर दिया—पान खा कर जाओ हे बाबू…

एक दर्शक ने अपने दोस्त से कहा—देख रहे हो ?

दूसरे ने कहा—इस से भी अच्छी है। उस का नाम कमली है। मुझे फत्ते ने बताया।

लडकी मुस्करा रही थी।

पहले ने पूछा—क्या नाम है तुम्हारा ?

लडकी बोली—चेहरा देखकर नाम समझ लो—कमलिनी, फूल-रानी। और यह कहते-कहते शरीर मे अंगड़ाई भर कर अपने घर की ओर चली गयी वह।

—अरे सुनो-सुनो, तुम्हारी दक्षिणा ?

—चवन्नी और अठन्नी में कमल की माला गले में नहीं पहनी जाती बाबू ! पूरा दाम देना पड़ेगा !

एक आदमी ने कहा—शराब पीयेगी तो ?

—कौन पिलाता है ? बक-बक करते मुँह तीता हो गया। अरे एक बीड़ा पान तो खिलाओ।

एक घर के सामने हल्ला-गुल्ला हो रहा था।

किसी दोस्त के लुके-छिपे प्रणय को दूसरे दोस्तों ने पकड़ लिया था। कुत्सित छन्द में जैसे बिलकुल नग्न नृत्य हो रहा था, पैरों में घुंघरू बज रहे थे।

कमली कह रही थी—रुपया देने पर ही नाचूँगी। पैसा दे कर तब हुकुम करो, तब मैं तुम्हारे पैर की दासी हो जाऊँगी।

एक घर से प्रायः नग-धड़ंग आदमी एक औरत को खींचता-खींचता बाहर आ खड़ा हुआ। औरत भी पी कर बदहोश हो गयी थी। मर्द कह रहा था—तू मुझे प्यार नहीं करती। मैं तेरे नाम पर मुकदमा करूँगा, केस करूँगा।

लड़की ने कहा—जा, जा, मैं हाईकोर्ट से वकील लाऊँगी।

एकाएक पता नहीं उस पियक्कड़ को क्या सूझा कि उस ने लड़की को छोड़ कर कहा कि मैं तो अब दुनिया छोड़ कर सन्यासी हो जाऊँगा।

सरके हुए कपड़े को ठीक कर के वह चला गया, लड़की नशे में धुत बैठी-बैठी तब भी बक-बक कर रही थी—मैं तुझे जेल भेज दूँगी। मैं बैरिस्टर लाऊँगी। जा तो पहले तू, देखती हूँ बेटा सन्यासी कैसे होता है।

—वह देख भइया वह देख !—मनि चीत्कार कर उठी।

वह ताली बजा कर नाच सी उठी। भीड़ में वह कहीं छूट नहीं जाये इसलिए अमर का हाथ उस ने पकड़ लिया।

वास और कुछ नहीं थी। एक खेला दिखाने वाले के सामने एक आदमी नकली चेहरा लगाये हुए नाच रहा था। उस की पोशाक भी जरा अद्भुत थी। हाथ में उस के एक जोड़ा बहुत बड़ी ताश थी।

मनि ने अपने भाई का कुरता खींचते हुए कहा—अरे भइया, भूत है भूत। वह देखो भूत। अमर ने ऊपर देखा—सचमुच ही साइन-बोर्ड के

ऊपर बड़े-बड़े चमगादड़ों की तरह भूत जैसे नाच रहे हों। तसवीरों के नीचे बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा हुआ था—'जादू और नजरबन्दी !'

अमर ने धीरे से मणि से कहा—यह भूत का खेल देखेगी ?

मणि गरदन हिलाती ही रह गयी।

लेकिन अमर का मन चंचल हो उठा। सब से कम पैसे में यह खेल देखा जा सकता है।

इसी के बाद गेरुआ रंग का एक तम्बू है, उस के बाद कुछ नहीं लिखा है। लेकिन तम्बू के भीतर टन-टन करता हुआ एक घण्टा बज रहा है। दरवाजे पर खड़ा हो कर एक आदमी चिल्ला रहा था—खतम हो गया, खतम हो गया। चले आओ भाई, एक पैसा।

उस के बाद अँगरेजी में कुछ लिखा हुआ था इंडियन। इस के बाद क्या था अमर ने उस की स्पेलिंग तो पढ़ ली लेकिन उच्चारण नहीं कर सका—यू. पी. डबल जेड. एल. ई.। मणि प्रसन्नता से नाच उठी।

—ओ भइया, ओ देखो नारद के वेश में नाच रहा है। अमर ने घूम कर देखा। मणि ने झूठ नहीं कहा था, सचमुच ही वह बूढ़ा नारद की ही तरह देखने में था। वैसी ही दाढ़ी, वैसी ही मूँछें और वैसे ही बैठा हुआ मुँह और दो बड़े-बड़े दाँत। नारद मुनि सादी पोशाक पहन कर बाजे के ताल पर अपनी गरदन हिला रहे थे और साथ-साथ मूँछें भी। मणि बोली—चलो भाई, यही देखें।

अमर तब पास के तम्बू के साइनबोर्ड को पढ़ रहा था। 'बम्बई का कटा हुआ सर !' एक तरफ एक धड़ था और दूसरी ओर उस के दो सर। दो सर वाला एक आदमी, बीच में रुधिर सना एक मुण्ड।

अमर की इच्छा हुई कि बम्बई का कटा हुआ सर वह देखे। लेकिन दूसरी तरफ बैण्ड बाजा भी बज रहा था। मणि अमर का हाथ पकड़ कर उस बैण्ड बाजे की तरफ ले चली—भइया, उधर देखो, अँगरेजी बाजा बज रहा है। आओ, चले आओ। उस तरफ अच्छे जादू का खेल हो रहा है।

पीछे से जैसे भीड़ ठेलती आ रही थी। जनता के बीच में दोनों बच्चे ऐसे लग रहे थे जैसे नदी की धारा में बहते हुए ठठल। जादू वाले तम्बू के सामने खड़े हो कर किसी प्रकार उन्होंने अपनी रक्षा की।

बहुत बड़े तम्बू के सामने झकझकाता हुआ प्रकाश हो रहा था। एक मांचे के ऊपर दो जोकर जैसे आदमी रिंग का खेला दिखा रहे थे। एक आदमी लगातार चिल्लाये जा रहा था···चलो, चलो। आ आओ भाई, दो-दो पैसा, दो-दो पैसा।

हठात् बाजा रुक गया। बड़ा जोकर भाषण की शैली में बोलने लगा—बाबू लोगो···

—हाँ-हाँ—छोटे जोकर ने साथ ही उत्तर दिया। अमर और मनि उस के मुंह की ओर भौचक्के हो कर देख रहे थे।

—खड़े-खड़े क्या सोच रहे हैं ?

—क्या सोच रहे हैं भाई ?—सामने वाले आदमी ने छोटे जोकर की ठीक नाक के सामने उँगली हिला कर कहा।

वह आदमी भौचक्का हो गया। छोटे जोकर ने कहा—जाइए, भीतर जाइए। वह देखिए, मेला शुरू हो गया।

तम्बू के सामने का परदा खुल गया। भीतर थियेटर के ढंग जैसा एक स्टेज दिखाई पड़ा। तमाशबीन चंचल हो उठे। अमर अपने पंजों के बल खड़ा हो कर कुछ देखने का प्रयत्न करने लगा।

स्टेज के ऊपर नाचने वाली दो छोकरियाँ दिखाई पड़ीं।

जोकर चिल्लाया—'रकम-रकम' की चीज देखिए भाई! भीतर जाइए, भीतर जाइए।

कई लोग तब तक भीतर जा घुसे थे। साथ ही साथ परदा भी बन्द हो गया। दोनों लड़कियाँ तब तक गाना आरम्भ कर चुकी थीं।

एक आदमी फिर घुसा।

हठात् पीछे से भीड़ में शोरगुल सुनाई पड़ा—हट जाओ, हाथी-हाथी।

टन-टन शब्द करता हुआ जमींदार का हाथी बाजार के बीच चला जा रहा था। चारों ओर लोग पागलों की तरह भागे जा रहे थे।

मनि का कपड़ा खींचते हुए अमर बहुत दूर तक भीड़ के रेले-रेले में चला आया। जरा-सी सूनी जगह में आते ही किसी ने कहा—अरे कपड़ा तो छोड़ दे ओ छोकरे!

अमर ने विस्मय के साथ देखा—एक किसी अपरिचित आदमी का कपड़ा वह पकडे हुए है। कपड़ा छोड़ कर वह व्याकुल भाव से इधर-उधर देखने लगा—मणि कहाँ चली गयी ?

केवल मणि ही नही गयी, दिन भी ढल चुका था। तर के ऊपर आकाश मे तारे टिमटिमाने लगे थे। चारो ओर दुकानो पर मशालें जल चुकी थी।

अमर को रुलाई आ गयी। वह सामने की ओर बढ़ने लगा। मेले में जब तक भीड बहुत जम चुकी थी। अपने को देखने के अलावा अमर जैसे कुछ नही देख पा रहा था। भीड के बीच धक्का खाते-खाते पता नही वह कहाँ आ पडा, उसे कुछ होश ही नही रहा। 'आनन्द बाजार' के अँगने के बीच उच्छृंखल भावनाएँ घनीभूत हो रही थी। भीड के बीच एक जगह नाच और गाने हो रहे थे। अमर ने बहुत कष्ट के साथ किसी तरह भीतर प्रवेश किया। वहाँ जा कर उसे काठ सा मार गया।

एक आदमी का गला पकड कर एक सुन्दरी लड़की पगली की तरह नाच रही थी। घूमते-घूमते नाच के बीच वह आदमी उस तरुणी को छोड़ कर नीचे गिर पडा। भीड़ हो-हो कर के हँस पड़ी।

दूसरी भीड़ के बीच अमर ने घुस कर देखा वहाँ जुआ हो रहा था। रुपया-पैसा पानी की तरह झमा-झम बरस रहा था। खिलाड़ी चिल्ला रहे थे—एक लगाइए दो पाइए, दो लगाइए चार पाइए।

अमर एक क्षण के लिए सब कुछ भूल गया। अपने पाकेट मे हाथ दे कर उस ने कुछ सोचा। किसी एक आदमी ने उस के कन्धे पर हाथ रख कर पूछा—खोका, तुम जुआ खेलने आये हो ? अमर ने देखा, एक अट्ठारह-उन्नीस साल का लड़का खद्दर का कुरता पहने हुए, माथे पर खद्दर की टोपी।

जुआ खेलने वाला नाराज हो कर बोला—क्यों भाई, आप ऐसा क्यों कर रहे हैं ? मैं ने डेढ हजार जमीदार को गिने हैं तब जा कर मैं यहाँ यह खेल दिखा रहा हूँ। चलो बच्चे। एक पैसे मे दो पैसा, दो पैसे में चार पैसा और तीन पैसा मे छह पैसे पाओगे। लगाओ-लगाओ।

अमर उस लड़के की ओर देख रोने लगा। उस लड़के ने उस का हाथ

पकड़ कर कहा—आओ, हमारे साथ चलो। क्या हुआ तुम्हें ? पीछे जुआ खिलाने वाला चिल्ला रहा था—चोरी नहीं है, डकैती नहीं है। नसीब का खेला है, भाई। मालिक देने वाला है, लगाओ भाई, लगाओ।

भीड से बाहर आ कर उस लड़के ने अमर से पूछा—किस के साथ तुम आये हो ? कहाँ घर है तुम्हारा ?

अमर फफक कर रो पडा। बोला—मेरी बहन खो गयी है

चकित हो कर लडके ने प्रश्न किया। बहन ! कितनी बड़ी है वह ? तुम से बड़ी है या छोटी ?

—मुझ से छोटी है। छह साल की होगी।

—उस के देह पर कुछ गहना-खोहना है क्या ?

—हाँ, उस के हाथ में दो कंगन है।

—क्या नाम है उस का ?

—उस का नाम मणि है। खूब चालाक है वह।

आनन्द पगे हुए तमाशबीन चारों ओर शोर-गुल कर रहे थे। अमर उसी बीच छाती फाड कर चल रहा था।

इतनी भीड के बीच छोटी सी लड़की धीरे-धीरे उस जादू दिखाने वाले तम्बू में घुस गयी थी। वहाँ इधर-उधर देख कर मणि ने देखा कि उस का भाई नहीं है। मणि को बड़ा मजा आया। चलो, उस ने अपने भाई को खूब छकाया। वह बेचारा घुस नहीं सका। रहने दो उसे बाहर ही। लेकिन दूसरे ही क्षण उसका मन उदास हो गया। तो भैया मेरा तमाशा नहीं देख पायेगा !

मणि अपने भाई को खोजने लगी, साथ-ही-साथ आवाज भी देती फिरी। पीछे उसने घूम कर देखा कि टन-टन शब्द करता हुआ एक घोड़ा दो पैरों के बल खड़ा हुआ नाच रहा है। मणि हक्का-बक्का हो उठी। कुत्ता कूद रहा है, बन्दर घोड़े पर चढ़ रहा है, पंछी जम्बूरा चला रहा है और एक आदमी अपना रंग बदल कर किसनी तरह से लोगों को हँसा रहा, हँसते-हँसते मणि का पेट फूल गया।

टन्-टन् कर के घण्टा बजा। स्टेज के ऊपर का परदा गिर गया। खेल खतम। भीड़ के साथ-साथ मणि बाहर आयी, उस ने देखा कि उस का

भाई तो कहीं नहीं है। थोड़ी देर बाद मणि जैसे सुन्न हो गयी। इस के बाद वह भी भीड़ के साथ ही बाहर चली आयी।

उस का भाई बहुत ही दुष्ट है।

कुछ दूरी पर झूले दिखाई पड़ रहे थे। मणि उस तरफ बढ़ी, उस का भैया वहाँ जरूर होगा। मणि से छिपा कर शायद वह झूला झूल रहा हो। बगल के एक रास्ते मे एक दुकानदार चिल्ला रहा था। चले आओ भाई, चले आओ—कबाब-रोटी गोश्त का परौंठा। चिगडी ! यह लो भाई, यह लो, वो भीड हट जाओ। लेकिन कोई नहीं हटा। भीड बढ़ती गयी। हठात् वह आदमी चिल्लाया। यह देखो, बहुत बड़ा शेर। मणि जैसे डर सी गयी, उस चिल्ला कर कहा— भइया !

पीछे से फिर हल्ला हुआ—ये हट जाओ, हट जाओ।

किसी ने कहा—अरे भाई, जरा हटो। गाड़ी आ रही है।

जनता दो भागों में बँट गयी। भीड के बीच वह कैसे चल रही थी वह उसे पता ही नहीं लगा। जब उसे साँस लेने का अवकाश मिला तो उस ने पाया कि वह अन्धकार के बीच खुले मैदान में खड़ी है।

परदे से ढकी हुई दुकानें और झकझकाते हुए प्रकाश मे मेले की भीड़ तब भी जैसे बढती जा रही थी। ऊपर आकाश में तारे झिलमिला रहे थे। उसी अन्धकार के बीच चारो ओर पता नहीं कौन लोग चले जा रहे थे। पता नहीं कौन उसी के भाई की तरह मिट्टी वाली बाँसुरी बजा रहा था। मणि चिल्ला उठी—भइया !

दूर मैदान मे पता नहीं किस ने उत्तर दिया। क्या भइया-भइया रट लगाती है, भइया तेरा घर मे नहीं है। तेरा भाई तो दुलहन लेने के लिए उस पार चला गया है।

मणि ने क्रोध मे उसे गाली दी—मर जा—मर जा, मर जा। लेकिन इस अन्धकार के बीच खड़ी हो कर वह डर रही थी। सामने ही फूस की बनी हुई कुछ झोंपड़िया थी। उन के पीछे थोड़ा प्रकाश भी था। मणि आगे बढ़ कर रास्ता खोजने लगी, रास्ता नही था। लेकिन उन घरों के पीछे की ओर एक-एक दरवाजे थे। मणि ने एक घर में झांक कर देखा। साथ-ही-साथ पता नहीं कौन बोल उठा—कौन ? कौन ?

मणि जल्दी से खिसक आयी। घर के ही भीतर से कोई बोला—चोर-चोर, चोर है क्या ?

मणि इस बार रोने लगी। इस के बाद घर के भीतर की एक लड़की बाहर आ कर मणि का हाथ पकड़ कर बोली—कौन है री, कौन है री ? मणि इस बार फफक कर रो उठी। एक दियासलाई जला कर उस ने मणि के मुँह को देखा। इतनी सुन्दर सलोनी लड़की देख कर भीतर वाली लड़की का मुखड़ा कोमल हो उठा। मणि का भी डर जैसे उड़ गया। जिस लड़की ने पकड़ा था, वह भी सुन्दर थी।

लड़की ने मणि से पूछा—क्यों रो रही हो, क्यों रो रही हो, खुकी ?

उस की देह से सट कर मणि रोते-रोते बोली—मैं अपने भाई को नहीं खोज पा रही हूँ।

स्नेह से उसे पकड़ कर उस लड़की ने कहा—डर की क्या बात है ! तुम रोओ मत। प्रात. होते ही तुम्हें तुम्हारे भाई के पास पहुँचा दूँगी।

—रात जो हो गयी है।

—होने दो न, तुम तो मेरे साथ आज रहोगी।

मणि को अपनी छाती से चिपकाये हुए वह लड़की अपने घर में घुसी। उधर भीतर दरवाजे से बाहर आ कर पता नहीं कौन पुकार रहा था—कमल मणि, कमल मणि।

एक आदमी ने कहा—इस घर में कोई आदमी नहीं है क्या ?

—जरा बैठो तो—मणि को बिछौने पर बैठा कर लड़की ने कहा।

इस के बाद दरवाजा खोल कर वह बाहर आयी और उस ने कहा—कौन चिल्ला रहा है ?

किसी ने कहा—तुम्हारी पूजा करूँगा।

भीड़ हो-हो हँस पड़ी। लड़की ने अपना दरवाजा बन्द कर लिया।

बाहर से फिर किसी ने पुकारा—सुनती हो ! कमल !!

कमल ने कहा—बहुत-से नरक के दरवाजे तो खुले हुए हैं, जाओ न ? मेरे द्वारा नहीं होगा।

—अरे, एक बार सुनो तो सही।

कमली बोली—ज्यादा हल्ला करने पर मैं पुलिस को बुलाऊँगी।

भय के कारण मणि भीतर ही भीतर रो रही थी।

कमली उस के शरीर पर हाथ फेरती हुई स्नेह से बोली—मत रोओ बच्ची, मत रोओ।

मणि ने अपनी रुलाई के बीच ही कहा—मेरा नाम बच्ची तो नहीं है। मेरा नाम है मणि···

—मणि! तो हाँ मणि, तुम को भूख लगी है?

—हाँ।

घर के एक कोने में एक बरतन में कचौडियाँ और मिठाइयाँ पडी हुई थी, मणि के हाथ में उस ने दिया।

उस के मुँह की ओर देख कर मणि ने कहा—तुम्हें मैं क्या कह कर पुकारूँगी।

कमली ने एकाएक कहा—माँ!

मणि ने कहा—नही, माँ तो मेरी घर पर हैं?

एक लम्बी गहरी साँस ले कर वह लडकी रोने लगी। मणि ने कहा—मैं तुम्हें मौसी कहूँगी? कैसा रहेगा?

लड़की ने मणि को अपनी छाती से जकड कर कहा—हाँ, हाँ, मौसी, मौसी, मौसी।

मणि ने गरदन हिला कर कहा—अच्छा!—थोडी देर बाद मौसी के साथ उस का खूब परिचय हो गया। माँ की बात, पिता की बात, भाई की बात, अपने बूढ़े दादा की बात, छोटी बहन की बात—सब कुछ कह दिया उस ने। यहाँ तक कि उस बदमाश दुकानदार की बात भी वह नही भूली। उस ने यह भी बताया कि उसे हवाई जहाज, वह झूला और वह खिलौने कितने अच्छे लग रहे थे।

हठात् उस ने कहा—तुम जरा चुपचाप सो तो जाओ मणि! मैं जरा बाहर से घूम आऊँ। पर रोना नही। ठीक है न?

वह लड़की चली गयी।

निस्तब्ध शान्त उस कमरे के बाहर का प्रचण्ड कोलाहल बच्ची के कान में आ कर बार-बार टकरा रहा था। भय के मारे एक कम्बल खींच कर वह लड़की सो गयी। पीछे से दरवाजा ठेल कर कमली ने मीठी

आवाज में पुकारा—मणि !

अपने मुंह से कम्बल हटा कर मणि ने करवट बदली। और उस ने कहा—ऊँ, ऊँ।

अपने आंचल से बहुत सी चीज़ कमली ने बाहर की। मणि ने बड़े प्यार से सारी चीज़ों को अपने पास खींच लिया। ठीक वही हवाई जहाज़, शायद वही। और यह खिलौना, लेकिन यह तो उस से भी अच्छा है। और मखमल का चप्पल, अरे यह तो नयी डिजाइन का है।

कमली ने पूछा—तुम्हें पसन्द आया मणि ?

मणि ने स्वीकृति में गरदन हिलाया। कमली ने प्यार से कहा—ज़रा एक चुम्मा दो तो ?

मणि ने अपना गाल आगे कर लिया। कमली ने उसे अपनी छाती से लगा कर कहा—तुम्हारी माँ अच्छी है या मैं ?

थोड़ा सोचा कर मणि ने कहा—माँ भी अच्छी है, तुम भी अच्छी हो !

कमली ज़रा हँसी।

मणि ने कहा—तुम बीड़ी क्यों पीती हो मौसी, मेरी माँ तो बीड़ी नहीं पीती हैं। उस लड़की का चेहरा पता नहीं कैसा हो गया। एक लम्बी साँस ले कर उस ने मणि की पीठ ठोकते हुए कहा—सो जाओ, सो जाओ दुष्ट कहीं की !

—तुम सो जाओ।—मणि ने कहा।

हँस कर कमली ने मणि को अपनी छाती से चिपका लिया और सो पड़ी।

मणि की आँखें धीरे-धीरे बन्द हो गयीं। कमली एक टक उस के मुँह की ओर देख रही थी। हठात् उस की आँखों से आँसू बहने लगे।

पीछे दरवाज़े से पता नहीं किस ने पुकारा—कमली !

उठते-उठते कमली ने बाहर वाली को देखा और पूछा—मौसी !

आने वाली लड़की ने कहा—हाँ, घर में क्यों सोयी पड़ी है री ? क्या हुआ तुझे ? देख, इस के बाद मैं कुछ रुपया नहीं दे सकूँगी। ज़मींदार को मुझे रुपया देना होगा।

कमली का कोई उत्तर सुने बिना ही उस ने कहा—वह कौन है रे? किस की लड़की है?

कमली का मुंह लाल हो उठा। वह बोली—नहीं जानती।

—शायद किसी की खो गयी लड़की है! कहाँ मिली तुझे?

—घर के पीछे।

—कोई जानता है?

उदास हो कर कमली ने गरदन हिला कर कहा—नहीं।

—तो ठीक है, सुबह ही इसे हटा देना होगा। सरकार को मैं जरा कह कर आऊं।

बूढ़ी बाहर चली गयी। कमली ने ब्योंडा दे दिया। मौसी के इशारे में जो कुछ छिपा हुआ था उसे समझ कर जैसे वह सिहर उठी। बाहर का कोलाहल धीरे-धीरे कम होता जा रहा था। जादूगर वाला तम्बू और सरकस के तम्बू जैसे शान्त हो गये थे।

कमली पीछे की कुण्डी खोल कर एक बार बाहर आ कर खड़ी हो गयी। अँधेरा बढ़ता ही जा रहा था। बटोहियों का आना-जाना बन्द सा हो गया था। कमली फिर घर में घुसी, इस के बाद उस ने एक क्षण भी देरी नहीं की। मणि को अपनी छाती से चिपकाये, अपने आँचल में उन्हीं खिलौनों को लिए हुए पिछले दरवाजे से निकल गयी और अन्धकार में विलीन हो गयी।

□

काला पहाड़

दुनिया के गड़बड़झाले को समझाने में जितना दिमाग़ लगता है उसे समझाना बड़ा ही नीरस सा है। ना-समझ बूढ़ा छोटे बच्चे की तुलना में और भी अधिक विपत्तिजनक है। बच्चा अगर चाँद चाहता है, तो उसे चाँद के बदले में मिठाई दे कर शान्त किया जा सकता है, अगर उस पर भी वह नहीं मानता तो एक झापड़ देने पर वह रोते-रोते सो भी सकता है। लेकिन ना-समझ बूढ़े को किसी भी तरह नहीं समझाया जा सकता।

यशोदानन्दन बहुत तर्क-वितर्क के बाद भी अपने बाप को यह नहीं समझा सके कि वे दो बैल क्यों ख़रीद कर ला रहे हैं। उन के बूढ़े बाप ने तिक्त भाव से कहा था—तब तुम दो हाथी क्यों नहीं ख़रीद कर लाते ?

कल्पना में ही जैसे दो हाथियों ने अपना मुँह बढ़ा कर रगलाल की देह पर अपने मुँह में पानी फेंक दिया। रगलाल क्रोध से जल-भुन गया। वह हुक्का पी रहा था। यह बात सुन कर अपने बेटे की ओर देख कर अकस्मात् अपने हाथ के हुक्के को ओर से माटी के ऊपर फेंक कर कहा—यह ले।

यशोदा अवाक् हो कर अपने पिता के मुँह की ओर देखने लगा। रगलाल ने कहा—हाथी, हाथी। अरे मैं कहता हूँ हरामज़ादे, कब मैं ने हाथी ख़रीदने को···?

यशोदा ने भी इस बात का कोई जवाब नहीं दिया, क्रोध के कारण वह भी भीतर-ही-भीतर जल-भुन रहा था।

शायद रंगलाल ने इतनी देर के भीतर 'हाथी ख़रीदने' वाली बात का जवाब खोज लिया था। उस ने भी एक व्यंग्य-श्लेषपूर्ण उत्तर दिया—हाथी क्यो ? अरे, दो बकरी खरीदूँगा, उन मे खेती भी होगी और दूध भी पीऊँगा। बाँस की तरह ऊँचे-ऊँचे धान होंगे, तीन-तीन हाथ उन की बालियाँ होंगी। किसान का बेटा है, इसी लिए पढ़-लिख कर मूर्ख हो गया है। अरे बेटा, मैं कहता हूँ, अच्छा बैल लेगा तो खेती होगी। हल मिट्टी मे एक हाथ घुसेगा। मैदे की तरह मुलायम भुर-भुरी मिट्टी हो जायेगी, तब तो होगा बेटा, धान, तब तो होगी बेटा, फ़सल। रंगलाल ने जिद् पकड ली। जरूर ख़रीदेगा वह बैल। इसी बैल खरीदने वाली बात को ले कर बाप-बेटे के बीच इतना तर्क-वितर्क हुआ है। रंगलाल बहुत बडा किसान है, बहुत बड़ी जमीन उस की सीर है। खेती पर उस का बड़ा मोह है। जैसी लम्बी-चौड़ी उस की देह है, वैसी ही मेहनत भी वह करता है, राक्षस की तरह मेहनत करता है वह। मेहनत मजूरी मे कभी भी आलस नही दिखाता। बैलों के ऊपर भी बडा मोह है उस को, और बैल रखने का भी वैसा ही शौक। बैल भी साधारण नही, बिलकुल कच्ची उम्र के बछड़े, रंग ऐसा कि देख पड़ोसी झक मारे, सुन्दर सीग, साँप की तरह लपलपाती हुई पूँछ, और भी ऐसे ही कितने गुण न होने पर उसे बैल पसन्द नही होते। और भी एक बात उस पूरे जवार मे किसी के भी बैल उस के जैसा नही होना चाहिए। बैलों के गले मे वह घुंघरू और पीतल की घण्टियाँ बाँध देता है। सुबह साफ फटे हुए टाट से वह उन की देह को झाड-पोंछ देता है, दोनों बैलों की सीगों मे तेल लगा देता है, और तो और कभी-कभी उन बैलो के पैर भी दबा देता है। पैर दबाते-दबाते वह कहता है—आह ! बेचारे बिना जीभ के जीव हैं !

पिछले कई साल से अपने बेटे यशोदा को स्कूल मे पढ़ाने के कारण रंगलाल का ख़र्च थोड़ा बढ़ गया है। यशोदा ने इस साल मैट्रिक पास कर लिया, और पिछली साल धान की फ़सल भी ख़राब नही हुई थी। इसलिए रंगलाल को यह जिद् हुई कि उसे एक जोड़ी बैल चाहिए ही। दोनो बैल छोटे भी नही थे। और वैसे बैल बहुत लोगों के पास थे भी।

यशोदा कहता—इस साल तुम काट लो, एकाध नौकरी-चाकरी करूँ। इस बार यदि थोड़ा धान बढ़िया हो तो अगली साल बैल बढ़िया ख़रीदना।

अभी ख़रीदोगे तो दो सौ रुपये से कम नहीं लगेंगे और रुपये तुम पाओगे कहाँ से ?

रुपया कहाँ से आयेगा, रंगलाल जी से मतलब नहीं, बस उसे केवल बैल चाहिए। अन्त में रंगलाल की ही जिद्द रही। यशोदा ने क्रोध के कारण ही कोई विरोध नहीं किया, और रुपये भी जुट गये। उस के पास बैलों की जो जोड़ी थी उसे बेच कर सौ रुपया जुटा और सौ रुपये यशोदा की माँ ने दिया। रंगलाल को उस ने आड़ में बताया कि उस के साथ झगड़ा करने से क्या होगा ? तुम बैल खरीद कर लाओ न ? खरीद कर लाओगे तो वह कुछ नहीं बोलेगा। रंगलाल ने ख़ुश हो कर कहा—ठीक कह रही हो। इस के बाद वह अपना माथा भले ही पीटेगा।

यशोदा की माँ ने कहा—ये लो, मैं अपने गहने दे रही हूँ, इसे बन्धक रख कर ख़ूब बढ़िया बैल खरीद लो, अगर अच्छे बैल नहीं रहे तो ग्वाले का घर कैसा ?

रुपया-पैसा ले कर बैलों और भैंसों के बाजार में वह पाचुन्दी गाँव के मेले की ओर चल पड़ा। रंगलाल ने मन ही मन सोचा कि ख़ूब सुन्दर-से दो बैल खरीदूँगा। दूध की तरह सफ़ेद लेकिन पाचुन्दी बाजार में जा कर वह तो अवाक् हो गया। बाप रे बाप ! यहाँ तो हजार से कम की बात ही नहीं। भैंस और बैल मिला कर वाकई एक हजार रहे होंगे और आदमियों की भीड़ भी वैसी ही थी। भैंसों और बैलों की पों-पों, बाँ-बाँ, और आदमियों का वैसा कोलाहल। दोपहरी का सूरज सर के ऊपर। जहाँ पर जानवर खरीदे और बेचे जा रहे थे वहाँ जरा भी छाया नहीं थी। लेकिन आदमी उस तरफ सोच भी नहीं रहे थे। रंगलाल भी उसी भीड़ के भीतर पता नहीं कहाँ खो गया। सारे पशु सट कर खड़े हुए थे। व्यापारी चिल्ला रहे थे—यह गला, ये देखो चला गया, शेर का बच्चा है, शेर का बच्चा है, बैल नहीं जैसे अरबी घोड़ा है !

रंगलाल तीक्ष्ण दृष्टि से अपने मन के मुताबिक बैल ढूँढ़ रहा था। उस तरफ कुछ शोर-गुल हो रहा था। कान फटे जा रहे थे, ऐसा लग रहा था, मालूम होता था कि दंगा हो गया। रंगलाल उसी तरफ चला। इस ओर भैंसों का बाजार था। काले-काले दुर्दान्त पशु इधर-उधर घूम रहे थे।

व्यापारियों के झुण्ड बड़ी-बड़ी बाँस की लाठियाँ लिये हुए जानवरों को पीट रहे थे और जानवर बेतहाशा भागे जा रहे थे। कितने तो पोखरे में घुस गये थे। छोटे पड़वे से ले कर बूढ़े भैंसे तक आये थे। बहुत-से भैंसों के देह पर चमड़े भी छूट गये थे और लाल-लाल घाव दिखाई पड़ रहे थे। थोड़ी दूर पर आम के पेड़ों से घिरी हुई एक बावरी थी। वहाँ पर आदमियों की काफ़ी भीड़ थी, रंगलाल उसी तरफ़ चल पड़ा। एक व्यापारी एक भैंसे को पीट कर इधर ही ला रहा था। हठात् उस के हाथ की लाठी खिसक कर रंगलाल के पास ही गिर पड़ी, रंगलाल को ज़रा सा क्रोध हुआ। उस ने लाठी उठा ली।

व्यापारी को ज़रा भी अवसर नहीं था, उस ने व्यस्तता में कहा—लाओ, लाओ, लाठी लाओ।

—अगर मुझे लग जाती तो?

—तो क्या होता? अरे थोड़ा-सा ख़ून गिरता, और क्या?

रंगलाल को तो काठ मार गया—ख़ून गिरता, और क्या होता!

—दे दो भाई, दे दो भाई, लाठी दो। हाथ से खिसक कर गिर पड़ी। रंगलाल को अच्छी तरह देख कर व्यापारी ने अब की बार विनयपूर्वक कहा।

लाठी देते समय रंगलाल सिहर गया—यह क्या, लाठी के अगले भाग में लोहे की कीलें ठुकी हुई थीं। व्यापारी ने हँस कर कहा—इसे देखने की कोई ज़रूरत नहीं है, लाओ भाई, दे दो।

रंगलाल ने ध्यान से देखा—एक नहीं, दो नहीं, तीन-तीन कीलें ठुकी हुई थीं। रंगलाल के मन में वह बात याद हो उठी—उस ने सुना था कि व्यापारी अपनी लाठियों में ऐसे ही लोहे की कीलें लगा कर रखते हैं, भैंसे इसके कारण पागलों की तरह इधर-उधर दौड़ते हैं।—ओफ़, एक लम्बी साँस ली रंगलाल ने।

व्यापारी ने कहा—क्या ख़रीदोगे मालिक? अगर भैंसे ख़रीदने हों तो चलो, ख़ूब अच्छे भैंसों की जोड़ी दे दूँगा।—और ऐसा कह कर वह भैंसों को बुलाने लगा—आओ, आओ!

—बाप रे बाप! बलिहारी है तुम्हारी।

—रंगलाल वहाँ से चला आया। चारों ओर भैंसों का ही मेला था। कुछ भैंसे चुपचाप बैठे थे, कुछ खड़े थे, कुछ आँखें मूँद कर जुगाली कर रहे थे।

बैल इस तरफ नहीं थे। रंगलाल वहाँ से लौट पड़ा। लेकिन बगीचे के आखिरी में आ कर वह ठमक कर खड़ा हो गया—यह क्या ! ये भैंसे हैं या हाथी ? इतने बड़े प्रचण्ड आकार के भैंसे जीवन में रंगलाल ने कभी नहीं देखे थे। कई आदमी वहाँ खड़े थे। एक आदमी कह रहा था—ये भैंसे कौन लेगा बाबा ?

व्यापारी ने कहा—भाई, यह वही लेगा, जिस के पास जमींदारी होगी और वह लेगा जिसे लक्ष्मी की जरूरत है। पाँच-सात बाजार तो घूम चुका, देखूं अब कहाँ और जाना पड़े। एक-दूसरे आदमी ने कहा—ये भैंसे गृहस्थ ले कर क्या करेगा ? इन के हल का मूठ भला कौन धरेगा ? और इस के लिए भला आदमी कहाँ से मिलेगा ?

व्यापारी ने कहा—ओ भाई, बुद्धि से आदमी शेर को वश में कर लेता है। ये तो भैंसे हैं। अरे जरा-सा हल बड़ा कर देने से ही इन सालों की नानी मर जायेगी। और इन का हल जमीन के भीतर डेढ़ हाथ घुसेगा।

रंगलाल अपनी तीक्ष्ण आँखों से प्रशंसा की दृष्टि से उन भैंसों की जोड़ी की ओर देख रहा था—वाह, वाह ! कितनी बड़ी देह है वैसा ही चेहरा है। कम-से-कम बीस मन वजन तो वे ढो सकते हैं, और क्या काला रंग है, जैसे कसौटी पत्थर। और दोनों सींग देखने लायक हैं, और ये दोनों ही भैंसे जैसे जुड़वा हों।

लेकिन वह क्या दाम दे पायेगा ? अच्छा चलो, देखा ही जाये, बाजार खत्म हो जाने पर लोग जब चले जायें तब कोशिश करेगा वह। व्यापारी ने भी तो कहा है, पाँच-सात बार वह बाजार में आ चुका है और कोई खरीदार नहीं मिला, बात तो केवल रुपयों की नहीं है, सब से बड़ी बात दोनों विशाल भैंसों के पेट की भी तो है।

रंगलाल ने ये दोनों भैंसे खरीद लिये, किसी भी तरह वह अपनी लालच को नहीं रोक सका। व्यापारी कई बाजार आ-जा कर हैरान हो चला था। उस के बहुत-से रुपये अटके हुए थे। जब उस ने देखा कि रंगलाल के पास

और कोई चारा नहीं है तो उस ने एक सौ अट्ठानवे रुपये में वे दोनों भैंसें रगलाल को सौंप दिये। रगलाल प्रसन्नता से भर उठा। अपने कल्पना के नेत्रों से वह अपने गाँव वालों की फैली हुई आँखों को देखने लगा किन्तु जब वह अपने घर के नजदीक पहुँचा तो जैसे उस का उत्साह उदासी में बदलने लगा। अपने पढ़े-लिखे लड़के से बहुत डरता है वह, उस की बातों का जवाब देने में रगलाल हाँफने लगता है। इस के अलावा इतने बड़े दोनों जानवरों का पेट भरना भी तो सीधी बात नहीं है। एक-एक के ही पेट में एक बोझे से ज्यादा चारा समा जायेगा। और उस की घर वाली—यशोदा की माँ क्या कहेगी? भैंसों का नाम सुनते ही उस के देह में आग लग जाती है। रगलाल मन-ही-मन चिन्ता करता हुआ बीच-बीच में विद्रोह कर उठता था। क्यों? किस का डर है? और किस का भय है और घर ही किस का है? और मकान मालिक कौन है? किस की बात सुनेगा वह? खेती-बारी कैसी होगी, यह बात कौन जानता है? रगलाल के मन में हुआ कि मिट्टी के नीचे सोयी हुई लक्ष्मी जाग उठी है। मिट्टी के नीचे बस हल के स्पर्श ही माता पृथ्वी अपनी झोली में सब कुछ ले कर उस के सामने आ खड़ी होगी।

लेकिन यह भाव स्थायी नहीं रहता उस के मन में, फिर वह अपनी पत्नी और अपने बेटे के मुख की याद करते जैसे उदास हो जाता। मन ही मन फिर वह उस के खुशामद की बात सोचने लगता। घर आते ही उस ने यशोदा से हँस कर कहा—सचमुच एक जोड़ा हाथी ही खरीद कर लाया हूँ, तेरी ही बात रही। यशोदा ने सोचा कि शायद पिता जी ए.व ऊँचे लम्बे-चौड़े एक जोड़े बैल खरीद लाये हैं। उस ने कहा—बहुत बड़े बैल अच्छे नहीं होते। उन की गढ़न बड़ी सख्त होती है, खैर।

रगलाल ने हँस कर कहा—मैं ने बैल नहीं खरीदे, मैं भैंसों की जोड़ी खरीद लाया हूँ।

यशोदा ने आश्चर्य से कहा—भैंसे?

—हाँ।

—तुम ने भैंसे खरीदे? यशोदा की माँ ने कहा।

—हाँ।

—और तुम फिर अभी हँस रहे हो, मेरी देह जली जा रही है। यशोदा की माँ ने तिक्त भाव से कहा।

—अहा, अरे भाई, एक बार अपनी आँख से देखो तो और देख कर कहो। लाओ-लाओ लोटे का पानी इधर दो, जरा हल्दी लाओ, तेल लाओ, सिन्दूर लाओ और राम-राम कर के भैंसों को घर में बाँधो।

भैंसों को देख-सुन कर यशोदा का मुँह और भी गिर गया उस ने कहा —चलो, इस बार जो कुछ भी पुआल और चारा है वह सब इन के पेट में भर दो। बाप री बाप इन का पेट! ये तो बिलकुल कुम्भकरण हैं। भला कहाँ से इन के लिए खुराक जुटेगी?

यशोदा की माँ भौचक्की-सी खड़ी दोनों भैंसों को देख रही थी—भले ही भयंकर हों ये लेकिन एक रूप हैं। वाह, आदमी इनकी ओर देखे तो देखता ही रह जाये। दोनों भैंसे जरा-सा सिर झुका कर तिरछी नज़रों से सभी को देख रहे थे। क्या भीषण दृष्टि थी!

रंगलाल ने कहा—लाओ-लाओ, पैरों पर पानी डालो।

—बाबा-रे! उन सबों के पास नहीं जा सकती।

—नहीं-नहीं! आओ तुम, आओ, कोई डर नहीं, चली आओ। गऊ सीधा है।

यशोदा की माँ धीरे-धीरे डर के साथ आगे बढ़ी। दोनों भय से फों-फों करते हुए जैसे कुछ कहना चाह रहे थे। रंगलाल ने कहा—ओ खबरदार, ये तुम लोगों की माँ है। तुम लोगों को भात खिलायेगी, भूसी देगी। ये घर की मालकिन है, इस को पहचान लो।

तब भी यशोदा की माँ झिझक कर आयी, बोली—नहीं भाई, तेल और सिन्दूर तथा हल्दी तुम खुद ही उस के सींग में लगा लो। मैं नहीं लगा सकती। यह तो जैसे काला पहाड़ जैसा चेहरा है।

रंगलाल बोल उठा—वाह, क्या बात कही! एक का नाम 'काला पहाड़' ही रहेगा।

—अच्छा, यह जो मोटा है, इस का नाम तो काला पहाड़ रहेगा। और इस दूसरे का नाम क्या होगा जरा बोलो तो?

जरा सा सोच कर उस ने कहा—एक का नाम कुम्भकरण रहे।

यशोदा ने कहा है। ठीक ही कहा है।

यशोदा की माँ भी प्रसन्न हो उठी—लेकिन यशोदा प्रसन्न नहीं हुआ।

नाराज हो कर रंगलाल ने कहा—यह भारी चेहरा देखने का मैं आदी नहीं हूँ। चाहे वह मेरा गुरु हो चाहे मेरा मालिक हो।

रंगलाल काला पहाड की पीठ पर चढ़ कर कुम्भकरण को हाँकता हुआ नदी के किनारे उन्हें चराने जाया करता था। फिर लौटता था तीन बजे शाम को। यह केवल चारे बचाने के लिए नहीं, बल्कि उसे जैसे एक नशा सा हो गया था। घर के सभी लोग उस से नाराज़ थे, यहाँ तक कि उस की घर वाली भी।

रंगलाल हँस कर कहता—इस बार देखो, मैं पूआल कितने में बेचता हूँ। और उसे ही बेच कर तुम्हारे लिए एक गहना खरीद दूँगा।

यशोदा की माँ कहती—क्या गहने के लिए मुझे नींद नहीं आती, क्या मैं तुम्हें दिन-रात अँगारों से दागती रहती हूँ, जो तुम गहनों की बात कहते हो?

—किसी दिन बेटा अजगर के या शेर के पेट में चला जायेगा। यशोदा कहता।

बात सच है। नदी के किनारे साँपों का बहुत डर था, बीच-बीच में एकाध शेर भी आ जाते थे। रंगलाल इन सब से डरता ही नहीं था। नदी के किनारे जा कर एक पेड़ के नीचे गमछा बिछा कर वह सो रहता। दोनों भैंसे चुपचाप चरते रहते, ये जब दूर चले जाते तब वह मुँह से एक विचित्र आवाज करता—आँ-आँ, आय-आय! और फिर भैंसे चिल्लाने लगते। दूर से ही आवाज सुन कर काला पहाड और कुम्भकरण घास छोड कर, मुँह उठाकर उस की ओर आँ-आँ करते हुए दौड़े चले आते! रंगलाल के पास आ कर उस के मुँह की ओर ताक कर वे जैसे प्रश्न करते—क्यों चिल्ला रहे हो?

रंगलाल दोनों के गालों पर थप्पड मार कर कहता—तुम लोगों के पेट में आग लगी है। घास चरते-चरते इतनी दूर चले जाओगे। यहीं पास में ही चरो।

दोनों भैंसे फिर कहीं न जाते, वे वहीं पर आँख मूँद कर सो रहते। कभी-कभी वे पगुरी करने लगते, कभी-कभी नदी में डूबे रहते। रंगलाल के

पुकारने पर नदी में से उठ कर चले आते।

अपने खेतों में जब वह हल चलाता तो बहुत बड़ा एक हल उस की मुट्ठी में होता। काला पहाड़ और कुम्भकरण खेल-खेल में ही उस काली मिट्टी को चीरते हुए आगे बढ़ते रहते। एक हाथ से भी गहरा गड्ढा मिट्टी के नीचे बनता चला जाता। एक बहुत बड़ी बैलगाड़ी में एक तल्ले मकान जितना ऊँचा धान का बोझा लाद दिया जाता और वे दोनों उसे हँसी-हँसी में जैसे खींच ले जाते। लोग अवाक् हो कर ताकते रहते।

बीच-बीच में 'काला पहाड़ और 'कुम्भकरण' को ले कर बहुत बड़ी विपत्ति खड़ी हो जाती। एक-एक दिन बीच में वे दोनों राक्षस की तरह आमने-सामने खड़े हो कर क्रोध में भों-भों किया करते। नीची गरदन कर के वे अपना सींग ऊँचा उठा कर, सामने वाले दोनों पैरों से मिट्टी कुरेदते हुए आगे बढ़ जाते और उन की लड़ाई शुरू हो जाती और रमलाल को छोड़ कर किसी की भी हिम्मत नहीं पड़ती कि उन के सामने जाये। रमलाल एक बहुत बड़ी बाँस की लाठी ले कर बिना किसी डर के उन दोनों के बीच खड़ा हो कर मारना शुरू करता। मार के आगे वो दोनों चुपचाप खिसक जाते। रमलाल उस दिन उन दोनों को ही सज़ा देता। दोनों को ही अलग-अलग बाँध कर रखता, और उस दिन उन्हें दाना-पानी, भूसी, चारा कुछ भी नहीं देता। इस के बाद उन दोनों को अलग-अलग सहलाता। फिर उन्हें पेट भर कर खिलाता, फिर दोनों को एक साथ मिला देता। साथ ही साथ उन दोनों को उपदेश दे देता—छिः, झगड़ा नहीं किया जाता। एक साथ मिल-जुल कर रहोगे।

तीन मास बाद हठात् एक दिन एक दुर्घटना हुई। गरमी का समय था। रमलाल नदी के किनारे एक झाड़ी पे निश्चिन्त हो कर सो रहा था। काला पहाड़ और कुम्भकरण दोनों थोड़ी दूर पर घास चर रहे थे। हठात् एक दूसरे तरह की आवाज़ सुन कर रमलाल की आँखों से नींद उड़ गयी, उस का खून जमने लगा। उस ने देखा कि जहाँ से झाड़ी शुरू होती है उसी रास्ते से एक चीता हिंस्र भाव से उसी की ओर ताक रहा था। भयानक चीता था वह। घों-घों करते हुए जैसे वह आक्रमण की सूचना दे रहा था। रमलाल डरपोक नहीं था। उस ने कई बार पहले भी चीतों के शिकार में भाग लिया था। रमलाल ने ठीक समझ लिया कि इस मौके रास्ते से ही

कारण चीता यहाँ घुसने में डर रहा था नहीं तो वह अब तक आक्रमण कर चुका होता। वह जल्दी से घिसटता हुआ उलटी तरफ़ चला गया और उस झाड़ी के पीछे वाले बहुत बड़े पेड़ की आड़ से आवाज लगायी—आँ-आँ-आँ!

एक क्षण के ही बाद उधर से भी आवाज आयी—आँ-आँ-आँ!

चकित हो कर चीते ने चारों ओर देखा। उस की ओर काला पहाड़ और कुम्भकर्ण चले आ रहे थे। चीता भी अपने दाँतों को निकाल कर गरजने लगा। रंगलाल ने देखा कि काला पहाड़ और कुम्भकर्ण कितने भयंकर होते हैं। इतनी भीषण मूर्ति नहीं देखी थी उन की। धीरे-धीरे वे दोनों नजदीक आते हुए भी उलटी तरफ जा रहे थे। थोड़ी ही देर में वे दोनों चीते के दो तरफ़ खड़े हो गये। अब चीता बीच में था और उस के एक तरफ काला पहाड़ और दूसरी तरफ कुम्भकर्ण। चीते ने विपत्ति ताड़ लिया। चीता छोटा भले हो लेकिन फिर भी है तो वह चीता। हठात्, उछल कर वह कुम्भकर्ण के ऊपर कूद पड़ा। दूसरे ही क्षण काला पहाड़ अपनी सीधी सींगों के साथ आगे बढ़ा। काला पहाड़ के सींग के चपेट से चीता कुम्भकर्ण की पीठ से दूर छिटक कर गिर पड़ा। आहत कुम्भकर्ण पागलों की तरह आगे बढ़ा और चीते के पेट में उस ने अपनी दोनों लम्बी तीक्ष्ण सींगें घुसेड़ दीं। उस की सींगें चीते के पेट में फँसी हुई थीं। मुमूर्षु चीते ने कुम्भकर्ण की गरदन अपने जबड़े में पकड़ लिया। दूसरी तरफ से काला पहाड़ आ कर चीते के ऊपर अपनी सींगों से वार करने लगा। रंगलाल भी उत्तेजना से उन्मत्त हो कर अपनी लाठी द्वारा चीते को पीटे जा रहा था। थोड़ी ही देर बाद दोनों ही पशु मिट्टी पर गिर पड़े। चीता अभी जीवित था लेकिन केवल दो-एक अंग ही वह हिला पा रहा था। कुम्भकर्ण नीचे गिरा हुआ हाँफ रहा था, उस की दृष्टि रंगलाल की ओर थी और उस की आँखों से लगातार आँसू गिर रहे थे।

रंगलाल बालकों की तरह रोने लगा। सबसे बड़ी दिक्कत हुई काला पहाड़ को ले कर। वह लगातार आँ-आँ करता हुआ चिल्लाता और रोता रहता।

रंगलाल ने कहा—शायद इस का जोड़ चला गया है। इसलिए यह नहीं रह पा रहा है। इस का एक जोड़ बाजार से खरीदना ही होगा।

दूसरी बार के बाजार में बहुत देखने-सुनने के बाद काला पहाड़ का एक साथी वह खरीद लाया। काफी रुपये लगे। एक ही भैंस का दाम देना पड़ा डेढ़ सौ रुपया। फिर भी काला पहाड़ के योग्य वह साथी नहीं हुआ। इस नये भैंसे की उम्र अभी कच्ची थी, अभी वह बढ़ेगा। अभी तो केवल आगे के दाँत निकले हैं। बड़ा होने पर वह भी काला पहाड़ की ही तरह होगा, ऐसा रंगलाल को लगता है।

लेकिन काला पहाड़ उस नये भैंसे को देख कर ही क्रोध में भर उठा। अपनी सींगें टेढ़ी कर के वह पैरों से मिट्टी खोदने लगा। रंगलाल जल्दी से काला पहाड़ को एक लोहे की जंजीर में बाँध आया। और बोला—तुम्हें नहीं पसन्द आ रहा है? लेकिन यह सब नहीं होगा। मार कर तुम्हारी हड्डी-गुड्डी तोड़ दूँगा।

नये भैंसे को बाँध कर उस ने उसके मुँह में जाब लगा दी। अपनी पत्नी से उसने कहा—काला पहाड़ तो बिलकुल गुस्सा गया है इस को देख कर। देखो न इस का कितना गुस्सा है!

यशोदा की माँ ने कहा—मैं कहती हूँ भला वह कुम्भकर्ण को कैसे भूल सकेगा। कितने दिनों का प्रेम है। यह कह कर उस ने पति की ओर देखा और फिक से हँस पड़ी!

रंगलाल भी हँसा। इधर-उधर देख कर उस ने फुसफुसा कर कहा—जैसे हमारे और तुम्हारे बीच में प्यार है।

—चुप रहो, तुम्हें बोलने का सहूर नहीं है। वे दोनों भैंसे दोस्त हैं।

—हाँ, वह तो है ही है—रंगलाल ने हार मानते हुए भी प्रसन्नता जाहिर की। इस के बाद कहा—अच्छा, उठो-उठो, जाओ थोड़ा पानी, कड़ुवा तेल, हल्दी और सिन्दूर ले कर आओ।

ठीक इसी समय घर का ग्वाला दौड़ा हुआ आया और उस ने कहा—अरे जल्दी आओ, काला पहाड़ तो उस नये को बिलकुल मार डालेगा।

—यह क्या बात हुई रे? मैंने तो उसे लोहे की जंजीर में बाँध दिया था!

रंगलाल दौड़ कर बाहर गया। ग्वाला उस के पीछे-पीछे आया। उस ने कहा—उस ने तो खूँटा ही उखाड़ दिया है। और भीतर-ही-भीतर

असमाप्त

फों-फों कर रहा है।

रंगलाल ने आ कर देखा, ग्वाले की बात बिलकुल ठीक थी। सिकड़ी सहित खूँटे को उपाड़ कर काला पहाड़ नये भैंसे को प्रचण्ड क्रोध से मारे जा रहा है। नया भैंसा काला पहाड़ की तुलना में कमजोर था, इस के अलावा वह बेचारा खूँटे से बँधा हुआ था। चुपचाप चिल्लाये जा रहा था। रंगलाल ने इसे लाठी मारना आरम्भ किया, फिर भी काला पहाड़ वश मे नही आया। निर्मम भाव से वह नये भैंसे को मारे जा रहा था। किसी तरह जब उसे वश मे किया गया तब तक नये भैंसे की अवस्था मौत के करीब थी। रंगलाल माथे पर हाथ दे कर बैठ गया।

यशोदा ने कहा—इस को घर मे मत रखो। इस को बेच दो। इस का फिर जोड़ा खरीद कर लाओगे तो उस से मार-पीट करेगा।

रंगलाल ने बात का जवाब नही दिया। वह चुपचाप सोच रहा था कि यशोदा की बात ठीक है। काला पहाड़ का दिमाग खराब हो गया था। भैंसे का दिमाग अगर एक बार खराब हो जाये तो फिर शान्त नही होता। लेकिन फिर भी काला पहाड़ की आँखो से आँसू गिरता रहता है। एक दिन चरवाहे ने आ कर कहा—मैं आप का काम नहीं कर सकूँगा—हो सकता है किसी दिन काला पहाड़ मुझे ही जान से मार डाले। रंगलाल ने कहा—भैंसे जरा गुस्सैल होते हैं। चल जरा मैं देखता हूँ।

रंगलाल काला पहाड़ के पास आ खड़ा हुआ। लाल आँखें किये हुए काला पहाड़ ने अपना मुँह रंगलाल की गोद मे रख दिया। रंगलाल परम स्नेह से उस की गरदन पर हाथ फेरने लगा।

लेकिन रंगलाल लगातार काला पहाड़ के पास रहता नही कि उसे वह शान्त करेगा। बीच-बीच मे वह अपना मुँह उठा कर चिल्लाना शुरू करता था—आँ-आँ-आँ!

अपना मुँह ऊँचा कर के जैसे वह कुम्भकर्ण को खोजता रहता। पगहा तुड़ा कर वह नदी की ओर चला जाता। रंगलाल के अलावा यदि कोई उसे लौटाने जाता तो वह अड़ कर खड़ा हो जाता।

एक दिन उस ने एक गाय के बछड़े को मार डाला, इस बछड़े के साथ इन दोनों का पहले अच्छा सम्बन्ध था। कुम्भकर्ण और काला पहाड़ जब

पेट भर जाने के बाद बैठ कर पगुरी करने तब वह आ कर उन की नाद से चारा खाता। बहुत दिनों तक वह उन के पेट के नीचे आ कर अपनी मासूमियत में माता के थन भी टटोलता रहता। लेकिन उस दिन काला पहाड़ का मिजाज ठीक नहीं था, उस दिन आते ही उस ने बछड़े को प्रचण्ड क्रोध से अपनी सींगों द्वारा मार गिराया।

अब यशोदा ने रंगलाल की अपेक्षा नहीं की। एक व्यापारी को बुला कर काला पहाड़ को बेच दिया। और बहुत कम दामों में बेचा।

व्यापारी ने कहा—हो सकता है मेरे साठ रुपये पानी में चले जायें। ऐसा बिगड़ैल भैंसा भी कोई लेता है।

यशोदा किसी तरह ठेल-ठाल कर बस पाँच रुपये और बढ़ा सका। पैंसठ रुपये में काला पहाड़ को ले कर व्यापारी चला गया।

रंगलाल चुपचाप जमीन पर बैठा रहा। नीचे ताकता रहा वह।

आं-आं-आं !

रंगलाल चुपचाप बैठा हुआ था। आं-आं शब्द सुन कर वह चौंक उठा। सचमुच यह तो काला पहाड़ है। काला पहाड़ लौट आया। रंगलाल उस के पास चला गया। काला पहाड़ ने उस की गोद में अपना सिर रख दिया।

व्यापारी ने आ कर कहा—मेरा रुपया लौटा दो भाई, यह भैंसा मैं नहीं ले सकता। बाप रे बाप ! यह मेरी जान ले लेगा।

पता लगा कि थोड़ी देर तो काला पहाड़ ठीक था, लेकिन बाद में खूँटा उखाड़ कर यहाँ दौड़ा चला आया।

व्यापारी ने कहा—भाई, जब मैं लाठी उठाता था, बाप रे बाप ! तब कैसे वह ताकता था ! और फिर मुझे दौड़ाया कि एक मील तक दौड़ता रह गया, तब किसी तरह जान बची। इस के बाद वह आप के यहाँ एक साँस में दौड़ा चला आया। भाई, मेरा रुपया लौटा दीजिए।

अपना रुपया ले कर वह चला गया। यशोदा ने कहा—एक काम करो, तुम मेरी बात मानो तो बाजार चले जाओ।

रंगलाल ने कहा—मैं नहीं जा सकता।

—भला और कौन ले जा सकता है ?

लेकिन वह हँसते-हँसते लौट आया। काला पहाड़ को कोई नहीं खरीद सका। उस व्यापारी ने वहाँ ऐसी बदनामी कर दी थी कि कोई उस भैंसे के पास आया तक नहीं।

यशोदा ने कहा—तब अगली बार के बाजार में जाना।

—वहाँ तो वह व्यापारी नहीं जायेगा।

रंगलाल को जाना ही पड़ा। पढ़ा-लिखा नौकरी करता हुआ लड़का। अब वह बड़ा हुआ है। भला उस की बात कैसे काटेगा रंगलाल? और काला पहाड़ को रखने की बात भी ज़ोर दे कर नहीं कही जा सकती। भैंसे का दाम डेढ़ सौ रुपये था। इस के बाद बछड़े के मरने का प्रायश्चित्त सात-आठ रुपये। इसी एक महीने के भीतर खेती बन्द हो गयी, भला इस नुकसान को कैसे पूरा किया जा सकता है।

बाज़ार में एक व्यापारी ने काला पहाड़ को देख कर बड़े प्रेम से उसे खरीद लिया। दाम भी उस ने अच्छा ही दिया—एक सौ पाँच रुपये।

रंगलाल ने कहा—देखो भाई, मेरा यह भैंसा ज़रा मुझ से ज्यादा प्यार करता है। अभी जैसे बाँधा हुआ है वैसे ही रहने दो। मेरे जाने के बाद तुम लोग ले कर जाना। नहीं तो फिर बदमाशी करेगा।

रंगलाल की आँखों से आँसू गिर रहे थे, व्यापारी ने हँस कर कहा—ठीक है।

रंगलाल जल्दी से पैर बढ़ा कर स्टेशन आया और ट्रेन में बैठ गया। पैदल चल कर आने की शक्ति उस में नहीं रह गयी थी।

थोड़ी देर बाद व्यापारी ने 'काला पहाड़' को पगहे सहित खींचा। काला पहाड़ उस की ओर देख कर जैसे चकित हो गया और उस ने चिल्लाना शुरू किया—आँ-आँ-आँ!

वह रंगलाल को खोज रहा था। लेकिन कहाँ है रंगलाल? व्यापारी ने उसे लाठी से धीरे से खोद कर कहा—चलो-चलो!

काला पहाड़ फिर चिल्लाया—आँ-आँ-आँ!

वह खूँटे पर ही खड़ा रहा, वहाँ से नहीं सरका।

व्यापारी ने फिर मारा उसे। काला पहाड़ पागलों की तरह चारों

और रंगलाल को ढूँढ़ रहा है।

कहाँ है वह ? नहीं, वह तो नहीं है वह।

काला पहाड़ बहुत ज़ोर से पगहा तुड़ा कर व्यापारी के हाथ से छूट कर भाग चला।

वह मुँह उठा कर दौड़ता जा रहा था और चिल्लाता जा रहा था—आँ-आँ-आँ !!

व्यापारी कई आदमियों को जुटा कर काला पहाड़ के रास्ते में आ खड़ा हुआ। लेकिन लाठियों की परवाह न कर के काला पहाड़ ने ज्यों ही अपनी सींगों को ऊपर उठाया, लोग प्राण ले कर पागलों की तरह भाग चले।

लेकिन यह क्या ! यह सब तो उस का बिलकुल अपरिचित है।

शहर के रास्ते में दोनों ओर दुकानें, इतनी भीड़। यह क्या है ?

एक घोड़ा-गाड़ी आ रही थी। काला पहाड़ डर के मारे बग़ल के रास्ते पर दौड़ पड़ा। रास्ते के सारे आदमी चिल्ला उठे—किस का भैंसा है यह ? किस का भैंसा है ?

कितना विकट शब्द कर रहा था वह।

एक मोटर आ रही थी। काला पहाड़ ज्ञानशून्य हो गया था। अपने मन की आँखों से जैसे वह अपने घर को देख रहा था और रंगलाल को ज़ोर से पुकार रहा था। वह धक्के से एक पान की दुकान को चकनाचूर करता हुआ उलटे रास्ते की ओर चल पड़ा।

लोग प्राण के डर के मारे इधर-उधर भागने लगे। काला पहाड़ भी प्राणों के भय से भाग रहा था। देखते ही देखते दो आदमी ज़ख़्मी हो गये। काला पहाड़ दौड़ रहा था और चिल्ला रहा था—आँ-आँ-आँ ! लेकिन यह क्या दौड़-धूप कर वह जैसे कुछ भी नहीं खोज पाया। कहाँ है उस का घर ?

फिर वही विकट शब्द ! एक अपरिचित जानवर ! इस बार प्रचण्ड क्रोध से वह लड़ने के लिए तैयार हो गया।

मोटर भी जैसे इसी की खोज में आ रही थी। वह पुलिस इन्स्पेक्टर की मोटर थी। पहले भैंसे की ख़बर वहाँ पहुँच चुकी थी।

मोटर रुकी। काला पहाड क्रोध से आगे बढ़ा। लेकिन इस के पहले एक कठिन ऊँची आवाज़ हुई। काला पहाड़ कुछ भी नही समझ सका। यन्त्रणा से वह छटपटा उठा—दो-चार क्षणों के लिए। इस के बाद वह जमीन पर गिर पडा।

पुलिस इन्स्पेक्टर ने रिवॉल्वर को उस के केस मे खोंसते हुए कास्टेबिल को कहा—डोम लोगों को बुलाओ!

नारी

दवाखाने के सामने एक टैक्सी आ कर रुकी। आवाज़ करता
हुआ इंजिन धुआँ छोड़ कर बन्द हो गया।

डॉक्टर ने प्रेस्क्रिप्शन लिखते-लिखते मुँह उठाया। उस
इंजिन के बन्द होने के शब्द से डॉक्टर ने समझा कि कोई मोटर
से आया है। लड़ाई के इस वक़्त पेट्रोल पर जो कंट्रोल था उसे
देखते हुए मोटर का आना आदमी के मन में उत्सुकता
जगायेगा ही। खास कर के जहाँ बड़े-बड़े डॉक्टर—जिन की
फ़ीस बत्तीस रुपये, चौंसठ रुपये और सौ रुपये हो उन के सामने
मोटर खड़ी हो तो दूसरी बात है। लेकिन एक साधारण से
मध्यम वर्गीय डॉक्टर के घर, जिस की फ़ीस केवल आठ रुपये
हो, उस के दरवाज़े के सामने यदि कोई मोटर पर आये तो
पता नहीं कैसा लगता है। डॉक्टर और भी आश्चर्यान्वित
हुआ। अकेली एक महिला आयी है। दूसरे ही क्षण डॉक्टर ने
अपनी आँखें नीची कर के दवा की पुरज़ी लिखनी शुरू की।
डाक्टर के पास कितने लोगों की भीड़ रहती है। रोगियों के
बारे में डॉक्टरों का मन एक प्रकार से महात्माओं की तरह
निर्विकार रहता है। उन्हें कोई उत्सुकता भी नहीं रहती और
कोई विस्मय भी नहीं रहता। रोगी आता है, डॉक्टर देखता
है। टेम्परेचर, हार्ट, नब्ज़, जीभ, पेट, आदि कई प्रश्न कर के
पुरज़ी लिखता और फिर बता देता है कि क्या खाना होगा।
फिर दूसरे आदमी को कहता है—आप को क्या हुआ है?

—बहुत जोर की तकलीफ है, किसी तरह से अपना मुंह टेढ़ा कर के आदमी कहता है।

—हां, दर्द तो है, लेकिन है कहां?

वह आदमी अपना मुंह ऊपर उठा कर अपने एक दांत की ओर उंगली दिखा कर किसी तरह कहता है—डांट!

पूरे तवर्ग का उच्चारण करने के लिए दांत के साथ जीभ का स्पर्श जरूरी होता है इसी लिए जीभ को तालू तक ले जा कर जल्दी से वह द की जगह ड तथा त की जगह ट निकाल कर काम निकालता है। डॉक्टर कहता है—डेन्टिस्ट के पास जाइए।—फिर कहता है—जरा अंगुली से दांत हिलाइए तो, ज़रा देखूं।

अंगुली से दांत हिलाते-हिलाते भला आदमी हूं-हूं करने लगता है।

डॉक्टर कहते हैं—प्रफुल्ल, ज़रा दांत उखाड़ने वाली मशीन लाओ तो।

भला आदमी कांप उठता है—नहीं, नहीं।

—तब मेरे पास क्यों आये?

—ज़रा-सी कोकिन।

—दे रहा हूं। मुंह बाइए तो। हां, ज़रा और मुंह बाइए। हां, हां, हाथ हटाइए तो, बस हो गया, पानी ले कर कुल्ला कर लीजिए और दांत बाहर फेंक दीजिए।...

—तुम्हारा क्या है भाई? एँ?

—पेट में बहुत दर्द है साहब, पाखाना हो रहा है, ज्वर भी है।

—हूं। देखूं? कपड़ा उतारो!—पेट पर हाथ रख कर डॉक्टर देखता है, फिर पूछता है—पाखाने के साथ पेट में दर्द होता है क्या? आंव होता है क्या?

—हां बाबू।

—खून गिरता है?

—हां बाबू, ताजा खून गिरता है।

—के बार पाखाना हुआ?

—दस-बारह दफा।

—हूं!—डॉक्टर पुरजी लिखता है।—खूब सावधानी से रहना।

बीमारी खराब है। बैसिलरी डिसेन्टरी। कोई कड़ी चीज मत खाना—छेने का पानी, बार्ली और डाभ का पानी यही खाना-पीना।…

—आप को क्या हुआ है ?

—वही तो परसों मैं अपनी लड़की को लाया था, वही कमला।—भले आदमी कहते हैं।

—कौन-सी लड़की, बताइए तो ?

—मेरी लड़की।

—हाँ ! कौन लड़की ? क्या उम्र है ? कौन-सी बीमारी है ?

—कमला नाम है लड़की का। पन्द्रह-सोलह साल की उम्र है, छाती में दर्द है, और साथ ही ज्वर भी।

—ओ ! हुगली से जो आयी है ?

—हाँ !

—क्या खबर ? कैसी है ?

—कुछ नहीं कम हुआ। ज्वर थोड़ा ज्यादा हुआ था।

—हूँ ! कहाँ है वह ? साथ लाये हैं ?

—नहीं, कहिए तो दोपहर के बाद लाऊँ ?

—लाइए। आप की लड़की को प्लूरिसी हुई है। अच्छी दवा की जरूरत है। कैल्सियम देना होगा इन्जेक्शन के रूप में, नहीं तो आगे बीमारी खराब हो जायेगी।

—खराब हो जायेगी ?

—जी हाँ। टी. बी. हो सकती है।

—बारह बजे के बाद आइएगा, ठिकाना दे जाइए कम्पाउण्डर के पास।…

—तुम्हें क्या हुआ जी ? हूँ ? तुम्हें तो साफ रोग है। दवा खा रहे हो ? आ इधर आ।

—फिर शराब पी रहा है ?

—जी नहीं।

इसी मुहल्ले का एक गरीब आदमी है। डॉक्टर उस की आँखों को उलट कर देखता है। पेट को दबा कर देखता है।—दर्द होता है ?

—जी हाँ, पहले से कम।—दर्द से कराहता हुआ आदमी बोला।

—हूँ। दवा लेता जा। लेकिन शराब पीने पर तू और नहीं बचेगा।

डॉक्टर पुरजी लिखते-लिखते बैठ गया। ठीक उसी समय टैक्सी पर वह महिला आयी। डॉक्टर ने एक बार आँखें उठा कर देखा। अकेले उतरी वह। प्रश्नवाचक चिह्न के रूप में डॉक्टर के ललाट पर कुछ रेखाएँ उभरीं। इस के बाद फिर उस ने अपना मन प्रेस्क्रिप्शन लिखने में लगा दिया।

यह स्त्री परिचितों की भाँति औरतों वाले पार्टीशन किये गये घर में जा कर बैठी। कम उम्र की लम्बी-पतली लड़की थी वह। रोगियों की चंचलता बढ़ गयी। उन में से थोड़े प्रसन्न भी हुए। हरे केले के पत्ते के रंग की साड़ी देख कर उन की आँखों में प्रसन्नता आ गयी।

डॉक्टर ने एक से पूछा—आप को क्या हुआ है?

—पहले उस लड़की को देख लें, उस की टैक्सी बाहर खड़ी है।

डॉक्टर ने कहा—वही ठीक होगा।

चैम्बर में घुस कर डॉक्टर ने पूछा—आप को क्या हुआ है?

लड़की हँसी। डॉक्टर आश्चर्यचकित हो उठा। लड़की की हँसी के कारण ही उस का चेहरा जाना-सुना लग रहा था। लड़की के सुन्दर चेहरे पर ठीक एक ही स्थान पर दोनों गालों पर प्रायः एक ही आकार के तिल थे। बहुत जाना-पहचाना चेहरा था यह।

—पहले और रोगियों को देख लीजिए। मुझे थोड़ा समय लगेगा। लड़की ने कहा।

डॉक्टर लड़की की ओर ही ताकता खड़ा रहा।

—मुझे पहचान रहे हैं?—लड़की ने कहा।

—ठीक याद नहीं पड़ रहा है। आप···

—मैं आप नहीं हूँ। मैं तुम हूँ। जाइए, पहले और रोगियों को देखिए।

डॉक्टर और आश्चर्यचकित हो उठे। कौन? कौन? कौन?

—जरा मेरा हाथ देखिए, डॉक्टर साहब!

—क्या हुआ है तुम्हें?—हाथ पकड़ लिया डॉक्टर ने!—कौन है

यह? उँह, यह भी भला क्या होता है!…

लड़की ने हँस कर कहा—मुझे पहचाना?

—आप—नहीं तुम, तुम कौन हो?

—जब देख कर ही नहीं पहचान पा रहे हैं, तब नाम बताने से क्या याद होगा?

—याद आ रहा है एक आदमी। लेकिन यह भला कैसे हो सकता है! वह तो…

लड़की ने उठ कर डॉक्टर को प्रणाम किया—समझ गयी मैं आप ने ठीक पहचाना। मैं ही हूँ वह।

—निर्मला? तुम?

निर्मला की बात मुँह से छीन कर डॉक्टर ने हँस कर कहा—तुम कैसे बची?

वह ज़ोर से ठठा कर हँस पड़ी, इस के बाद उस ने फिर कहा—मैं बच गयी हूँ। निओमोथोरॉक्स के द्वारा मैं बची हूँ। यादवपुर में चौदह महीने मैं बेड पर पड़ी हुई थी। बिछौने से मुझे उठने नहीं दिया। बचने के लिए भी कितना दर्द भोगना पड़ता है!—वह फिर हँस उठी।

डॉक्टर का चेहरा प्रसन्नता से खिल उठा—वाह, बहुत प्रसन्नता हुई तुम्हें देख कर, क्या सुन्दर चेहरा हो गया है तुम्हारा! और कोई शिकायत तो नहीं है?

—आप देखिये न!

डॉक्टर ने चारों ओर आला लगा कर देखा—नहीं, कुछ नहीं। फिर भी ज़रा एक बार एक्सरे ले लेना।

आँचल के भीतर से एक बड़े लिफ़ाफ़े को निकाल कर दिया लड़की ने।

—लायी हूँ, देखिये न।—अपने सिर पर का आँचल ज़रा खींच कर थोड़ा हँसने लगी वह।

फोटो देखते-देखते डॉक्टर बोले—तो यादवपुर में ही तुम्हें बेड मिल गया था?

—हाँ, मिल गया था—फ्री बेड नहीं, पेइंग बेड।

—पेइंग बेड !—डॉक्टर आश्चर्यचकित हो उठा—वह तो···

"वह तो बहुत खर्चीला होता है।—डॉक्टर के मुँह की बात छिन कर उस ने कहा और हँस पड़ी।—आप देखते नहीं हैं, टैक्सी से आयी हूँ ? मेरे कपड़े देख कर क्या कुछ अन्दाज नहीं लगता ? अब आप देख नहीं रहे हैं क्या कि मेरे दिन बदल गये है ?

डॉक्टर चकित हो कर बोला —हाँ-हाँ ! बहुत खुश हुआ जान कर। लेकिन···डॉक्टर थोड़ा रुका। इस के बाद फिर जैसे कुछ हुआ समझ कर कहा—रमेन्द्र तो अभी उसी फैक्टरी में नौकरी कर रहा है। उसे देख कर तो नहीं लगता कि वह इतना रुपया-पैसा खर्च कर सकता है।

—डॉक्टर साहब, लोग कहते हैं कि स्त्री का चरित्र और पुरुष का भाग्य देवता भी नहीं समझ सकते ! लेकिन मैं तो स्त्रियों के चरित्र मे कुछ भी ऐसा नहीं पाती, हाँ, स्त्रियों का भाग्य ही बताना जरा कठिन है। पुरुष काम कर के उस का फल पाता है, हम लोग उसी भाग्यफल के रूप में पुरुषों के हाथ मे पड़ती हैं। दर असल पुरुष का ही चरित्र समझना कठिन है।—लड़की ने कहा।

डॉक्टर थोड़ी देर तक चुप रहा। इस के बाद उस ने कहा—बहुत प्रसन्नता हुई तुम्हें देख कर, अच्छा तो फिर जाओ। मुझे आज बाहर जाना है कई जगह।

लड़की ने कहा—वाह, आप तो मजेदार आदमी हैं। मेरे रोग के बारे में कुछ नहीं बताया, और कह रहे हैं कि तुम जाओ !

—तुम्हें कौन सा रोग है ?

लड़की ने एक कागज डॉक्टर के हाथ मे दिया। एक क्लीनिक की रक्त-परीक्षा की रिपोर्ट थी।—रोगिणी निर्मला देवी। खून में उपदंश का विष। परिमाण—आठ-दस (८-१०)।

निर्मला ने कहा—तो मैं अब···। फिर वह थोड़ा रुकी। इस के बाद थोड़ा सा हँस कर उस ने कहा—मैं अब···। फिर थोड़ी रुकी और कहा—मैं अब वेश्या हूँ डॉक्टर साहब !

डॉक्टर के लिए जैसे यह कल्पनातीत था। उसे जैसे धक्का लगा। निर्मला ने अपने बायें हाथ को फैला कर अपनी आँखो के सामने किया

और दाहिने हाथ से अपनी कुहनी से ऊपर की ओर सुडौल गोरी बाँह की नीली नसों के ऊपर हाथ फेरते हुए कहा—इन्जेक्शन लेते-लेते जैसे सारी नसें बैठ गयी हैं।

प्रायः डॉक्टर इन्जेक्शन बायें हाथ में देते हैं। यह किसी उदासीनता के कारण नहीं बल्कि यही डॉक्टरों का अभ्यास होता है। लोग यह समझते हैं कि वे शायद दाहिने हाथ उदासीन हों। इन्जेक्शन भी ऐसे सुन्दर ढंग से कि प्रायः पलक गिरते न गिरते काम समाप्त। डॉक्टर ने सिरिन्ज की सुई निकाली, एक टुकड़ा रुई से उसे पोंछा। हँस कर बोले—बस, थोड़ी देर बैठी रहो।

डॉक्टर बाहर चले आये।

भीतर से निर्मला ने पुकारा—डॉक्टर साहब!

—क्या है? कुछ तकलीफ हो रही है?

—नहीं।

—तब?

—आप की फ़ीस?—लड़की ने दो नोट निकाल कर रख दिया।

डॉक्टर ने एक नोट लौटाते हुए हँस कर कहा—इतने से ही होगा। अब तुम जा सकती हो। तुम्हारी टैक्सी खड़ी है।

—खड़ी रहने दीजिए।—लड़की खड़ी हो गयी—हाँ, एक बात है!

—बोलो?

—ज़रा सा ड्रिंक कर सकूँगी?

—ड्रिंक?—डॉक्टर अवाक् हो गये। निर्मला की ओर देख कर। थोड़ी देर बाद अपने को सँभाल कर बोले—नहीं।

—लेकिन मेरी आदत हो गयी है। इस के अलावा···उस ने हँस कर कहा—पुरुष चरित्र रहस्यमय होता है। अगर मैं ड्रिंक नहीं करूँ तो 'वे' नाराज़ हो जाते हैं।

डॉक्टर थोड़ा चुप रहा और फिर कहा—नहीं, उसे बन्द रखना होगा।

एक नमस्कार कर के निर्मला चली गयी।

डॉक्टर के कलेजे से एक भारी साँस अनजान में निकल गयी।

निर्मला ने निःसकोच भाव से कहा—मैं···मैं···अब। शराब पीना अब मेरी आदत बन गयी है।—दूसरे ही क्षण डॉक्टर जैसे सब मोह छोड़ कर अपना पैर पटक कर चल पड़ा। टी.बी. के एक रोगी को कैल्शियम देना होगा। प्रभा को। मैलिग्नैंट मलेरिया की रोगी है वह। फिर तीन टायफायड के केस हैं। सिगरेट सुलगा कर डॉक्टर अपनी गाड़ी पर चढ़ गया।

आदमी विचित्र होता है। डॉक्टर इस की बात को सोच रहा था। शाम का वक्त था। शाम को डॉक्टर के यहाँ रोगी आते हैं पर सख्या में बहुत कम, शायद दो-चार। डॉक्टर शाम को कोट और पैण्ट नहीं पहनता। धोती और कुरता पहन कर ही कुरसी पर बैठा रहता है। दो-एक सिगरेट पीता है और कभी शौक होने पर हुक्का भी। रोगियों को विदा कर के किताबें पढ़ता है कभी-कभी। मनोविज्ञान की ओर डॉक्टर की विशेष रुचि है। इस से चिकित्सा में उसे सहायता मिलती है। एक दोस्त की बीवी को बीच-बीच में दर्द होता है छाती में, डॉक्टर उसे केवल इन्जेक्शन के रूप में पानी का इन्जेक्शन देता है। थोड़ी देर बाद यह महिला चगी हो उठती है। कहीं भी कोई दर्द नहीं रहता है, डॉक्टर की धारणा है कि जो लोग लगातार रोग से परेशान रहते हैं, उन में से साठ प्रतिशत लोगों का रोग मन का रोग होता है। एक बहुत बड़े घर का लड़का अभी-अभी डॉक्टर के यहाँ से उठ कर गया है। लड़का रोज ही शाम को डॉक्टर के यहाँ आता है, गप्प मारता है और चला जाता है। सप्ताह में वह एक बार अपने लगन की परीक्षा करवाता है, उस की धारणा है कि उसे हार्ट की बीमारी है। किसी भी क्षण कोई विपत्ति आ सकती है। इसी लिए उस ने अपनी शादी तक नहीं की है। बहुत कुछ समझाने पर भी डॉक्टर उसे विश्वास नहीं दिला सके। डॉक्टर के पास बैठ कर गप्प मारना उस का उद्देश्य नहीं है, बल्कि असली बात यह है कि डॉक्टर के पास बैठने पर उसे कुछ भरोसा मिलता है। उस के जाने के बाद ही डॉक्टर अपने हाथ की किताब खोल लेता है। किसी बहुत जोरदार लेखक की किताब है। समरसेट माम का वह बहुत बड़ा भक्त है। माम की ही किताब है यह, 'रेजर्स एज'। कई क्षणों के बाद डॉक्टर ने मुँह उठा कर रास्ते की ओर देखा। रास्ते में लगातार लोग आ-जा रहे थे। इसी तरफ़ गंगा घाट जाने का रास्ता है। लोग इलिश मछली हाथ में

ले कर चले आ रहे हैं, घाट से। पुण्य-लोभी लडकियाँ बहुत रात को ही गंगा-स्नान से लौटी आ रही है। लगता है आज कोई त्योहार है। सज-धज कर कई लड़कियाँ गंगा घाट से हवा खा कर भी लौट रही हैं। दो-चार चतुर रूपाजीवा स्त्रियाँ लपलपाती चलती हुई लपट की तरह अपने पीछे पतंगों को भी लिये आ रही थी, सामने एक गली है उसी गली में वे आ रही हैं। गली में जाते समय एक विशेष भंगिमा से पीछे मुड कर वे ताक रही हैं। जैसे एकाएक मुड कर ताक रही हों वे। इसी बीच उन के पीछे आने वाले भी उन्हें देख लेते है और वे भी उन्हें निर्भय आँखों ही आँखों बुला लेती हैं।

निर्मला की याद आयी उसे। उस की बात उस के कानों में गूँजने लगी—अब मैं···वेश्या हूँ डॉक्टर साहब!

वही लड़की। लम्बे आठ महीने तक डॉक्टर ने उस की दवा की थी, केवल एक दिन उस से बातचीत की थी डॉक्टर ने, केवल एक दिन। एक-एक केस डॉक्टर के मन में भरा पड़ा है। विचित्र किस्म का रोग है। विचित्र रोगी भी हैं। विचित्र-विचित्र रोगियों के घर भी हैं। लेकिन इस लडकी के बारे में···। कुछ भी विचित्र नहीं था इस लडकी में। बस केवल रोगी थी वह। उस निर्मला के भीतर बड़ी सहनशीलता थी। मन-ही-मन डॉक्टर उस की प्रशंसा भी करता।

तीन साल पहले की बात होगी। युद्ध अभी शुरू ही हुआ था। सन् १९४१। डॉक्टर को याद आ रहा है—तीन साल पहले। प्रातःकाल एक कम उम्र का युवक आया था। अच्छा चेहरा-मोहरा था। पच्चीस-छब्बीस साल का रहा होगा। रोगियों की भीड जमा हुई थी। टेबुल के उस पार वह खड़ा हुआ था। उस ने कहा था कि डॉक्टर साहब, आप को एक बार मेरे घर जाना होगा। डॉक्टर ने उस के मुँह की ओर देखा। उस युवक के चेहरे पर उस की आँखों पर कुछ परेशानी नजर आ रही थी।

—अभी चलना होगा आप को। मोस्ट अरजेण्ट?

—क्या केस है? 'अर्जेण्ट' कह रहे है?

—एक लड़की दर्द से छटपटा रही है। लड़की 'प्रेगनेंट' है। इन्स्टैंट प्रेगनेन्सी।

—प्रेगनेंट ! दर्द कहाँ हो रहा है ?

—पेट में ।

—मैं पूछ रहा हूँ—दर्द कैसा है, माने डेलिवरी का ?

—नहीं, नहीं । डॉक्टर साहब ! अभी तो उस का समय भी नहीं हुआ, इस के अलावा दर्द भी वैसा नहीं···

—अच्छा, तो जरा बैठिए । इन लोगों को जरा देख लूँ फिर चल रहा हूँ ।

—नहीं । बहुत तकलीफ है, एक बार आप को अभी चलना होगा । हाथ जोड़ कर उस ने कहा । उस की आँखों में आँसू आ गये ।

डॉक्टर नहीं नहीं कर सके । उठ पड़े । उस ने ही डॉक्टर का बक्स अपने हाथ में ले लिया ।

दरिद्रों का टोला था यह । डॉक्टर बेचारे हँसे । वहाँ के रहने वाले सभी भलेमानुस और गृहस्थ थे । हाँ, लेकिन गरीबों का मुहल्ला । कच्चे घर, कच्ची मिट्टी की दीवार । गिज-गिज करते हुए नाबदान, मक्खी और मच्छर तथा बदबूदार वातावरण । एक घर के सामने बरामदे में एक पूरा परिवार । मैला-कुचैला हाफ़पैण्ट पहने हुए लड़कों का झुण्ड, कोई खाँस रहा है, कोई रो रहा है, कोई लाई खा रहा है । सँकरी लम्बी गली के मोड़ पर काँव-काँव करते हुए कौवे आ रहे हैं । एक शौकीन आदमी एक रोंये-दार कुत्ते के साथ आ रहा है और वह कुत्ता कौवों को देख कर भौं-भौं कर रहा है । उसी कोने पर एक जगह को घेर कर औरतों के स्नान करने और बरतन माँजने की जगह बनायी गयी है । उसी के बीच कालरा, टाय-फायड जैसे रोग पलते रहते हैं । ये भोगते हैं और मरते हैं । फिर भी इन के जीने की शक्ति कितनी प्रचण्ड है ! विज्ञान के अनुसार तो इन्हें मर जाना चाहिए था तब भी ये अपनी जीवनी शक्ति के कारण बचे हुए हैं । उसी मुहल्ले के बीच कुछ लोगों के बरामदे और फर्श सिमेण्टेड भी हैं । सिमेण्ट के साथ लाल रंग मिला कर अपने शौक़ का भी परिचय दिया है कुछ लोगों ने । इनके काठ का दरवाजा लेकिन फिर भी उस पर हरा रंग पोता हुआ । खिड़कियाँ छोटी बड़ी-बड़ी प्रायः डेढ़ फुट लम्बी । कुछ खिड़कियों में लोहे के डण्डे लगे हुए और कुछ में काठ के डण्डे और किन्हीं-किन्हीं में परदा

लगा हुआ है। उस दरवाज़े पर एक परदा लटक रहा था। उसी के सामने दो जवान आदमी बैठे हुए थे।

भीतर एक चौकी पर लडकी सोयी हुई थी। सफेद रंग के पेटीकोट और ब्लाउज के ऊपर एक धोती पहनी थी उस ने। देखते ही पता लगता था कि लडकी विधवा है। उस का चेहरा घूंघट से ढका हुआ था, फिर भी उस ने जैसे घूंघट को थोडा और खीच दिया। इस के बाद चुप-चाप पडी रही बिस्तर पर। यह स्तब्धता, यह सहनशीलता डॉक्टर को बहुत अच्छी लग रही थी। सफेद बिछौने पर सोयी हुई सफेद वस्त्रो मे लिपटी हुई वह लडकी दर्द के बीच भी डॉक्टर को रात्रि मे उमड़ती हुई एक नदी की तरह लगी। डॉक्टर कई दिन प्रायः रात को ग्यारह-बारह बजे के बीच गगा के किनारे घूमता रहता है। नदी का जो अपना सुन्दर तरगाकुल गतिशील रूप होता है, क्या दिन और रात के बीच उस रूप मे कोई परिवर्तन नही होता? लेकिन मनुष्य की आँखो मे रात्रि की अस्पष्टता के बीच जैसे उस का रूप परिवर्तन होता है···तब नदी के उस रूप को देखा नही जा सकता ···ऐसा लगता है जैसे नदी की प्रशान्त, शुभ्र, सुदीर्घ जलधारा सो रही हो। बीच-बीच में कोमल जललहरियाँ इधर-उधर उठती है। उस दिन उस लड़की के अग भी यन्त्रणा के कारण कही-कही सकुचित हो उठते थे। बीच-बीच में लडकी जैसे दर्द के मारे सिकुड़ जाती थी। फिर अपने को जैसे वह संयमित कर लेती थी।

—कैसा दर्द है आप को? कहाँ दर्द हो रहा है आप को?

डॉक्टर ने देखा कि लडकी अपने ठण्डे शान्त हाथ द्वारा अपने लिवर की ओर इशारा कर रही थी। डॉक्टर ने देखा कि लड़की को ज्वर है। डॉक्टर को लगा कि उस का हाज़मा खराब है। डॉक्टर ने पूछा—पेट तो आप का साफ है? लडकी ने गरदन हिलायी। इस का मतलब यह हुआ कि लडकी ने गरदन हिला कर ही नकारात्मक उत्तर दिया।

डॉक्टर ने पूछा—कितने दिन से हाज़मा गडबड है?

वह भला आदमी अपना कान लडकी के चेहरे के पास ले गया। लड़की के होंठ थोडा हिले। भले आदमी ने कहा—तीन-चार दिन से।

डॉक्टर ने कहा—इस हालत मे जुलाब देने से तो नही चलेगा। इस

देना होगा। डूस देने से दर्द कम हो जायेगा। मैं एक दवा दिये जा रहा हूँ।

लडके ने चिन्तित हो कर कहा—डूस देना तो मैं जानता नहीं डॉक्टर साहब !

डॉक्टर ने हँस कर कहा—यह कोई कठिन बात नही है। आप डूस लेते आइए, मैं आपको समझा दूँगा, आप पढे-लिखे आदमी है, दिखाने और समझाने से समझ जायेंगे।

—नहीं डॉक्टर साहब, मैं ऐसे ही नर्वस हो जाता हूँ। मैं··· ।—आगे कुछ नही कह सका।

—तब मेरे कम्पाउण्डर को बुलाइयेगा, वह आ कर दे जायेगा। वह एक्सपर्ट है। एक रुपया लेगा।—डॉक्टर ने कहा।

थोडी देर चुप रहने के बाद उस आदमी ने कहा—लडकी है, कम्पाउण्डर तो आप का मर्द है न।

जो लोग बाहर दरवाज़े पर बैठे हुए थे, उन्होंने कहा—तब एक नर्स बुला लीजिए न !

—हाँ-हाँ, भला नज़दीक कौन सी नर्स मिलेगी डॉक्टर साहब ?

—आइए, मैं आप को एक चिट्ठी लिख देता हूँ। उस बड़े चौरस्ते पर नर्सों की एक संस्था है।—डॉक्टर ने कहा।

आज डॉक्टर उस बात को याद कर के मन ही मन पूछा। लेकिन उस दिन नहीं हँस पा रहा था। उस का मन प्रसन्नता से भर उठा था। रोगी के पास जाने पर डॉक्टर की आँखों मे सब से पहले रोगी के परिवार का मनोभाव स्पष्ट तिर उठता है। कहीं दिखाई पड़ता है कि रोगी के प्रति उस के घर वाले उदासीन, रोगी बस पड़ा हुआ है, सिरहाने उस के कहीं एक गिलास जल है, और कहीं-कहीं तो वह भी नही रहता। कहीं-कहीं ऐसी उदासीनता भी डॉक्टर ने देखी थी कि वह उस के मन मे घर कर गयी है। खास कर के नौकरों के क्षेत्र मे ऐसी ही उदासीनता दिखाई पड़ती है। विधवाओं के क्षेत्र में भी परिवार के लोग ऐसे ही उदासीन रहते है। कहीं-कहीं यह भी दिखाई पड़ता है कि सारा परिवार रोगी के लिए व्याकुल है। जैसे ये सभी आदमी रोगी का रोग अपनी आँखों से पोंछ देना चाहते है।

ऐसी स्थिति मे चिकित्सक का मन स्वाभाविक रूप से प्रसन्न हो उठता है। भले ही इन्होने विज्ञान की शिक्षा न पायी हो लेकिन उन्हे अपने अभावबोध का ज्ञान था। लडके के नर्स लाने के प्रस्ताव पर डॉक्टर बहुत प्रसन्न हुआ।

डॉक्टर के साथ आते-आते लडके ने कहा—कुछ गडबड़ तो नही है डॉक्टर साहब ?

—नही, नही, नही। डूम देने पर ठीक हो जायेगा।—डॉक्टर ने कहा।

लडके ने भरे गले से कहा—मेरे अलावा उस का कोई नही है डॉक्टर साहब। विधवा लडकी है। यदि एक बच्चे के बाद वह बच जाये तो शायद उस का जीवन सुखी हो।

एक लडकी हुई थी निर्मला को।

डॉक्टर के चेहरे पर विचित्र हँसी दिखाई पडी।

—डॉक्टर साहब !

डॉक्टर की चिन्ता-धारा टूट गयी। हाथ में माम की पुस्तक खुली ही हुई है। किताब रख कर थोड़ा हिला-डुला वह। एक प्रौढ़ा तरुणी एक घूँघट वाली को ले कर आयी है। शायद इसी मुहल्ले की हो। अपने जीवन मे डॉक्टर भी जितने रोगी देखे, उन के भी इसी टोले-मुहल्ले के लोग थे। प्रायः सत्तर-पचहत्तर प्रतिशत रोगी इसी मुहल्ले से आते थे। इस तरफ़ एक बहुत बडा टोला है। लडकियों को जो लोग लाते थे वे प्रायः रात को ही आते थे।

—क्या है ?

—जरा इस को एक बार देखिए न ! बडी भोग रही है ! इस के चार बच्चे-कच्चे हैं। यह देख रहे हैं, एक तो इस की गोद मे है और इस के ऊपर रोग है।

चेम्बर में जा कर डॉक्टर ने अपना आला उतार लिया। रक्तहीन, पीला एक तरुण चेहरा, आँखों की पलकों पर एक उदासी—जैसे बादल-भरी हुई दोपहरी। डॉक्टर ने अपनी व्यवसाय सुलभ उदासीनता से देखना प्रारम्भ किया। वैसे जाँचने की कोई जरूरत नही थी। केवल देखने से ही पता लग रहा था कि टी. बी. का मर्ज है। दरिद्रता के बीच रहती है वह।

इस के लिए तो कोई भी रोग निष्ठुर हो सकता है। फिर भी सभी रोगों के बीच टी. बी. सब से निष्ठुर रोग है। तिल-तिल कर के आदमी को मार डालता है। एक लम्बी गहरी साँस ली डॉक्टर ने। डॉक्टर चौंक उठा—ठीक निर्मला की तरह इस का रोग ड्राइ प्लूरिसी से टी. बी. में बदला है। इस का एक फेफड़ा जैसे चलनी हो उठा हो।

निर्मला की बात सोचते-सोचते डॉक्टर थोड़ी देर तक जैसे भावनाओं से पीड़ित हो उठा था। उस की आँखों में आँसू आ गये थे।

साथ की प्रौढ़ा स्त्री ने कहा—डॉक्टर साहब!

डॉक्टर के मन का आवेग समाप्त हो गया।

दरिद्र गृहस्थ के घर की बहू, चार बच्चों की माँ अगर बच सकती है तो निओमीयोरोसिस से ही। निर्मला भी बची है। आज से दो साल पहले जब उस ने निर्मला को आखिरी बार देखा था तब उस की अवस्था ठीक यही थी। यह भी लड़की बच सकती है उसी दवा से।

आज सुबह निर्मला के चेहरे की याद आयी—जैसे जीवित सौन्दर्य झलमला रहा हो। एक्सरे की फोटो उस की आँखों के सामने तैर गयी।

डॉक्टर साथ ही साथ सिहर उठा।

उस के कान में जैसे कोई बोल उठा—मैं···। मैं अब···। फिर जैसे उस के कानों में सुनाई पड़ा—ड्रिंक···थोड़ा सा···यह मेरी आदत सी पड़ गयी है।

उस प्रौढ़ा स्त्री ने कहा—डॉक्टर साहब!

डॉक्टर बाहर चले आये, बोले—यह असाध्य रोग है भाई, टी. बी. है।

लड़की ने थोड़ी देर चुप रहने के बाद कहा—यह तो मैं समझ गयी हूँ डॉक्टर साहब! लेकिन कोई उपाय है?

डॉक्टर ने कहा—अस्पताल में···बहुत-बहुत खर्च लगेगा। और दूसरा उपाय मैं नहीं जानता!

ठीक निर्मला की ही तरह रोगी है। विचित्र सा केस है। पहले दिन डॉक्टर नहीं पकड़ सका। लड़की अपने दर्द की जगह ठीक से नहीं बता

सकी थी। रात को वह लड़का फिर आया, उस के चेहरे पर बहुत परेशानी थी।

—डॉक्टर साहब !

—क्या है ? ओह, आप के ही तो घर में गया था न आज ? इंजेक्शन दिलवा दिया तो ?

—जी हाँ। लेकिन दर्द तो नहीं कम हुआ डॉक्टर साहब ?

—कम नहीं हुआ ? यह कैसे ?—डॉक्टर ज़रा चिन्तित हुआ।

—एक बार आप चलिए। दर्द अब ऊपर की ओर बढ़ रहा है।

मिट्टी का तेल तब दुष्प्राप्य नहीं हुआ था। झकाझक प्रकाश हो रहा था। दिन की रोशनी में आदमी का रूप पकड़ में आ जाता है, रात की रोशनी चाहे जितनी तेज हो वह जैसे रूप और सौन्दर्य के ऊपर एक उज्ज्वल सूक्ष्म परदा डाल देती है, और भी सुन्दर बना देती है उसे। रात की नदी के ऊपर जैसे एक पतली चाँदनी और कुहासे की परत पड़ जाये, ठीक वैसे ही। वैसे ही स्वच्छ वस्त्रों के बीच स्तब्ध पड़ी हुई थी वह। तब उस ने बताया कि दर्द उस के काँख के पास है। ज्वर भी हुआ है।

डॉक्टर ने गम्भीर भाव से परीक्षा की। और काफ़ी देर तक परीक्षा की। प्लूरिसी पकड़ में आ गयी।

—डॉक्टर बाबू ?

डॉक्टर ने कहा—प्लूरिसी हुई है। अच्छी दवा की ज़रूरत है। कैलेशियम और इंजेक्शन देना होगा। अच्छा भोजन देना ज़रूरी है।

—जो कुछ भी ज़रूरी हो। आप कहिए। बताइए, क्या भोजन देना होगा ? आज से ही इंजेक्शन देना शुरू कर दीजिए।

बड़े ज़ोरों से दवा शुरू हुई।

डॉक्टर आया करते थे। सिरहाने के पास टेबल पर फल सजाये हुए थे। महँगी पेटेंट दवाएँ। लड़की चुपचाप सोयी रहती। बस ज़रा सा मुख ही दिखाई पड़ता। उस के गाल पर एक तिल काले फूल की तरह दिखाई पड़ता। बहुत दिनों तक डॉक्टर यही सोचता रहा कि उस के गाल पर एक ही तिल है। चुपचाप वह अपना हाथ बढ़ा देती। डॉक्टर रबर की नली

उस की बाँह पर बाँधता, इंजेक्शन देता। तनिक भी हिलती-डुलती नहीं थी वह।

लाभ भी हुआ। ज्वर बिलकुल कम हो गया। पीड़ा कम हो गयी। एक दिन युवक ने कहा—और कितने दिन लगेंगे, डॉक्टर साहब?

—दवा अभी करनी होगी—कम से कम प्रसव तक।

लड़के ने एक गहरी साँस ली।

डॉक्टर ने कहा—यह एक खतरनाक बीमारी है, खास कर के···।

—देखने में तो लगता है कि ठीक हो गयी।—लड़के ने कहा।

—हाँ, लेकिन कैलशियम—इंजेक्शन अभी भी जरूरी है।

इस के बाद···इस के बाद शायद दो बार दिया था इंजेक्शन डॉक्टर ने। इस के बाद नहीं बुलाया था उसे! आखिरी दिन कहा था लड़के ने—प्रसव का समय तो समीप आ गया है डॉक्टर साहब! प्रसव अस्पताल में ही ठीक होगा न? क्या राय है आप की? घर में कोई स्त्री नहीं है। मैं काम पर चला जाता हूँ।

—अस्पताल ही सब से ठीक होगा। मैं बल्कि आप को अस्पताल के लिए चिट्ठी लिख दूँगा।—डॉक्टर ने कहा।

लड़के की आँखों में कृतज्ञता झलक उठी। उस ने कहा—आज ही दे दें। थोड़ा पहले ही ले जाना अच्छा है।

—आइए, दे देता हूँ।

चिट्ठी ले जाने के बाद फिर कभी नहीं आया वह। इस के बाद डॉक्टर को कुछ भी पता न लगा। इंजेक्शन देने के निश्चित दिन डॉक्टर प्रतीक्षा कर रहा था। प्लूरिसी की आड़ में राजयक्ष्मा का जो कंकालावशिष्ट तीक्ष्ण नखर हाथ लड़की की ओर बढ़ा आ रहा था उसे डॉक्टर ने रोक दिया था। उन्होंने अपनी स्पष्ट आँखों से देखा था कि राजयक्ष्मा का हाथ रुक गया था। जैसे किसी द्वन्द्व युद्ध में उन्हें विजय मिली हो। केवल यही नहीं, जिस के लिए यह युद्ध होता है वह आदमी ऐसे समय में बहुत ही प्रिय लगता है। सभी डॉक्टरों को लगने लगता है। जो रोगी को बचाना है उसे ही वह रोगी अपना अभिन्न लगता है। डॉक्टर को यह लड़की और अच्छी लगती थी। सफ़ेद वस्त्रों में लिपटी वह सहनशील लड़की जैसे चाँदनी रात

में स्तब्ध नदी की तरह लगती थी। क्रूर क्षय रोग से डॉक्टर ने उस की रक्षा की थी। जैसे क्षय रोग की अँजुरी शिथिल हो गयी हो और वह गिर कर मिट्टी मे लुप्त हो गया है।

थोड़े ही दिन के बाद उस की बात याद आयी। एक बार उन्होंने सोचा कि उस की खोज-खबर लेंगे। अभिशप्त पराश्रित देश के रोग जर्जरित मनुष्यो के बीच उन्हे अवकाश नही मिल पाया। बहुत ही कर्म-व्यस्त है उन का जीवन। डॉक्टर को जो बात याद आयी है उस से वे सज्जित हो उठे। जिस दिन उन्होंने निश्चय किया था कि उन्हे खोज करेंगे, उसी दिन इन्श्योरेंस कम्पनी का एजेंट चार केस ले कर आया था। रुपयो की लालच ठीक नही है लेकिन रुपयो की ज़रूरत तो पड़ती ही है। इन्श्योरेंस कम्पनी का डॉक्टर है वह। फिर उस की खोज नही ले सके।

धीरे-धीरे वे उसे भूल ही गये। सभी का सुख-दुख देख कर ऐसा लगता है कि इस से अधिक दुख किसी को नही होता। डॉक्टर एक प्रकार से अपने को आसक्तिहीन आवरण मे ढके रहता है, अपने हृदय का प्रकाश वह नही करता।

दो महीने बाद हठात् एक तरुण आया। ठीक पहले दिन की तरह टेबिल पकड़ कर खड़ा हुआ। ऐसा लगा जैसे वह बहुत ही परेशान है। डॉक्टर उसे देख कर ही पहचान गया। साथ ही साथ मन के नेत्र-पटल पर स्वच्छ शुभ्र बिछौने पर लेटी हुई श्रान्त स्तब्ध उस लड़की की याद आयी। डॉक्टर ने पूछा—क्या खबर है भाई?

—एक बार चलना होगा डॉक्टर साहब!

—क्यों? लड़की कैसे है?

—अच्छी नही है। बीस दिन हुए डेलिवरी हुई है। अब फिर वही शिकायत है, अब ज्वर और भी ज्यादा है, दर्द भी है।

डॉक्टर ने एक लम्बी साँस ली, कारण, कार्य और परिणाम तीनों ही समझ लिया डॉक्टर ने। डॉक्टर ने कहा—बीस दिन हुआ है तो आप ने डेलिवरी के पहले हठात् चिकित्सा क्यों बन्द कर दी? सर नीचे कर के लड़का टेबिल के कोने को अपने नाखतो मे खरोंचने लगा। थोड़ी देर बाद कहा—गर्भी हो गयी थी। दो-तीन इन्जेक्शन के बाद मैं ने देखा वह ठीक

हो गयी है। मैं ने सोचा शायद बिल्कुल ठीक हो गयी है'''। उस का वाक्य बीच में ही कहीं अटक गया और वह चुप हो गया। अपराध स्वीकार करने की विशेष भगी है यह।

डॉक्टर ने कहा—आप ने बड़ा बुरा किया। मैं ने तो कहा था कि आप दवा करेंगे। थोड़ी देर बाद फिर डॉक्टर ने कहा—आप का आग्रह देख कर मैं ने समझा था कि सब ठीक हो जायेगा।

लड़के ने इस बार ऊपर मुंह उठाया।

डॉक्टर ने कहा—चलिए!

डॉक्टर ने देखा—वही लड़की थी और उसी तरह सोयी हुई थी। उस की गोद के पास एक लड़की थी। जैसे कंकाल मात्र हो वह शिशु, मरणोन्मुख पौधे के फूल की तरह! डॉक्टर ने इस बार देखा सारा वातावरण ही जैसे बदल गया। चारों ओर गन्दगी है। बिछौना मैला है। लड़के के कपड़े फटे हैं। और घर में भी एक कैसी तीव्र गन्ध है।

लड़की को ज्वर काफी था। हृदय भी उस का भीतर से काफी जीर्ण हो चुका था।

डॉक्टर ने एक लम्बी साँस ली। एक इन्जेक्शन दिया। इस के बाद कहा—चलिए। एक दवा आप को दूँगा, जिसे खिलायेंगे। घर से निकलते समय डॉक्टर ने फिर एक बार देखा। सारा माहौल बदल गया था। लड़की भी जैसे बदल गयी थी। जैसे और भी शान्त हो गयी हो। रात्रिकालीन नदी के बीच जो दो-एक लहरें दिखाई पड़ती थीं वैसे ही एकाध बार लड़की के देह में लहरियाँ उठा करती थीं पहले लेकिन वह अब नहीं दिखाई पड़ती। जैसे वह भी समाप्त हो गया।

लड़के का नाम डॉक्टर उसी दिन जान सका। लड़के का नाम था रमेन। जाति का कायस्थ। लड़के ने हठात् रास्ते में डॉक्टर को कहा—डॉक्टर साहब, मैं बड़ी विपत्ति में पड़ गया।

—हाँ, विपत्ति तो है हीं।

थोड़ी देर चुप रहने के बाद लड़के ने फिर कहा—दरअसल यह लड़की मेरी कोई नहीं है, डॉक्टर साहब!

डॉक्टर चौंक उठे—कोई नहीं?

—नहीं।

इस टोले की पगडण्डी। उसी पगडण्डी पर चलते-चलते उस ने कहा—और डॉक्टर सुनता रहा। जरा सी भूल के कारण यह विपत्ति मेरे ऊपर आ गयी। दरअसल वह मेरी कोई नहीं है।

लड़की की उम्र पन्द्रह-सोलह साल की होगी, वह विधवा होनी थी। लड़के के पिता उस विधवा को अपनी रुग्णा पत्नी की सहायता करने के लिए लाये थे। लड़के के पिता मध्यवर्गीय परिवार के थे। नौकरी-पेशे के आदमी। लड़का नौकरी करता था एक फैक्टरी मे। नाम था रमेन। उस ने विवाह नहीं किया। घर में रोगिणी माँ को छोड़ और कोई नहीं थी। वह लडकी ही थी सब कुछ, और वह लड़की थी बहुत अच्छी। शान्त स्वभाव, बात करने वाली। बहुत अच्छी लगी थी वह रमेन को।

इसके बाद···।

रमेन चुप हो गया। डॉक्टर ने कोई प्रश्न नहीं किया।

रास्ते मे कोई नही था केवल दो ही आदमी थे। दो-एक आदमी जो जा भी रहे थे, वे नगे पैर थे। डॉक्टर और रमेन के पैरों मे जूते थे, उन के जूतों की आवाज बार-बार आ रही थी।

थोडी देर बाद रमेन ने कहा—इस के बाद जो होना था वही हुआ। लड़की गर्भवती हो गयी। कोई दूसरा उपाय न देख कर उसे छिपा कर यहाँ रखा। मैं घर जाया करता था। अभी भी मैं घर पर ही हूँ। घर वाले यह जानते हैं कि वह कहीं चली गयी। मैं रोज शाम को यहाँ आता था। दस-ग्यारह बजे घर चला जाता था। मेरी इच्छा थी कि जब मेरे ही कारण उस की यह अवस्था हुई है तो मैं आजीवन उस का पालन-पोषण करूँगा। सन्तान होने पर उस का भी पालन-पोषण करूँगा। चाहे भले ही विवाह न करूँ।

फिर वह चुप हो गया। बस केवल जूतों की आवाज आ रही थी।

थोड़ी देर बाद रमेन ने फिर कहा—लेकिन मैं इतना नहीं समझ सका था।—एक गहरी साँस ले कर उस ने कहा—ओवरटाइम करने पर भी मैं काम नहीं चला पा रहा हूँ।

डॉक्टर का दवाखाना आ गया था। उजाले मे डॉक्टर ने देखा कि

रमेन के दोनों जबड़े ऊँचे हो गये थे। जैसे किसी आधार पर चढ़ाया हुआ कच्चा पौधा मुरझा जाये वैसी ही अवस्था रमेन की हो गयी।

इस के बाद जो होता है, वही हुआ।

रमेन की थकान जैसे बढ़ती ही चली गयी। डॉक्टर ने कहा—फ़ीस नहीं लगेगी आप की। दो-एक गोल्ड इन्जेक्शन लगा कर देखता हूँ। कई बार इन से फ़ायदा होता है।

लेकिन कुछ भी नहीं हुआ। रोग जैसे और बढ़ने लगा। लेकिन आश्चर्य की बात यह थी कि लड़की की सहनशीलता में कोई भी अन्तर नहीं आया। रमेन जैसे क्रमशः निराश होता गया। डॉक्टर को भी पीड़ा हुई। एक दिन आ कर उस ने कहा—डॉक्टर साहब, एक सर्टिफ़िकेट देना होगा!

डॉक्टर चौंक उठे।

रमेन ने कहा—लड़की तो मरेगी ही। हो सकता है आज ही रात को मर जाये। उस रात को भला मैं आप को कहाँ पाऊँगा?

लड़की से मतलब निर्मला नहीं बल्कि वह नवजात कन्या। क्रमशः वह बच्ची सूखती ही जा रही थी। इस के ऊपर उसे ज्वर भी हो रहा था। वह नहीं बचेगी, ऐसा डॉक्टर ने कहा है। फिर भी डॉक्टर चौंक उठे। कुछ जैसे चकित हो गया डॉक्टर। रमेन की आँखों में जैसे एक मुमूर्षु मनुष्य की दृष्टि दीख पड़ी। उन्होंने रूढ़भाव से कहा—नहीं।

लड़की दो दिन बाद मर गयी। उस दिन नहीं मरी।

इस के बाद एक दिन आया रमेन। उसे खुद ही रोग हुआ है। यौन-रोग। स्वयं ही इन्जेक्शन ले कर चला गया—जाते-जाते कहा—मैं तो अपने काम पर चला जाऊँगा डाक्टर साहब! आप दया कर के एक बार उसे जा कर देख आते। दो दिन से जैसे रोग और बढ़ गया है। छटपटा रही है वह।

डॉक्टर गये।

लड़की ने आज बातें कीं। लेकिन जिस दिन बच्ची मरी थी उस दिन भी डॉक्टर गये थे। लड़की वैसे ही सोयी हुई थी। शान्त, स्तब्ध। उफनती हुई गन्दी नदी की तरह उस की दशा हो गयी थी। उस का सर्वांग मलीन

था। जीर्ण-शीर्ण स्रोत जैसे सूखा जा रहा था।

हठात् लड़की उठ पड़ी। डॉक्टर शंकित हो उठा—मत उठो! लड़की ने नहीं सुना। डॉक्टर के दोनों पैर पकड़ कर उस ने रो कर कहा—डॉक्टर साहब, मुझे क्यों बचाने की चेष्टा कर रहे हैं? मेरे बचने से क्या लाभ होगा? मेरा लाभ होगा या संसार का कोई लाभ होगा? आप क्या समझ पा रहे हैं कि वह आदमी कितना कष्ट भोग रहा है? इस से तो अच्छा यह है कि मुझे कोई ऐसा इन्जेक्शन दीजिए कि मैं दो-एक दिन में धीरे-धीरे मर जाऊँ।

डॉक्टर चिन्तित हो उठा। फिर भी संयम से उस ने कहा—यह बात तुम ने मुझ से गलत कही। मैं डॉक्टर हूँ। रोगी को बचाना मेरा धर्म है। मैं मार नहीं सकता। नहीं-नहीं-नहीं।

लड़की ने पैर नहीं छोड़ा तब भी।

डॉक्टर ने बहुत कष्ट से अपने को किसी तरह छुड़ाया। लड़की ने कहा—देखिए न, उस आदमी को क्या हो गया? वह बहुत अच्छा लड़का था, डॉक्टर साहब। मैं ही उस के लिए काल बन गयी। थोड़ा ठहर कर एक विचित्र तरह से हँसी वह। फिर उस ने कहा—मेरे लिए विवाह नहीं किया उस ने। और मेरी यह हालत है। बहुत बुरी बीमारी ने पकड़ा।···

डॉक्टर बाहर चले गये। उस बार उस ने निर्मला को देखा। मुँह से न कह भी मन ही मन डॉक्टर ने कहा था और ज्यादा दुख तुम्हें नहीं भोगना पड़ेगा। बहुत अधिक होगा तो दो-तीन महीने। हो सकता है उस से भी कम दिनों में तुम मर जाओ।

इस के बाद कोई नहीं आया। किसी ने कोई ख़बर भी नहीं दी। रमेन भी नहीं आया। डॉक्टर समझता था कि नदी सूख गयी है।

और वही लड़की फिर हठात् लौट आयी। आ कर उस ने कहा—मैं···! डॉक्टर जैसे काँप उठा।

कई दिनों के बाद। इन्जेक्शन लेने के निश्चित दिन निर्मला नहीं आयी। डॉक्टर उस की प्रतीक्षा कर रहा था। नहीं आने पर नाराज़ भी हो गया। रात को किताब खोल कर, उसी लड़की के बारे में सोच रहा था

वह। दरवाजे के पास आ कर कार रुकी। डॉक्टर ने टेबिल के ऊपर झुक कर देखा, निर्मला गाडी से नीचे उतर रही है। आज वह गाडी जैसे घर की गाड़ी रही हो। टैक्सी नही थी।

कुशल हाथों-द्वारा सजा-धजा रूप, लावण्य के साथ जैसे और झलमला उठा है। आ कर वह उज्ज्वल प्रकाश के सामने खडी हो गयी। उस ने कहा—सुबह मैं नही आ सकी। वे आज शिलाग गये—मुझे जबर्दस्ती··· तुम्हे भी जाना होगा।···डेढ बजे तक। इस के बाद छुट्टी।

डॉक्टर ने कहा—लेकिन रात को क्यो आयी? खाली पेट के अलावा तो मैं इन्जेक्शन देता नही।

वह बैठ गयी—उसी कमरे की एक कुरसी पर।

—कल सुबह आओ। बिना कुछ खाये आना। इस के बाद हँस कर डॉक्टर ने कहा—तुम तो सारी बातें जानती हो। उस दिन तुम्ही ने कहा था।

निर्मला ने कहा—उन से मैं ने सुना था। इस रोग मे तो यह इन्जेक्शन पहली बार है मेरा।

डॉक्टर हठात् एक गलत सवाल कर बैठा। सवाल करने पर डॉक्टर के मन में भी लगा कि वह गलती कर रहा है। बोला—तुम तो इन्जेक्शन ले रही हो, लेकिन वे इन्जेक्शन ले रहे हैं तो? साथ ही साथ जैसे अपनी गलती पर पश्चाताप करता हुआ डॉक्टर बोल उठा—मेरा यह सवाल ठीक नहीं था। कुछ बुरा मत मानना।

निर्मला हँसी। बोली—मेरे साथ आप ने गलती नही की।

डॉक्टर चुप रहा। लड़की की कृतज्ञता बोधक भावना ने जैसे उसे तृप्ति दी।

निर्मला ही थोड़ी देर बाद हँस कर बोली—उन्हें कई बार यह रोग हुआ। फिर भी इस बार वे अच्छे हो है!

इस बार डॉक्टर को ही जैसे बुरा लगा। बात-चीत का रुख किधर जा रहा है? लेकिन निर्मला इतनी निर्लज्ज कैसे हो गयी? वह क्या कह रही है, क्या समझ नही पाती है वह?

निर्मला बोली—कन्ट्रैक्टर हैं वे, यह लड़ाई का समय है, देश-देश

घूमते रहते हैं। बीच-बीच मे मुझे भी अपने लगेज मे शामिल कर लेते हैं। आसाम गये थे। वहाँ···। अपनी बात आधी ही कर के वह बोली—डॉक्टर साहब! आदमी पढ़ा-लिखा है, बहुत कुछ सिखाया है मुझे। बहुत कुछ जानता है वह। लेकिन बहुत बड़ा शराबी है वह। उस दिन मुझे उस ने शराब पीना सिखा दिया। यदि मैं न पिऊँ तो वह क्रोध करता है। शराब पी लेने पर उसे ज्ञान नहीं रहता। वहाँ···। थोड़ा हँस कर उस ने कहा—वहाँ शराब पी कर अपने साथ ले कर आये दो विदेशी। आ कर उन सबों ने शराब पी, मुझे भी पिलाया, इस के बाद शराब के नशे की उदारता के कारण मुझे उपहारस्वरूप उस ने रात भर के लिए उन दोनों को सौंप दिया। थोड़े दिनों बाद यह रोग दिखाई पड़ा। मैं कहती हूँ—इसे सुन कर क्या तुम हँस रहे हो?

डॉक्टर ने कहा—नहीं, कोई बात नहीं! तुम इन्जेक्शन लेकर जाओ।

डॉक्टर के ललाट पर कुछ रेखाएँ उभरी। थोड़ी देर बाद वह फिर अपने आप में लौट आया, सहज हो उठा वह। कहा उसने—वाह, क्या आश्चर्यजनक है!

—आश्चर्यजनक। पहले दिन भी ऐसा ही लगा था···।—निर्मला सिहर उठी। बोली—उस दिन रात को जब मैं आप का पैर पकड़ कर रोयी उसी दिन मैं धीरे-धीरे घर से बाहर निकल गयी। रमेन भी उस दिन नहीं आया। घर से यह सोच कर निकली थी कि मर जाऊँगी। पर जाती कहाँ? बहुत सोच-समझ कर यही ठीक किया था कि और रात होने पर गंगा में कूद पड़ूँगी। मर भी जाऊँगी और गंगा-लाभ भी होगा। बहुत पाप किया है, मरते समय जो भी कष्ट हो लेकिन ठण्डे पानी मे शरीर की गरमी भी शान्त होगी।—निर्मला इस के बाद थक गयी। उस की आँखों की दृष्टि में जो शून्यता थी, ऐसा लग रहा था कि वह जैसे स्वप्न देख रही हो।

—उफ्, वह कैसी भयानक रात थी और गंगा के तीर की वह जगह जैसे झन-झन कर रही थी।

—कोई भी वहाँ नहीं था। कभी बीच-बीच मे गंगा का जल केवल कल कल करते हुए चक्कर मार रहा था। मरने के लिए आ कर भी मेरे

मन में भय हुआ और वह भी कैसा विचित्र भय ! मेरा सारा शरीर कांप रहा था। वहीं मैं बैठ गयी, थोड़ी देर बाद मन में आया जैसे मेरी शायद देह सुन्न हो गयी है और शायद मैं गंगा में कहीं गिर न पड़ूँ। इस के बाद मेरी इच्छा हुई कि मैं वापस लौट चलूं। उठ कर खड़ी भी नहीं हो सकती थी। घटनों के बल सरक कर चलने की चेष्टा की मैं ने। पोर्ट रेलवे लाइन की पटरियों का आधार पा कर मैं उलट गयी। कई क्षण मैं वैसी ही पड़ी रही फिर मुझे याद आया कि रेलगाड़ी यदि अभी आ जाये तो मेरे टुकड़े-टुकड़े हो जायें, मेरा सारा शरीर कांप उठा। सारी चेष्टा से मैं ने किसी तरह रेल लाइन पार की और चितपुर के रास्ते में आ गयी। थोड़ी सी ठहर कर मैं पोर्ट रेलवे लाइन की सीमा के बीच जो रेलिंग दी हुई है उस को पकड़ कर उठ खड़ी हुई। मैं ने सोचा कि अगर मरना ही है तो क्यों नहीं मैं तिल-तिल कर के मरूँ ? ऐसे नहीं मरूँगी। इस के बाद याद आया कि घर लौट चलूं। रास्ते के बड़े-बड़े घर, इतने निर्जन गम्भीर रात में कितने गम्भीर लग रहे थे। मैं वहीं पर रेलिंग के सहारे बैठ गयी। आंखों से आंसू बहने लगा मेरे अनजान में ही।

एक कार चली गयी। थोड़ी देर बाद ही फिर वह कार रुक गयी। पीछे कार लौट कर आयी और मेरे पास आ कर रुकी। कार से एक व्यक्ति फुलपैण्ट और हाफशर्ट पहने हुए निकला। टॉर्च का प्रकाश मेरे मुंह पर पड़ा। मेरी आंखें अपने आप बन्द हो गयीं। शराब की गन्ध जैसे मिली साथ ही साथ मेरे कानों में एक आवाज आयी—हूँ, अच्छी है ! —और साथ ही साथ हाथ पकड़ कर जरा सा झकझोर कर उस ने कहा कौन है रे तू ?—फिर उस ने कहा—क्या बात है रे ! दोनों गालों पर दो तिल, कहीं गुदना तो नहीं है ! और मैं ने अनुभव किया था कि मेरे गालों पर उँगलियों से घिस कर वह देख रहा था। उसी मुमुर्षु अवस्था में मैं ने अनुभव किया कि मेरे गालों पर वह उँगली फिरा कर जैसे सन्तुष्ट हो गया हो। उस ने कहा था—नहीं, ये स्वाभाविक हैं !···कौन है री तुम ? इतनी रात को यहाँ—यहाँ रहती हो ?

बहुत तकलीफ़ से मैं ने कहा था—मैं मरूँगी···

वह आदमी हँस उठा। उस की बात पूरी भी नहीं हो रही थी कि··· [illegible]

नारी

के बाद वह उसे खींच कर ले चला।—आओ!

जो कुछ भी शक्ति बाकी थी उसी शक्ति से मैंने बाधा दी था उसे। उस आदमी ने डाँट कर कहा—आओ। डाँट-धमका कर उसने अपनी कार में मुझे ठेल दिया। कार मोड़ कर वह चल पड़ा। रास्ते के नाले को पार करते हुए गाड़ी सनसनाती हुई आगे बढ़ गयी। इस के बाद मुझे एक उद्यान के बँगले में लाया था वह। काफ़ी सजा हुआ घर था, एक सोफ़े के ऊपर मुझे ढकेल दिया। कमरे के भीतर की सारी बत्तियाँ जला दी उस ने। निर्मला ने जो घूँघट खींच ली थी उसे उस ने उघार दिया। थोड़ी देर तक देखा घर की आलमारी में जो शराब थी उसे निकाल सारी पी गया। निर्मला से पूछा था उस ने—पियेगी?

निर्मला रो उठी थी। वह हँसा। इस के बाद…दिन के खुले प्रकाश की तरह जो रोशनी कमरे में थी उसी में ही…।

निर्मला सिहर उठी। इस के बाद उस ने फिर डॉक्टर से कहा—शराब पीने के बाद वह पशु के अलावा कुछ नहीं रह जाता…पशु!

डॉक्टर स्तम्भित हो गया! निर्मला ने कहा—वह उस के बगीचे का बँगला था। उस के पास बहुत रुपया है। उस दिन मुझे दस रुपये का एक नोट दे कर घर से बाहर निकाल दिया था। उस समय मेरी अवस्था बिलकुल ही असहाय थी। मैं क्या करती? कैसे लौटती? और कौन सा चेहरा ले कर लौटती? देह में बहुत सी व्यथा हो रही थी! दर्द मैं सहन कर सकती थी लेकिन चलने की शक्ति तो रहनी चाहिए। बगीचे के माली को ही मैं ने दस रुपये दे दिये और कहा कि दो रुपये ले कर बाक़ी रुपयों से तुम मेरे लिए थोड़ा चावल-दाल खाने को ला दो। मुझे शरण भी देनी होगी। बड़ी दया होगी तुम्हारी, मुझे ज्वर है। ठीक होते ही मैं चली जाऊँगी।

आ नहीं सकी मैं। उस रात को वह फिर आया! मैं सोयी हुई थी माली के घर में, बरामदे में। हठात् टॉर्च का प्रकाश पड़ा। वह आ कर खड़ा हो गया। शराब की गन्ध का अनुभव हुआ मुझे। इस के बाद… निर्मला हँसने लगी। फिर उस ने कहा—शराब पीने पर वह जानवर हो जाता है। मैं ने सुना है कि चीता अपने शिकार को धीरे-धीरे खाता है।

पचा कर खाता है।

थोड़ी देर रुकने के बाद उस ने कहा—लेकिन उस दिन वह मुझे भगाया नहीं। सुबह बैठ कर सारी बातें सुनी उस ने। इस के बाद एक डॉक्टर को बुलाया। मैं ने आप की बात कही। उस ने अपने होंठ सिकोड़ लिये। इस के बाद उस ने एक बहुत बड़े डॉक्टर को बुलाया जो टी. बी. स्पेशलिस्ट था। डॉक्टर ने कहा—अस्पताल में ले जा कर निआमोथोरास करवा कर देख सकते हैं। ठीक हो सकती है। अभी एक लग्स ठीक है। चौदह महीने रही मैं अस्पताल में और कितना इन्तजाम था डॉक्टर साहब! इस के बाद मेरे लिए उस ने एक सुन्दर सा फ्लैट भाड़े पर खरीद लिया। अभी भी बगीचे का कमरा है वह। वहाँ पर हो-हल्ला करते हुए वह कभी-कभार जाता है और शराब पी कर हुलड़ मचाता है। मुझे अच्छा नहीं लगता। तब दरिद्र घरों की गन्दी लड़कियों को खोजता है।

डॉक्टर सिहर उठा। बोला—क्या कहती हो?

निर्मला ने हँस कर कहा—जरा मेरे सर की ओर देखिए। सर में तेल लगाने का भी हुकम नहीं है। तेल लगे हुए बाल उसे पसन्द नहीं हैं। जानते हैं क्या कहता है, वह उसे? कहता है—अच्छा लगना और नशा होना दोनों चीजें अलग-अलग हैं। आज वह बाहर गया है, कल बालों में तेल लगाऊँगी। शराब पीने पर तेल लगाये हुए बालों को देख कर वह ठकेल देता है पैरों से मुझे।

डॉक्टर हँसा। वह हँसी कैसी थी, और वह क्यों हँसा, स्वयं भी नहीं समझ सका।

निर्मला ने कहा—आप को दया आ रही है मुझ पर?

—तुम्हारे प्रति थोड़ा स्नेह था। करुणा हो भी सकती है।

—नहीं, डॉक्टर साहब! उस का एक और पक्ष है। उस ने मुझे पढ़ने-लिखने में सहायता की। एक शिक्षक रख दिया है मुझे, गाने-बजाने की व्यवस्था कर दी है। और जब खुश रहता है तब मेरे गालों के दोनों सिरों को ले कर मजाक में कहता है—एक दिन के लिए कारमो

कवि ने बुखारा और समरकन्द बेच देना चाहता था। मुझे तो दो तिल मिले हैं।

डॉक्टर बोला—इस बार मैं प्रसन्न हुआ। तो तुमने उसे प्यार किया है?

निर्मला चुप रही।

—क्यों, उत्तर नहीं दे रही हो!

निर्मला ने कहा—अच्छा लगना और प्यार करना दो अलग-अलग चीजें हैं डॉक्टर साहब! लेकिन मुझे अच्छा लगता है वह। फिर थोड़ी देर चुप रह कर उस ने कहा—मैं ठीक नहीं कह सकती। फिर थोड़ी देर चुप रह ने के बाद उस ने कहा—कभी-कभी मन तीता भी हो जाता है। सब कुछ फीका लगने लगता है। फिर कभी-कभी लगता है कि बड़े मज़े में हूँ। इस से अच्छे भला कितने लोग हैं। बहुत सी पत्नियों के पति तो शराब पीते हैं। चरित्रहीन भी होते है।

मनोविज्ञान के शौक वाला डॉक्टर उत्सुक और चचल हो उठा। उसे भी जैसे नशा हो गया। टेबुल के ऊपर झुक कर उस ने कहा—एक बात पूछूं?

—कहिए! निर्मला ने हँस कर ही कहा।

—रमेन को...क्या रमेन की बात तुम्हें याद नहीं आती? उसे...

निर्मला ने डॉक्टर के मुँह की बात छीन कर ही कहा—उसे मैं ने प्यार नहीं किया, यही न पूछ रहे हैं?—उस के होंठो पर मुसकराहट फैल गयी। फिर बोली—यदि मैं 'हाँ' कहूँ तो शायद आप प्रसन्न होंगे?

डॉक्टर ने हँस कर कहा—क्यों!

निर्मला ने जो जवाब दिया उसे सुन कर डॉक्टर को काठ मार गया। खिलखिलाती हुई हँस कर उस ने कहा—स्त्रियों की एकनिष्ठता से पुरुषों को सन्तोष मिलता है डॉक्टर साहब! मुझे लगता है कि मुझे अगर तुम प्यार करोगे तो शायद ऐसे ही एकनिष्ठ हो कर करोगे।

डॉक्टर ने उस के मुँह की ओर देख कर कहा—यह बात तुम्हें किस ने सिखायी?

—इसी आदमी ने।

काफी देर तक वे दोनों चुप रहे। लड़की ने हठात् कहा—रमेन के ऊपर मेरा कोई भी आकर्षण सचमुच नहीं है।—थोड़ी देर रुक कर फिर कहा—उस के ऊपर कोई घृणा भी नहीं है। बल्कि…उस ने मेरे लिए बहुत कुछ किया है और सहा भी है। शायद रमेन के पास रुपया रहा होता तो अस्पताल में ले जा कर उस ने ऐसी ही चिकित्सा भी करायी होती।

निर्मला अचानक ही उठ कर चली गयी।

डॉक्टर चुपचाप बैठ रहा। थोड़े समय बाद डॉक्टर के मन में आया कि मनुष्य का जीवन ही जैसे तरल पदार्थ है।

कई दिन बाद फिर निर्मला आयी। इन्जेक्शन भी लिया उस ने। फिर नहीं आयी। डॉक्टर ने समझा था कि निर्मला इस के बाद अपने रोग के लिए उसे ही बुलायेगी। उस आदमी को देखने की एक प्रबल इच्छा थी उस के मन में, लेकिन इस के बाद कोई खबर नहीं मिली।

डॉक्टर अपने पेशे में रमा रहा। टायफायड, कालरा, टी. बी., इन्फ्लुएंजा …इस के अलावा और भी विचित्र-विचित्र रोग! रोगियों के बाद रोगी आते। कितने याद रहते और कितने भूल भी जाते! जो कुछ याद भी रहते वे थोड़े दिन बाद भूल भी जाते। फिर कुछ नये रोगी याद हो उठते। लेकिन कुछ ऐसे भी पुराने रोगी थे जिन को याद मन से नहीं उतरती।

मल्लाहों की उस लड़की को जिस का नाम प्रभा था जिसे टी. बी. से बचाया है डॉक्टर ने। नरेन बाबू को कालरा से बचाया है डॉक्टर ने और यह बचना भी कितना आश्चर्यजनक है। उसे यह सब याद है। काली माँ के पुजारी को भी उस ने बचाया था। टायफायड से बचा था वह पुजारी। बीच-बीच में निर्मला की भी याद आती है।

डेढ़ साल के बाद आज हठात् डॉक्टर को एक टेलिफोन मिला। एक बहुत बड़े अस्पताल से टेलिफोन आया था।—आप को एक बार आना होगा।

—मुझे! क्यों?

—एक सुन्दरी तरुणी, हमारे यहाँ ही वह नर्स थी…उस ने ज़हर खा लिया है, बचेगी नहीं। आप को, आप के साथ बात करना चाहती है।

डॉक्टर आश्चर्यचकित हो गया। कौन? नर्सों में से तो बहुतों को जानता है वह लेकिन यह कौन? किस ने विष खा लिया और विष खाने पर कौन नर्स उस के साथ साक्षात्कार करना चाहती है? फिर भी वह गया।

डॉक्टर अवाक् हो उठा!

स्वच्छ शुभ्र वस्त्रों में लिपटी हुई एक तरुणी पड़ी हुई है। रात्रि-कालीन नदी की तरह। बीच-बीच में दर्द से उस की देह ऐंठ रही है। मानो रात्रि की उन नदी में लहरें उठ रही हों। निर्मला सोयी हुई है।

अस्पताल के डॉक्टर ने कहा—कुछ महीने पहले इस ने नौकरी शुरू की थी। फिर बोले—बहुत ही हँसमुख लड़की थी वह। पता नहीं क्यों… नहीं जानता। स्त्रियों का चरित्र बड़ा विचित्र होता है। कई डॉक्टर तो उस के पीछे यन्त्रवत् लगे रहते थे। लड़की को जैसे इस बात में मजा आता था, चिढ़ाने में। क्या आप उसे पहचानते हैं?

—जी हाँ, पहचानता हूँ। लेकिन वह आप के यहाँ नर्स हुई थी इसे नहीं जानता था। बहुत पहले वह मेरी पेशेन्ट थी। टी. बी. हो गयी थी उसे।

—अच्छा, ऐसा था!

—जी हाँ।

—जा कर देखिये, क्या कहना चाहती है आप से। यह निश्चय है कि…। डॉक्टर हँसा। यह डॉक्टर भी जानता था कि अब उसे ज्ञान नहीं होगा। वह होश में नहीं आयेगी।

उस की चेतना नहीं लौटी फिर। तेज वैज्ञानिक की दृष्टि धोखा नहीं खाती। डॉक्टर को एक चिट्ठी मिली। निर्मला ने उसे ही लिखा था। काफी लम्बी चिट्ठी थी। चिट्ठी में बहुत सी बातें थीं। चिट्ठी में बहुत सी घटनाओं का ज़िक्र था। निर्मला ने लिखा था—हठात् मेरा मन जैसे तीता हो उठा। मैं समाधान खोज रही थी। ठीक इसी समय उस कर्णेश्वर को गवर्नमेण्ट ने कैद कर लिया, कई लाख रुपये उस ने ठगे थे। मैं बच गयी। फिर मैं ने सोचा।

लिखा है—आप को उस दिन की बात याद पड़ रही है डॉक्टर साहब? मैं ने सोच-समझ कर देखा कि रमेन को मैं प्यार करती हूँ कि

नही। मेरे पास उस समय बहुत रुपये थे। उस कण्ट्रैक्टर ने मुझे गहने और रुपये बहुत दिये थे। मैं रमेन के साथ बड़ी सरलता से अपना जीवन सुखपूर्वक बिता सकती थी···लेकिन मैं ने ठीक समझा था कि उस के साथ मेरा जीवन सुखी नहीं होगा। मैं ने एक बार सोचा कि तीर्थ कर आऊँ। लेकिन वह भी अच्छा न लगा। फिर सोचा कि सिनेमा में चली जाऊँ। लेकिन उसे भी छोड़ दिया। हालाँ कि मैं ने सब ठीक-ठाक कर लिया था। इस के बाद नर्सिंग सीखने की इच्छा हुई। बहुत अच्छा लगा। लगा कि जैसे मैं यही चाह रही हूँ। मनुष्य कुछ भी तो चाहता है जीवन में. मुझे लगा कि रमेन के साथ जो कुछ मुझे पहले नहीं मिला था, उसे मैं ने उस कण्ट्रैक्टर के साथ पाया, लेकिन जो कुछ रुपये-गहने, पढ़ने-लिखने और गाने-बजाने में नहीं मिल सका उसे मैं ने इस नर्सिंग में पाया। सचमुच यही लगा मुझे पहले। लगा कि सब कुछ मिल गया है मुझे। अपनी मेहनत के बल पर पैदा कर के दिन काट रही थी। उस भले आदमी ने जो रुपये मुझे दिये थे उसे मैं ने बैंक में रख दिया था और उस में हाथ नहीं लगाया था, हाथ लगाने की इच्छा भी नहीं होती थी, हो सकता है कि यह कहे कि नारी पुरुष से चाहती है। इस क्षेत्र में तुम ने वही भूल की थी। नहीं, सुन्दर जवान डॉक्टर मेरे चारों तरफ चक्कर मारा करते थे। पहले अच्छी थी। मन में यही हुआ कि सब कुछ मिल गया है मुझे, उस के बाद सारे रंग जैसे फीके हो गये। और कुछ अच्छा नहीं लगा। धीरे-धीरे सब कुछ बासी होने लगा। कई दिनों से इधर मैं शराब पी रही थी। मैं ने क्या चाहा था, मैं खुद नहीं समझ पायी थी डॉक्टर साहब। शायद आदमी उसे नहीं समझ सकता। दरअसल मनुष्य समझ नहीं पाता। उसे कुछ हठात् मिल जाता है। पाने के बाद वह समझ पाता है कि उस ने क्या चाहा था। विष पीने की कल्पना से बहुत आनन्द पा रही हूँ।

पुनश्च—लिखा है उस ने—मेरे जो रुपये बैंक में हैं उन का ट्रस्टी मैं ने आप को बना दिया है। वकील आप को ठीक समय पर बतायेगा। स्त्रियों के किसी कार्य में लगा दीजिएगा।

डॉक्टर स्तब्ध हो कर चुपचाप बैठा रहा।

क्या चाहा था निर्मला ने? सुख? सन्तान? लेकिन किसी पुरुष का

आश्रय तो उसे अच्छा नहीं लगा ?

क्या चाहा था ? क्या किसी और को चाहा था ? डॉक्टर को हठात् जैसे एक दर्द और ऐंठन सी होने लगी।···शायद मुझे ही चाहा हो। भक्ति से, श्रद्धा से कभी-कभी···मनोविज्ञान तो यही कहता है।

हठात् उसे ऐसा लगा कि निर्मला उस के कान के पास खिलखिलाती हुई हँस रही है और कह रही है···पुरुषों के मन में होता है···मुझे प्यार करने पर···तो···

डॉक्टर लज्जित हो उठा मन ही मन।

कमला नाम की एक लड़की···प्लूरिसी की रोगिणी। उसे लाया था उस का बाप।

डॉक्टर उठ कर बैठ गये—विजय, कैलेशियम लाओ।

—वाह्, लड़की तो चंगी हो रही है। वाह्।

विजय बहुत देरी करता है। डॉक्टर को चुपचाप बैठा रहना पड़ा।

—क्या चाहा था निर्मला ने ?

व्याघ्रचर्म

जिसे कहते है बिलकुल बच्च देहात। मजीदपुर वैसा ही बच्च देहात है। केवल पगडण्डी के अलावा गांव में जाने के लिए और कोई दूसरा रास्ता नही है। शरीर में अच्छे कपड़े और पैरों में जूते देख कर किसी परदेशी को गांव के कुत्ते भूंकते-भूंकते स्वयं दूर चले जाते हैं। रास्ते के ऊपर खेलते हुए नग-धड़ग बालकों का दिगम्बर दल आश्चर्य और भय से रास्ता छोड़ कर एक ओर खड़ा हो जाता है। इस के बाद उस बटोही के पीछे-पीछे गांव के अन्तिम छोर तक जा कर वे लौट आते हैं। थोड़े दिन पहले यहां पर एक सरकारी कुआं खोदा गया है, लेकिन उस का पानी यहां के लोग नही पीते—कहते हैं कि इन्दारा का जल नमकीन है···पीने पर पेट खराब हो जायेगा। ऐसा ही है बच्च देहात यह मजीदपुर।

इस गांव में ईंटें नहीं तैयार की जातीं, कोयले नहीं जलाये जाते, पान के अलावा और किसी चीज में चूने की जरूरत नहीं पड़ती, और यहां तक कि सियारों द्वारा बकरी को पकड़ ले जाने पर भी उसे मार कर भगाया नहीं जाता। इस का कारण है कि सियार को ये साक्षात् सरस्वती मानते हैं। एक दिन यह छोटा सा गांव अकस्मात् ही-हुल्लड़ से जैसे चंचल हो उठा। एक छोटे से गड्ढे में पता नहीं किस ने एक काला सा बीस मन का पत्थर फेंक दिया। गड्ढे में तरंगों के उठने से की चड़सना गन्दा पानी बांध तोड़ कर बहने के करीब

हो उठा। गाँव के लोग ठीक भागने की अवस्था मे हो उठे।

गाँव वालों का कोई दोष नहीं। गाँव के जमींदार जिन्होंने नया-नया एम. ए. पास किया है, आये हैं। उन के साथ रात के अन्धकार की तरह दो काले रग के ग्रेहाउण्ड कुत्ते हैं जिन का नाम है—टाम और टेवी और अपने साथ वे लाये हैं बहुत सी किताबें। जमींदार गाँव वालों के लिए डर की चीज होने पर भी अपरिचित चीज नहीं है। इस के पहले भी वे लोग जमींदार को देख चुके हैं। बड़ी-बड़ी पगड़ी बाँधे चपरासियों के झुण्ड, फ़रशी, बड़े-बड़े नल वाले हुक्के, बोतलें और कुत्तों की गर्जना···इन सब से गाँव वालों का परिचय है। लेकिन इतनी ढेर सी किताबों वाले कुक्कुर-प्रिय हेमाग बाबू की तरह जमींदार से उन का पाला नहीं पड़ा था। इस के अलावा जिस दिन गुमास्ते ने यह घोषणा की—बाबू किसी के साथ भेंट नहीं करेंगे, किसी से नजराना नहीं लेंगे और मालगुजारी की बात बोलने पर भी नहीं सुनेंगे···उस दिन गाँव वालों का विस्मय चरम सीमा को पहुँच गया। लेकिन आश्चर्य की तुलना मे उन सभी को डर ज्यादा हुआ।

हेमांग बाबू शौक़ से यहाँ आराम करने आये थे महल मे, साथ ही साथ कुछ और पढ़ने की कुछ इच्छा भी ले कर। हेमांग बाबू अपनी कचहरी के आँगने मे पैदल जब घूमते हैं तब दूर से उन की प्रजा उन्हें देखती है, बच्चे उँगली दिखा कर कहते हैं—वह देखो, बाबू हैं।

जो थोड बूढ़े व्यक्ति थे वे बच्चों का हाथ पकड़ कर खींच कर कहते—भो खबरदार···कोई चुपचाप कहता—यह कैसी बात है भाई, मैं तो कुछ नहीं समझ पाता। कोई कहता—भाई बड़े आदमी हैं। यदि कोई साहस कर के कचहरी के पास जाता भी तो डर के मारे बाहर ही खड़ा हो जाता क्योंकि काले रग के उन दोनों कुत्तों का डर ज्यादा था।

और उन के गले की आवाज सचमुच ही आदमियों को भयभीत कर देती।

उस दिन दोनों कुत्ते कचहरी के पिछवारे बँधे हुए थे। इसी लिए इन्द्र मण्डल कचहरी में घुस गया। हेमाग बाबू अपनी देह में तेल लगा रहे थे। उस ने हाथ जोड़ कर कहा—लाइए सरकार, आप के पैरों मे मैं ही तेल लगा दूँ।

हेमांग बाबू ने हँस कर कहा—नहीं, रहने दो।

इन्द्र मण्डल को काठ मार गया। फिर भी उस ने कहा—हुजूर, मैं आप की प्रजा हूँ।

हेमांग बाबू आदमी भले हैं, उन्होंने मिठास के साथ ही कहा—क्या नाम है तुम्हारा?

इन्द्र मण्डल ने उत्साहित हो कर कहा—हुजूर, इन्द्रचन्द्र मण्डल, हुजूर का सेवक हूँ। आप के चरणों की धूल हूँ।

—ठीक है, कैसी फ़सल हुई इस बार?

इन्द्र ने इस बार कातर कण्ठ से कहा—भगवान् ने सब मार दिया हुजूर, आदमी का भला क्या दोष है?

हठात् पीछे बँधे हुए दोनों कुत्तों ने बड़े जोर से भूँकना शुरू किया। वह जैसे कुत्तों की आवाज न हो कर शेर की आवाज हो।

साथ-ही-साथ एक आदमी की आवाज भी सुनाई पड़ी—बाप रे बाप, ये तो जैसे आदमी को फाड़ कर खा जायेंगे।

हेमांग बाबू ने नौकर से कहा—जा कर देख तो कौन आदमी चिल्ला रहा है। जा कर जरा कुत्तों को सम्हाल। जब तुम वहाँ खड़े हो जाओगे तब शायद ये कुत्ते चुप हो जायें। और उस आदमी से कह दो कि चला आये।

नौकर चला गया। थोड़ी देर बाद एक असाधारण लम्बा जवान कचहरी के आँगन में आ कर जमीन पर सिर झुका कर सलाम ठोंकता हुआ बोला—सलाम हुजूर!

हेमांग बाबू आश्चर्य से चकित हो कर उस आदमी की ओर देखने लगे। साढ़े छह फ़ुट लम्बा एक जवान था वह। वैसी गठी हुई जमीन काले-काले घुँघराले बाल। लाल-लाल आँखें और उस आदमी के लम्बाई के मुताबिक़ ही उस के हाथ में एक लाठी। और माथे पर एक कटा हुआ दाग़।

उस आदमी ने हँसते हुए कहा—हुजूर, हम लोगों को रोटी रोटी मार देंगे क्या? अच्छा कुत्ता पाला है आप ने? ये कुत्ते तो जंगल से शेर तक पकड़ लायेंगे। और किसी आदमी पर हुलकार देने पर उस को

गरदन पकड़ कर चबा जायेंगे।

हेमांग बाबू ने कहा—कि ये कुत्ते शिकार करने के लिए ही पाले जाते हैं।

उस आदमी ने कहा—आप ने पाला है तो ठीक किया है लेकिन गुलाम की तरह ये कुत्ते नहीं हैं। एक लाठी में ही आप का यह गुलाम ठण्डा कर देगा इन्हें।

उस आदमी को देख कर उस की बात में अत्युक्ति या असम्भव होने की बात नहीं लगी।

हेमांग बाबू ने आश्चर्यचकित हो कर पूछा—क्या नाम है तुम्हारा?

फिर एक सलाम ठोंक कर उस ने कहा—गुलाम का नाम है रतन हाँडी। हुजूर का गुलाम हूं मैं। इस इलाका में सभी पहचानते हैं मुझे—, बोलिए न गुमास्ता साहब!

हेमांग बाबू ने इस बार पीछे फिर कर और लोगों की ओर देखा। उन्होंने देखा कि गुमास्ता, ठाकुर, लग्दी, इन्द्र मण्डल और वहाँ के सभी लोगों के शरीर जैसे काँप रहे हों।

हेमांग बाबू ने पूछा—राधाचरण, यह कौन आदमी है?

राधाचरण गुमास्ते ने कहा—जी हाँ, इस का नाम रतन हाड़ी है। इस जवार में इस से बड़ा लठैत कोई नहीं। जमीदार का कोई काम पड़ने पर यह काम-धाम कर देता है।

रतन ने कहा—हुजूर की कचहरी में मेरे लिए एक बँधी हुई रकम मिलती है। सभी लोगों की कचहरी में कुछ न कुछ बँधा हुआ है। दंगा-फसाद और प्रजा को दबाने में जो आवश्यकता होती है वो मैं सब ठीक कर देता हूँ।

इस के बाद अपने सिर के उस दाग को दिखा कर उस ने कहा—मुर्शिदाबाद में फतह सिंह परगने के जमींदार के एक दंगे में मेरे सिर में एक आदमी ने तलवार से यह घाव किया। ताजा खून भक-भक करता हुआ गिरने लगा। चाहने देने में भात होता है हुजूर···उस सारे खून से मेरा मुंह भर गया। फिर भी मैं ने उसे छोड़ा नहीं, साथ ही साथ उस

की खोपड़ी पर एक लाठी जमा दी और अण्डे के खोल की तरह बेटा वहीं चूर हो गया। वह भी गिर गया। और मैं भी फिर गया। लेकिन मेरी राशि को देख कर उस तरफ के सभी भाग गये। कभी इस इलाके में उन सबों ने पैर नहीं दिया, छह महीने मुझे बिस्तर पर जरूर भोगना पडा।

इन्द्र मण्डल धीरे-धीरे कचहरी से बाहर चला गया। हेमाग बाबू ने कहा—तुम्हें पुलिस ने नहीं पकड़ा ?

रतन ने हँस कर कहा—तब आप जैसे हुजूर क्यों हैं ? ऐसा गोलमाल कर दिया उस जमींदार ने कि पुलिस को पता नहीं चला। पानी की तरह रुपया बहाया था मालिकों ने। उस मामले में जीत गये मेरे ही हुजूर ! उस इलाके में बाबुओं की आमदनी हजार रुपये बढ़ गयी है।

एक सिगरेट सुलगा कर हेमांग बाबू ने पूछा—अब कहाँ काम करते हो तुम ? फिर एक सलाम ठोंक कर रतन ने कहा—मैं सबका काम करता हूँ हुजूर, जब जिस का काम पड़ता है बुलाने पर गुलाम हुजूर के पास आ जाता है।

—हूँ, अभी कहाँ आये थे ?

—यहीं हुजूर को सलाम करने आया था। सुना था कि हुजूर आये हैं इसलिए चला आया। इन कुत्तों को रोज दूध-भात दे रहे हैं, मुझे कुछ आज हुक्म कर दीजिए।

हेमाग बाबू ने गुमास्ता को इशारा किया। वह जल्दी से घर के भीतर जा कर एक बार फिर सलाम ठोंका और कहा—जब जरूरत हो, कुत्ते को भेज कर मुझे बुला लेंगे। जो हुक्म देंगे, वही मैं करूँगा। हुजूर का अगर कोई दुश्मन हो तो हुक्म देने पर—उस ने इशारे से यह समझा दिया कि वह उसे मार भी सकता है।

इस के बाद फिर कहना शुरु किया—यह सब सारी प्रजा जानती है। इस इलाके में काशीदास नाम का एक बदमाश किसान था। इस इलाके के लोग डर के मारे काँपते थे। बेटे के पास पैसा भी खूब था और छाती भी खूब चौड़ी थी। आज उस की जमीन से सी तो कल उस का पोखरा जबरदस्ती छेंक दिया और मछली पकड़ ली और बस उस का सेर लिया लिया। अन्त में पाकसा के जमींदार के साथ झगड़ा भिड़ गया।

गुलाम के ऊपर इस का भार दिया गया। यही दो वर्ष पहले काली पूजा के दिन एक मैदान के बीच काशीदास का खेल खत्म कर दिया। उस का हाथ, उस के पैर और उस का सिर सब अलग-अलग हो कर उस मैदान में पड़े हुए थे।

हेमाग बाबू उस के शरीर और उस की भंगिमा को देख कर प्रशंसित दृष्टि से उन की ओर देख रहे थे। उन्होंने कहा—तुम काम करोगे?

फिर सलाम ठोक कर रतन ने कहा—हुक्म होने पर कर सकता हूँ।

—नहीं, वैसा कोई काम नहीं है। मेरे पास नौकरी करोगे?

—गुलाम का पेट जरा बड़ा है हुजूर!—ऐसा कह कर रतन ने हँसते हुए अपने पेट पर हाथ फिराया।

—मेरे ये दोनों कुत्ते पक्का तीन सेर चावल का भात खा जाते हैं और एक-एक सेर दूध पीते हैं।

—हुजूर के शौक की बलिहारी है। हुजूर अगर चाहें तो मेरी तरह बीस आदमी पाल सकते हैं। मैं कल आ कर बताऊँगा।—रतन नमस्कार कर विदा हुआ।

गुमास्ता ने इस बार डर से कहा—हुजूर, वैसे आदमी को घर में मत घुसने दीजिए।

खाना बनाने वाले महराज ने कहा—साक्षात् जैसे व्याघ्र है।

हेमाग बाबू ने हँस कर कहा—लोग तो बाघ को भी शौक से पालते हैं! देखूं जरा थोड़े दिन इसे भी पाल कर। महराज ने डर से कहा—क्या करेंगे उसे पाल कर हुजूर? हुजूर का नाम तो सारे देश में है।

बीच में ही बाधा दे कर हेमाग बाबू ने कहा—उन कुत्तों को पोसा है, किसी को कटवाता तो नहीं, दो बन्दूकें भी मेरे पास हैं, लेकिन मैं ने किसी आदमी को गोली तो नहीं मारी। डरने की क्या बात है, जरा देखूं तो। गुमास्ते ने कहा—वह भला क्या काम करेगा हुजूर! बँधा हुआ काम करने की उसे जरूरत ही नहीं पड़ती। वह यही सब काम करता है। इस के अलावा जिस घर के सामने जा खड़ा हो जाता है उस दिन की खुराक उसे मिल जाती है, उसे कोई ना नहीं करता, उसे देखते ही लोग डर के

मारे काँपते हैं। वह जो भी चाहता है उसे ही दे कर लोग उस से पिण्ड छुड़ा लेते हैं।

महराज ने कहा—तब भी जरा देखिए न, इस अभागे की झोंपडी पर फूस नही है। पत्नी की साडी बिल्कुल फटी हुई है। पाप का धन कपूर की तरह उड़ जाता है। कहते हैं न कि पाप से सचित धन और बाढ़ का पानी—ये कभी भी नही रहते !

गुमास्ते का अनुमान ठीक नही हुआ। दूसरे दिन ही सुबह रतन आ खड़ा हुआ। उस दिन वह सलाम नही बजाया। हेमांग बाबू के पैर को छू कर उस ने कहा—हुजूर के पैरो मे ही आज से रहूँगा।

कई दिनों के बाद हेमांग बाबू किताबो से ऊब गये। वे अपनी बन्दूकों और कुत्तों को ले कर बाहर निकल पड़े। कोई बड़ा शिकार इधर नही मिलता। बस खरगोश और चिड़िया-चुनमुन। हरियल, तित्तर, सारस और भी कई तरह की चिड़ियों के झुंड। बन्दूक का शब्द भी इन चिड़ियों के लिए अपरिचित है। गुमास्ते ने कहा—रतन, तुम बाबू के साथ जाओ !

रतन ने कहा—हुजूर के साथ दो बाघ तो जा ही रहे हैं, हाथ में उन के बन्दूक है। रतन भला उन चिडियों को उठाने के लिए कहाँ जायेगा ! उस शम्भू को बाबू के साथ भेज दो !—वह चिलम पर तम्बाकू रखने मे व्यस्त हो गया।

हेमांग बाबू गाँव पार कर के मैदान में पहुँचे तब पास के ही एक जंगली फूल की झाड़ी में एक जानवर उछल कर मैदान की ओर भागा··· खरगोश था यह। उन्होंने बन्दूक उठा कर गोली दाग दी। खरगोश बहुत ऊँचा कूद कर फिर नीचे गिर गया। लेकिन दूसरे ही क्षण लँगड़ाते-लँगड़ाते भागने लगा। तब टाम और टेबी उस के पीछे दौड़ पड़े। देखते ही देखते टाम ने आ कर उस मासूम जानवर को गरदन दबोच ली। निस्तब्ध प्रान्तर उस की करुण ध्वनि से जैसे भर सा गया। हेमांग बाबू को लगा कि किसी बकरा के बच्चे को कुत्ते ने पकड़ लिया हो। ठीक वैसा ही चीत्कार। खरगोश का चीत्कार उन्होंने कभी नहीं सुना था। टाम ने उसे एक दो बार झिझोरा और वह बेचारा जीव वहीं ठंडा हो गया। मनुष्य की हिंस्र वृत्ति

जब पाशविक उल्लास में जाग उठती है, तब आदमी पता नहीं कैसा हो जाता। एक बार खून करने पर जैसे उस पर एक नशा चढ़ जाता है और आदमी दूसरी हत्या के लिए पागल हो उठता है। पहले ही एक ऐसा शिकार कर के हेमांग बाबू जैसे मस्त हो उठे। अन्त में एक बोझा पक्षियों का लाद कर जब वे कचहरी में लौटे तब शाम हो चली थी।

स्नान और भोजन के बाद वे किताब ले कर बैठ गये। इसी समय गुमास्ता आ कर उन के पास खड़ा हो गया और उस ने कहा—उस मरे हुए खरगोश के पेट में चार बच्चे थे।

हेमांग बाबू ने बहुत शिकार किया था। मरी हुई चिड़िया के पेट में अण्डे तो उन्होंने कई बार देखे थे इसलिए यह खबर पा कर उन्हें कोई आश्चर्य नहीं हुआ बल्कि कुतूहलवश वे उठ कर बोले—अच्छा, चलो तो ज़रा देखूं?

सचमुच ही चमड़े की एक झिल्ली के भीतर चार छोटे-छोटे बच्चे दिखाई दे रहे थे। हेमांग बाबू ने कहा—यह थोड़ी गलती हो गयी। खैर! इन चारों बच्चों को दोनों कुत्तों में बाँट दो।

रात को भोजन करते समय हेमांग बाबू ने देखा, सभी लोग खाने बैठे हुए हैं सिर्फ रतन नहीं है। भौं सिकोड़ कर उन्होंने प्रश्न किया—रतन कहाँ है?

गुमास्ता बोला—वह नहीं खायेगा, कहता है कि आज उस का शरीर ठीक नहीं है।

—क्यों?

—इन खरगोश के बच्चों को देख कर, खरगोश के पेट में जो बच्चे थे उन्हें देख कर उसे कष्ट हुआ।

हेमांग बाबू आश्चर्यचकित हो उठे। जो आदमी मनुष्य को मार सकता है वह एक छोटे से जानवर के लिए रो रहा है!

दूसरे ही क्षण वे तुरन्त हँस पड़े। ये सब अभ्यास की बात है। जो आदमी पशुहत्या किया करता है, वह नरहत्या नहीं कर सकता। और जो नरहत्या करता है वह पशुहत्या देख कर रोने लगता है। एक बार उन्होंने सोचा कि उस आदमी को विदा ही कर देना ठीक है। दूसरे ही क्षण उन के

मन में हुआ—रहने दो।

रतन हेमांग बाबू के पास ही रह गया। अपने परिवार के साथ आ कर वह हेमांग बाबू के इलाके में रहने लगा। हेमांग बाबू ने ही उस का सब इन्तजाम कर दिया। वह खाता-पीता और उन की कचहरी में बैठा रहता। इन दोनों कुत्तों के साथ उस का बड़ा प्रेम-भाव था।

हेमांग बाबू जरा झक्की मिजाज के आदमी हैं। इन भयंकर जानवरों के ऊपर उन का बड़ा स्नेह है। वैसे वे आदमी खराब नहीं हैं। जमींदार होने पर भी वंश-परम्परा के अनुसार ये लोग बड़े सभ्य और दयालु जमींदार के रूप में प्रसिद्ध हैं। लेकिन और कर्मचारी इस भयंकर आदमी को देख कर डर से जाते थे। और रतन की मोटी तनख्वाह को भी देख कर उन को जलन होती थी। रतन एकाध दिन जा कर सलाम ठोंक कर कहता—गुमास्ता साहब, आज शराब आप की ओर से रहेगी!

यमराज के पास अनुनय-विनय चलती है, लेकिन यमदूत के पास गिड़गिड़ाने से कोई लाभ नहीं होता है। कोई इकन्नी और कोई दुअन्नी फेंक कर रतन से अपना पिण्ड छुड़ाता।

रतन नमकहराम नहीं था, वह उन्हें भी एक सलाम ठोंकता और कहता—बाबू का गुलाम हूँ और आप लोगों का भी। कभी कोई जरूरत पड़े तो हुक्म करेंगे हुजूर।

बेचारे सीधे-सादे कर्मचारी शुष्क हँसी हँस कर कहते—हम लोगों का भला क्या काम है रतन?

रतन समझा कर कहता—हुजूर, आदमी होने पर ही काम की जरूरत पड़ती है। आप लोगों का कोई दुश्मन नहीं है। जो जैसा आदमी होता है उन का दुश्मन भी वैसा ही होता है, और वैसा ही उस का काम। रतनपुर के एक जमींदार के खजानची का झगड़ा उस के गाँव के एक बड़े आदमी से हो गया। अरे बाबू, क्या बताऊँ! अरे बेटा जाति का सोनार और पैसा होने पर आसमान में सीढ़ी लगाने लगा। खजानची ने मुझे पकड़ा—रतन, मुझे तुम्हें बचाना ही होगा, नहीं तो मेरी इज्जत धूल में मिल जायेगी। मुझे पचीस रुपये दिये उस खजानची ने। तीन दिन बीतते ही उस ने समझा, बेटा सुनार की छप्पर में साल पोड़ा!

कर्मचारी ने डर से कहा—आग !

रतन ने कहा—जी हाँ ! लाल घोडा से मेरा मतलब आग से ही था। और एक ही बार नही, तीन-तीन बार मैं ने आग लगायी। अन्त मे उस बेटा सुनार ने टिन से छवा दिया मकान। तब जानते है, क्या किया मैं ने ? गाँव के रास्ते पर वह बेटा खडा था। उस का कान पकड़ कर गाँव के चारो तरफ एक घुडदौड करा दिया।

कर्मचारी चुप रहा। वह और बात-चीत नहीं बढ़ाना चाह रहा था। रतन से पिण्ड छूट जाना ही अच्छा था। लेकिन रतन ने उसे क्षमा नही किया। उस ने अपने भयकर चेहरे को और बीभत्स बनाते हुए कहा कि लाल घोडा तो खूब सस्ता होता है हुजूर, सिर्फ एक सलाई की तिल्ली और सब कुछ खत्म। एक रुपया देने पर एक कोने मे, दो रुपये देने पर दो कोने मे और तीन रुपया देने पर तीन कोने में और चार रुपया देने पर चारो कोने मे आग लगा सकता हूँ।

कर्मचारी ने इस बार नाराज हो कर कहा—लेकिन यमराज के यहाँ तो तुम्हे जवाब देना पड़ेगा रतन ?

ही-ही करता हुआ रतन हँस कर बोला—उस दिन किसी को पैसा नही देना होगा हुजूर, रतन अपनी ही गरज से यमराज की दलान में आग लगा देगा।—ऐसा कह कर उठ पड़ा।

एक दिन सचमुच रतन का काम आ ही पड़ा।

हाल ही मे हेमांग बाबू ने एक नया गाँव खरीदा था। उस गाँव मे प्रजा के साथ थोडा विरोध हो गया। हेमांग बाबू का भी दोष नही दिया जा सकता। उन्होंने फसाद नही चाहा था। फसाद उस गाँव के आदमियो ने ही किया। हेमांग बाबू ने नजराना या सलामी कुछ भी नहीं चाहा था उन से। उन्होंने केवल क़ानूनी मालगुज़ारी ही चाहा था लेकिन प्रजा वह भी नहीं देना चाहती थी।

असामियों ने कहा—लगान किस बात का ? खेत तो बिलकुल ऊसर हो गये।

हेमांग बाबू ने नालिश की। उन के असामियों ने उन की कचहरी में आग लगा दी। एक दिन रास्ते में उन के गुमास्ते को पकड़ कर कान मल

कर अपमानित कर दिया। हेमांग बाबू के पैरों में जब गुमास्ता पड गया तब वे ऊपर से नीचे तक जल उठे। उन्होंने रतन को बुलवाया। रतन के आ कर खड़े होते ही उन्होंने कहा—कितने दिन तक बैठ कर तुम ने खाया है। हाथी की तरह तुम को पाला है। इस बार तुम को काम दिखाना होगा।

रतन उन के मुंह की ओर खडा हो कर ताकता रहा। हेमाग बाबू ने कहा—नये गाँव पलासबनी को जा कर आग लगा दो।

रतन ने पूछा—पलासबनी ?...

—हाँ। गाँव के छोर से ले कर गाँव के अन्त तक। एक भी घर न बचे, समझ गया ?

हेमांग बाबू ने फिर कहा—अगर कोई तुम्हे रोके तो उसे मार डालना।

—खून ?—रतन ने जैसे हुक्म को बिल्कुल ठीक से समझ लेना चाहा।

—हाँ, खून !—हेमांग बाबू ने काँपते गले से फिर आदेश दिया।

रतन ने फिर कोई बात नहीं की और चला गया।

हेमाग बाबू उत्कण्ठित हो कर रतन के लौटने की बाट जोहते रहे। दूसरे दिन उन के मन मे हुआ कि उत्तेजनावश उन्होंने यह हुक्म नहीं दिया होता तो अच्छा होता। लेकिन रतन ने क्या वह काम कर दिया है ? तीसरे दिन वह रतन के लिए और उत्कण्ठित हो उठे। कहीं रतन पकड़ा तो नहीं लिया गया ? और चौथे दिन उन्होंने एक टहलदार को बुला कर कहा—जरा रतन के घर जा कर देखो तो !

वह नौकर लौट कर आया तो उस ने कहा—हुजूर, वो तो कहीं नहीं दिखाई पडता। उस का परिवार भी वहाँ नहीं है। घर मे तो ताला बन्द है।

लेकिन रतन लौटा नहीं। चिन्तित हो कर हेमाग बाबू ने पलासबनी गाँव मे आदमी भिजवाया। लेकिन इस के पहले ही समस्या का समाधान हो गया। शाम को यह पता लग गया कि रतन दूसरे ही दिन यहाँ से अपनी पत्नी को ले कर भाग गया। उस के घर मे कुछ टूटी-फूटी मिट्टी की हाँड़ियाँ थीं बस। पलासबनी से खबर आयी कि उन ने गाँव भी नहीं जलाया और

वह पकड़ा भी नहीं गया।

हेमाग बाबू को काठ मार गया। नारायण गुमास्ते ने आ कर कहा—इस आदमी का यही पेशा है हुजूर! बेटा वहाँ भी कुछ रुपया ले कर पैंतरा बदल गया होगा।

हेमाग बाबू उस दिन अपने दोनों कुत्तों की सेवा में जैसे पागल से रहे।

एक साल के बाद हेमाग बाबू अपने एक दोस्त के यहाँ नेवता खाने गये। हुगली जिला का एक गाँव। उन का दोस्त भी उन्हीं की तरह अच्छा जमींदार। वहीं पर नाटकीय ढंग से रतन के साथ उन की भेंट हो गयी।

उन के मित्र ने कहा—इस बार मैं ने एक शेर पाला है, देखोगे?

हेमाग विस्मित हो कर बोले—शेर?

—हाँ-हाँ, शेर।

—चलो देखूं, कहाँ है?—हेमाग बाबू उत्सुक हो उठे। उन के दोस्त वहीं बैठ गये। बोले—यहीं बैठो, उसे ला रहा हूँ। अरे ताराचन्द—जरा उसे बुला तो दे।

हेमाग बाबू बोले—अरे शेर यहाँ लाओगे? नहीं, नहीं, इतना दुःसाहस ठीक नहीं। अभी बच्चा है शायद?

—बच्चा नहीं है। पूरा पट्ठा है।

—क्या कहते हो?—हेमाग बाबू की आँखें आश्चर्य से फटी रह गयीं।

—सलाम हुजूर!

जमीन पर झुक कर सलाम ठोंकता हुआ रतन ने ज्योंही हेमाग बाबू के चेहरे की ओर आँख उठा कर देखा, वह पत्थर की तरह वहीं जड़ बन गया।

हेमाग बाबू के आश्चर्य का कोई ठिकाना नहीं रहा। उन के कुछ बोलने के पहले ही उन के दोस्त ने दिल्लगी करते हुए कहा—नरव्याघ्र। शिकार दिखाने पर और इसे खोल देने पर उस के बचने का कोई उपाय नहीं है।

हेमाग बाबू ने कहा—हूँ!

इसी समय एक कर्मचारी हेमाग बाबू के उस मित्र के पास आया।

बोलने का साहस नहीं करेगा। लेकिन वह जानती है कि उन के चेहरे पर और उन की आँखों में जो भाषा फूट उठेगी भला वह उसे कैसे देखेगी। ऐसे ही बच्चे-बच्चियाँ उसे देख कर बेहोश हो जायें। छी! छी! इसी लज्जा के कारण एक बार वह आधी रात को अपना गाँव छोड़ कर भाग गयी। उसे याद आ रहा है वह दिन, तब वह थोड़ी बड़ी हो गयी थी। उसी की उम्र वाली सावित्री को एक दिन पहले रात को शिशु हुआ था। सुबह ही उसे देखने के लिए गयी थी। सावित्री तब बच्चे को ले कर धूप में बैठी थी, उस का लड़का गुदड़ी के ऊपर सोया हुआ था। साँवले रंग का क्या सुन्दर लड़का था।

ठीक आज की ही तरह उस के मन में उस दिन भी आया था उस बच्चे को ले कर अपनी छाती में चिपका कर नरम मैदे की लोई की तरह अपने ओठों से चूम-चूम कर उसे खा जाये। तब वह नहीं समझ पायी थी कि यह क्या है? उस के मन में ऐसा हुआ कि बच्चे को प्यार करने की कामना है यह!

सावित्री की सास हाँ-हाँ करती हुई दौड़ कर आयी थी और सावित्री को डाँट कर उस ने कहा था—अरे तेरी खोपड़ी में अक्ल नहीं है? अरे हरामजादी! इस के साथ क्या गप्प मार रही है? मेरे बच्चे को कुछ हुआ तो बताऊँगी—हाँ!

इस के बाद बाहर की ओर अँगुली दिखा कर कहा था उस से—निकल जा, मैं कहती हूँ कि निकल जा। हरामजादी की आँखों को तो जरा देखो!

सावित्री बच्चे को जल्दी से अपनी छाती में लगा कर काँप उठी और घर के भीतर भाग गयी। उस दिन बड़ी कचोट ले कर वह लौटी थी। बार-बार उस के मन में हुआ था—छिः छिः, भला वह क्या कर सकती है? भले ही वह डाइन हो लेकिन क्या ऐसा कहने से ही वह सावित्री के छोटे बच्चे का अहित करेगी? कर सकती है छिः छिः! भगवान् को जैसे उस ने पुकार कर कहा था—हे ईश्वर, तुम इस का विचार करना। तुम सावित्री के बच्चे को सौ साल की उम्र देना। तुम यह प्रमाणित करना कि सावित्री के बच्चे को मैं कितना प्यार करती हूँ।

लेकिन शाम होते ही उस की उस विस्मयी दृष्टि की भूख से वह लड़का चल बसा। सावित्री का छोटा शिशु धनुष की तरह टेढा हो गया था और ऐसा लग रहा था कि जैसे उस के शरीर से कोई खून चूसे जा रहा है।

लज्जा के मारे भाग कर वह गाँव के श्मशान वाले जंगल में छिप गयी थी। बार-बार अपने मुँह से मिट्टी पर थूक कर वह देख रही थी कि उस में कहाँ खून है। अपने गले में अँगुली डाल कर उबकाई कर के भी उस ने देखना चाहा था, समझना चाहा था कि कहाँ खून है। दो-एक बार तो कुछ नहीं समझ सकी थी लेकिन इस के बाद ताज़े रक्त का छींटा बाहर आ गया। उसी दिन वह समझ गयी थी अपनी अपार निष्ठुर शक्ति की बात!

गम्भीर स्तब्ध रात्रि। उस दिन शायद चतुर्दशी थी। हाँ, चतुर्दशी ही तो थी। बाकुल के तारा देवी के मन्दिर में पूजा की ढोलक बज रही थी, उस दिन माँ तारा जागृत थी, पूर्णिमा के पहले चतुर्दशी के दिन माँ की पूजा होनी है, बलिदान चढ़ाया जाता है। लेकिन माँ ने भी उस पर दया नहीं की। कितनी बार उस ने मिन्नत की है—माँ, मुझे डाइन से आदमी बना दो, मैं अपनी छाती चीर कर तुम्हें खून दूँगी। लेकिन माँ ने उस की कोई बात नहीं सुनी जैसे।

एक गहरी साँस ले कर बूढ़ा निराश हो उठी। अतीत की पिछली सारी बातें डोर-कटी हुई पतंग की तरह उस के मन में उभरी आ रही थीं। उस की छोटी-छोटी भूरी आँखों में एक अर्थहीन दृष्टि जग उठी। उसी दृष्टि से वह छाती-फाटा मैदान की ओर ताकती हुई बैठी रही। छाती-फाटा मैदान धूलि-धूसरित था। धूसर-धूलि का एक गाढ़ा प्रलेप जैसे सभी वस्तुओं को ढक गया था।

उस अपरिचिता युवती का बच्चा भी दो गाँव पार करते-करते चल बसा। जो पसीना उसे छूट रहा था, वह बन्द नहीं हुआ। उस की देह का सारा रक्त कोई निचोड़ कर जैसे बाहर कर रहा था। पर कौन था वह? हाय रे सर्वनाशी! वह तरुणी अपनी छाती को पीट-पीट कर कह रही थी—क्यों गयी मैं, उस डाइन के पास क्यों गयी? यह मैं ने क्या कर डाला!

लोग काँप उठे। बुढ़िया की मौत की कामना करने लगे। एक बार

कई जवान लड़कों ने मिल कर उसे सज़ा भी देना चाहा। बूढी डाइन साँपिनी की तरह फुंफकार उठी—वह भला क्या करेगी उस का ? वह क्यों आयी यहाँ ? उस की आँखों के सामने इतनी सुन्दर और इतनी कच्ची देह ले कर क्यों आयी ? हठात् चील की तरह तीखी आवाज़ में वह चीख उठी। उस आवाज़ को सुन कर वे सारे जवान भाग गये। लेकिन वह बुढ़िया अजगरी की तरह फुंफकार रही थी, अपने भीतर का ज़हर जैसे वह उगल रही थी और ख़ुद ही उस ज़हर को पी रही थी। कभी ही-ही कर वह हँसती और कभी क्रुद्ध फुंफकार के साथ इस छाती-फाटा मैदान को कँपाती। कभी उस की यह भी इच्छा होती कि अपनी छाती पीट कर अपने बालों को नोच कर वह हो-हो कर रोये। उस की भूख समाप्त हो गयी थी। आज रसोई की कोई ज़रूरत नहीं। आज उस ने एक पूरे बच्चे की देह का रस अदृश्य ढंग से शोषण किया है।

हवा धीरे-धीरे बह रही थी। शुक्ल पक्ष की नवमी का चन्द्रमा छाती-फाटा मैदान में एक सादे चद्दर की तरह बिखरा हुआ था। कहीं से एक चिड़िया उड़ती हुई आ रही थी और साथ-ही-साथ उस की आवाज़ आ रही थी—टिहुट-टिहुट। आम के बग़ीचे में झींगुर बोल रहे थे। बुढ़िया के घर के पिछवारे झरने के पास दो व्यक्ति धीरे-धीरे कुछ बातें कर रहे थे। बुढ़िया के मन में आया कि वे ही छोकरे उस का शायद कुछ नुक़सान करने आये हों। बड़ी सावधानी के साथ बुढ़िया घर के कोने के सामने आ कर झाँकने लगी, नहीं वे नहीं हैं। यह उन्हीं डोमों की लड़की थी जिस के पति ने उसे छोड़ दिया था और उस के साथ था उस का प्रणयी वह डोम लड़का।

लड़की कह रही थी—नहीं, यहाँ भला कौन आयेगा। लेकिन मैं घर जाऊँगी अब।

लड़के ने कहा—हूँ, यहाँ भला कौन आ रहा है ? दिन में ही कोई नहीं आता और भला रात में कौन आता है ?

—ठीक है यह। लेकिन जब तेरा बाप मेरे साथ सगाई नहीं करेगा तब मैं तेरे साथ कैसे रहूँगी।

छिः छिः ! कितनी शर्म की बात है ! कहाँ जाये वह ? यदि ये दोनों

बेचारे छिप कर बात करने यहाँ आये हैं तब भला वहाँ क्यों बैठे हुए हैं ? क्यों नहीं उसके घर में आये वे ? उस जैसी बुढ़िया से भला लज्जा की कौन सी बात है ? लड़का क्या कह रहा है जैसे···? अगर मेरे माँ-बाप शादी नहीं करते हैं तो चल, मैं तुझे ले कर भिनगाँव भाग चलता हूँ। वहीं मैं तुझे ले कर अपना घर-द्वार बसाऊँगा। तेरे बिना तो ज़िन्दा नहीं रहूँगा।

आह, अरे मुँह फुकवन्ना क्या कह रहा है ! ऐसी काली-कलूटी लड़की के ऊपर इस लड़के का मन आ गया। बुढ़िया को अपने अतीत की याद आयी। उस के गाँव के दस कोस दूर बोल पुर शहर के उस पनवाड़ी की दुकान पर का बड़ा आइना। आइने के बीच एक लम्बी दुबली-पतली चौदह पन्द्रह साल की लड़की की तसवीर। सिर के बाल रूखे, छोटा-सा माथा, गोल-मटोल नाक, पतले होठ। दोनों आँखें छोटी-छोटी और आँखों की दोनों पुतलियाँ कत्थई रंग की। लेकिन छोटी आँखें होने से क्या, पानीदार थीं। आइने की ओर ताक कर वह अपनी ही आँखें देख रही थी। आइना तो उस के पास था नहीं, इस लिए उस आइने में अपने रूप को देख रही थी।—अरे तू कौन है रे ? कहाँ से आयी ? लम्बा-चौड़ा एक जवान उससे पूछ रहा था। पिछली रात को ही वह बोलपुर आयी है। सावित्री के बच्चे को मार कर वह उस चतुर्दशी की रात को बोलपुर भाग आयी थी। उस आदमी को देख कर उसे बुरा न लगा, लेकिन उस की बातचीत का ढंग उसे बड़ा खराब लगा था। वह निष्पलक दृष्टि से उसी की ओर ताक रहा था। क्यों, मैं भला जहाँ से भी जाऊँ, तुम से मतलब ?

—मुझ से मतलब ? एक घूँसा मार दूँगा तो मिट्टी के भीतर धँस जायेगी। कभी घूँसा देखा है ?

क्रोधित हो कर दाँत पर दाँत बैठा कर उस दिन उस ने उस जवान आदमी के खून को पीने की इच्छा प्रकट की थी। काले कसौटी पत्थर की तरह गठा हुआ शरीर। उस भी उस के जीभ के नीचे जैसे लार का फ़व्वारा फूट पड़ा था। कुछ भी जवाब न दे कर वह केवल तिरछी नज़र से उस आदमी की तरफ ताकती हुई चली आ रही थी।

उस दिन सूर्य उदय होने के साथ ही साथ पूर्व की ओर जैसे चूना और हल्दी के रंग में मिला हुआ एक बड़े थाल के आकार का गोल चाँद भी उठ

रहा था। वोलपुर के 'बिलकुल आखीर में रेल लाइन के पास के पोखरे के घाट पर बैठी हुई वह अपने आँचल से लाई निकाल-निकाल कर खा रही थी और चाँद की तरफ ताक रही थी। चन्द्रमा का रंग तब बिलकुल दूध की तरह नहीं हुआ था। अन्धकार मिले-जुले प्रकाश में चारों ओर कुहासा सा दिखाई दे रहा था तथा सहसा उस के सामने आ कर खड़ा हो गया और वह चौंक उठी। वही आदमी था। वह ही-ही कर के हँसा था। उस ने कहा था—आज भी याद आता है—हँसी के साथ ही साथ उस आदमी के गालों में गड्ढे पड़ गये थे।—मेरी बात का जवाब नहीं दे कर भाग आयी?

उस ने कहा था—तुम यहाँ से भाग जाओ, नहीं तो मैं चिल्लाऊँगी।

—चिल्लाओगी? देख रही है इस पोखरे की गीली मिट्टी, इसी कीचड़ में तेरी गरदन दबा दूँगा।

उसे भय हुआ था। वह उस के मुँह की ओर ताकती रह गयी थी। उस आदमी ने एकाएक अपने पैर से जमीन को ठोक कर धमकाते हुए कहा था—प्रत! वह चौंक उठी थी। उस के आँचल में पड़ी हुई लाई झरझरा कर गिर पड़ी थी। वह आदमी ही-ही कर के हँस पड़ा था। और वह तो बिलकुल रोने लगी थी। वह आदमी जैसे नाराज हो कर बोला था—ऐसी रोवनी लड़की ले कर क्या होगा? भाग, भाग!

उस के गले में स्पष्टतः स्नेह का स्वर फूट पड़ा था।

उस ने रोते-रोते ही कहा था—तू मुझे मारेगा क्या?

—नहीं-नहीं, मारूँगा क्यों? मैं ने तुझ से पूछा था कि तेरा घर कहाँ है? और तू इसी बात पर चीख-चीख कर उठी। इसी से मैं ने कहा था।—और ऐसा कह कर के वह ही-ही कर के हँस पड़ा था।

—मेरा घर यहाँ से बहुत दूर है। पाथर घाटा।

—क्या नाम है तेरा? कौन जाति है?

—मेरा नाम है गुरधनी। लोग-बाग मुझे गरा कह कर पुकारते हैं। हम लोग डोम हैं।

वह आदमी बहुत खुश हो गया था और उस ने कहा था कि हम लोग भी डोम हैं। तो घर से क्यों भाग आयी?

उस की आँखों मे पानी भर आया था, वह पता नही चुपचाप क्या सोच रही थी, क्या जवाब दे वह ?

—नाराज हो कर भाग आयी हो ?

—नहीं।

—तब ?

—मेरे माँ-बाप का कोई नही है। भला मुझे खाने-पीने को कौन देगा ? इसीलिए यहाँ मजदूरी कर के अपना पेट पालने आयी हूँ।

—शादी क्यों नही किया ?

वह उस आदमी के चेहरे की ओर देखने लगी थी। भला उस की तरह डाइन से क्यों विवाह करेगा ! वह सिहर उठी थी। इस के बाद पता नही कैसी लज्जा से भर उठी थी।

बुढिया आज भी अकारण अपना सिर ऊँचा कर के मिट्टी के ऊपर धीरे-धीरे हाथ फेर कर धूल और ककड इकट्ठा करने लगी। सारी बातें जैसे खो गयी हैं। जैसे माला बनाते-बनाते धागे से कही सुई गिर पडी हो।

ओह, कितने मच्छर है ! जैसे मधुमक्खी के छत्ते को खोद देने पर मक्खियाँ आदमी छेंक लेती हैं वैसे ही ये मच्छर चारो ओर से घेरे हुए हैं। अरे ! वह लडका और लडकी कहाँ गये, उनकी बातें तो नही सुनाई पडती है ! जल्दी से वह दरवाजे पर जा कर बैठ गयी। कल वे जरूर आयेंगे। भला उस के घर की तरह उजाली जगह कहाँ मिलेगी ? इस जवार मे किसी को आने की हिम्मत नही होती लेकिन वे निश्चित आयेंगे। प्यार मे भी कहीं डर लगता है !

हठात् उस के मन में एक विचित्र भावना बुलबुला उठी। इस लड़के को वह खायेगी। बड़ा पट्ठा जवान है वह। हठात् उस का मन सिहर उठा। अपनी गरदन हिला कर बार-बार वह बोल उठी, नहीं, नहीं, नहीं।

कई क्षणों के बाद बस वह अपने मन से गरदन इधर-उधर करने लगी। इस के बाद उठ कर वह धीरे-धीरे छप्पर के बरामदे के सामने इधर-उधर टहलने लगी। वह बाट जोह रही है। आज उस ने एक बच्चे को खा लिया है, आज तो वह सो नही पायेगी, उसकी इच्छा होती है कि छाती-फाटा मैदान को पार कर बहुत दूर चली जाय। लोग कहते हैं कि वह पेट

को भी आसमान में उड़ा सकती है, अगर ऐसा होता तो बहुत अच्छा होता। पेड़ पर बैठ कर आसमान के बादलों को चीर कर हरहराती हुई जहाँ चाहती वहाँ जाती। कम से कम इस लड़के-लड़की की बात तो सुनाई पड़ती। वे कल जरूर आयेंगे।

ही-ही-ही ! ठीक, आये हैं वे। लड़का चुप बैठा हुआ है और अपनी गरदन घुमा कर रास्ते की ओर ताक रहा है। आयेगी रे, वह आयेगी रे।

उसे अपनी बात याद आ गयी। सारे दिन घूम-फिर कर वह जवान शाम को ठीक उसी पोखरे पर आया था। उस से पहले ही आ कर बैठा था। रास्ते की ओर ताकता हुआ अपने ही आप पैर हिला रहा था। वह स्वयं आ कर मुँह छिपा कर हँस रही थी।

—आ गया है तू ?

—मैं तो यहाँ कभी से बैठा हूँ।

बुढ़िया चौंक उठी। ठीक वैसी ही बातें। उस ने भी उस से यही बात कही थी। ओह, यह लड़का भी ठीक वही बात कह रहा है। लड़की उस के सामने खड़ी है, जरूर वह मुँह छिपा कर हँस रही है।

उस दिन वह एक दोने में कुछ खाने को लाया था। उस के सामने बढ़ा कर उसने कहा था—कल तेरी लाई गिर गई थी न। ले, यह है।

लेकिन वह हाथ नहीं बढ़ा सकी। उस की छाती में जैसे साँप की तरह लपलपाता हुआ उस के भीतर की डाइन का मन बार-बार फन मारने को तैयार हो रहा था, लेकिन मार नहीं पा रहा है।

इस के बाद उस ने क्या किया था ? हाँ, याद है। ये बातें क्या भला ये जानते हैं ? या वे ऐसा कर सकते हैं ? ओ माँ ! ठीक वैसे हो तो। यह लड़का भी उस लड़की के चेहरे को अपने हाथ में पकड़े हुए है। बुढ़िया अपने दोनों हाथों को जमीन पर ठोक कर हँसी से फट पड़ी। लेकिन उस की हँसी एकाएक ठहर पड़ी। सहसा एक लम्बी दीर्घ श्वास ले कर वह पेड़ के सहारे बैठ गयी। उसे याद आया अपना वह अतीत। इस के बाद ही उस ने कहा था—मुझ से शादी करेगी सरा ?

ओ पता नहीं कैसी हो गयी थी। कुछ कह नहीं सकी थी, कुछ सोच नहीं सकी थी। सिर्फ उस के कान के पास कुछ सरसराहट सी लगी थी।

उस डाइन का काला खून वहाँ गिरा हुआ है।

अतीत के उस महानाग के विष के साथ इस डाइन का रक्त मिल कर छाती-फाटा मैदान को और भी भयंकर बना गया है। चारों ओर कहीं भी आर-पार नहीं लगता। मिट्टी से ले कर आसमान तक बस एक घुमॉट, कुहासा। उसी कुहासे भरी शान्ति में काले-काले छोटे-छोटे उड़ते बिन्दु आकाश में धीरे-धीरे उतर आ रहे थे।

उतर रहे थे गिद्धों के झुण्ड।

▭

तीन शून्य

कंकालावशिष्ट एक मूर्ति, छाती के हाड़ बस, चमड़े से ढके भर, क्षुधातुर अग्निगर्भ कोटरगत आँखें, भूरे-रूखे-उलझे केश, क्रोधित कुत्ते जैसी मुख-भंगिमा, चौड़े खुले हुए ओठों के बीच तीक्ष्ण हिंस्र दो दाँत, हाथों में भी बड़े-बड़े हिंस्र तीक्ष्ण नख, गले में हड्डियों की माला, नंगी देह, श्मशान से उठा कर लाया गया लोहू से भरा हुआ एक चीथड़ा कमर पर लपेटा हुआ, हो-हो-हा-हा करता हुआ वह आया इस देश में।

दुर्भिक्ष था वह। उस के अट्टहास से सारा देश सिहर उठा। उस के श्वास-प्रश्वास से वायु नीरस हो उठी। उस की जलती आँखों से सारा पानी सूख गया, उस के क्षुधार्त उदर को भरने में धरती माता के शस्य-भण्डार का कोष शून्य हो गया, इस के बाद उस ने मनुष्यों का रक्त-मांस ही अपने पेट में झोंकना आरम्भ कर दिया।

भयार्त मनुष्य उन्मत्त पशुओं की तरह इधर-उधर भागने लगा। वह दुर्भिक्ष अट्टहास करता, रुदन करता—हा अन्न! हा अन्न!! मनुष्य भी भयभीत कातर स्वर में रोते-रोते उसी दुर्भिक्ष के ही स्वर को दुहराता—हा अन्न! हा अन्न!!

एक बहुत बड़े धनी का घर। घर के दरवाजे पर अन्नप्रार्थी भिक्षुकों की भीड़ जम गयी है। एक मुट्ठी भात, थोड़ी सी दाल, साक-पात जैसा कुछ अचार, बस यही था

प्राप्य। दोपहरी के बाद, चार बजे बँटने का वक़्त था। लेकिन ये सुबह से ही बैठे रहते। भूख के मारे आँतें कुलबुलाती रहती किन्तु मिलने की आशा में ही ये सन्तुष्ट हो कर बैठे रहते। कोई किसी के सिर में से जुएँ बीनता, कोई नावदान की ओर ताकता रहता—इसी ओर भात का माँड़ बहता आयेगा। कोई गृहस्थ के घर से बिना भिक्षा के ही निराश लौटता।

—दो-चार दाने लाई देंगी माँ—

—कौन है री ? कौन अभागिन है, जान खा गयी।

किसी का नौकर एक कुएँ से पानी काढ रहा था, दो छोटे बच्चे अपने हाथों में एक पुरवा लिये आ खड़े हुए।

—ज़रा-सा पानी दो न जी !

—किस के बेटे हो ?

—चमारों के

—कौन-कौन हैं तेरे ?

—बस माँ है बाबू, और कोई नहीं।

—हूँ, कौन है तेरी माँ ? वही स्त्री जिस के गाल कटे हुए हैं ?

—हाँ, बाबू !

—भाग जा, हरामज़ादे !

दोनों बच्चे भयभीत हो कर एक-दूसरे की ओर ताकते हैं।

नौकर घृणा से ज़मीन पर थूक कर कहता है—हरामज़ादी को देखते ही देह गनगना उठती है ! भाग जाओ, भाग जाओ !

दोनों लड़के डर के मारे सरक आते हैं। साथ ही नौकर के मन में दया भी होती है, वह पुकारता है—आओ, आओ, पानी ले जाओ !

दोनों लड़के मिट्टी का पुरवा लिये फिर आ खड़े होते हैं। नौकर पानी डाल देता है। उन बच्चों की प्यास साधारण तो नहीं, जैसे अगस्त्य की तृषा हो। इस के अतिरिक्त भूख भी तो है, ढक-ढक करते हुए पुरवे पर पुरवा पानी पी गये वे और खाली पेट पानी से भर कर उन दोनों ने कहा —आह !

नौकर ने मज़ाक करते हुए कहा—आओ, तुम दोनों के गले में रस्सी बाँध कर कुएँ में लटका दूँ, कुएँ में दिन-रात पानी पीते रहना।

एक लड़का थोड़ा आगे बढ़ कर कहता है—आ रे आ, भाग आ, मारेगा।

दूसरा भी भाग गया।

उस ओर उन कंकालों के दल में झगड़ा-झाँटी शुरू। नाबदान में बह कर आये हुए माँड के लिए यह झगड़ा था। ऊँचे स्वरों में अश्लील-कुत्सित वाक्य-विनिमय अविराम गति से होने लगे।

एक आदमी ने एक स्त्री की गरदन धर दबायी। उस स्त्री के तीन लड़के थे—किसी ने उस आदमी को दाँतों से काटना प्रारम्भ किया है, एक उसे दोनों हाथों से कस कर चाँपे हुए है और एक टूटी हुई ईंट उठा कर उसी से मार रहा है उसे।

ये दोनों लड़के यह दृश्य देख ताली बजा कर नाचने लगे।

उस तरफ एक लम्बे-चौड़े डील-डौल वाला बूढ़ा, बैठे-बैठे अपने आप ही बक रहा था—मैं ने अपने जीवन में ऐसा खाद्य-पात नहीं खाया है, खा नहीं सकूँगा। साले, भात बाँट रहे हैं, पुण्य कर रहे हैं—हुँः, खाक कर रहे हैं।

एक अन्धी बुढ़िया भगवान् को गाली दे रही थी। बिल्कुल उस ओर दो युवतियाँ बरगद के पत्ते के दोने में पके हुए पीपल के गोदे खा रही थीं। संथाल इन्हें खाते हैं, खाने पर दुर्गन्ध होती है पर खाया जा सकता है। एक युवती काफ़ी सुन्दरी है।

—अरे ओ, क्यों मारपीट कर रहे हो? ओ, हरामजादा! शुअर!! —एक भलमानुस रास्ता चलते-चलते ठमक कर रुक गया। डाँट खा कर उस आदमी ने स्त्री का गला छोड़ चिल्लाना शुरू किया। उस ने स्त्री की बेहयाई और खुदगर्जी की शिकायत की। साथ-ही-साथ उस औरत ने भी रोना शुरू कर दिया।

उस 'भलमानुस' की नजर उस तरफ़ नहीं थी। वह देख रहा था उन जवान छोकरियों को।

दोनों तरुणियाँ लज्जा के मारे पीछे जा कर बैठीं।

उस भले आदमी ने धमका कर कहा—तुम लोग मार-पीट करोगे तो सभी को यहाँ से भगा दूँगा।

अन्धी बुढ़िया बोली—हाँ बेटा, वही करो। ये आफ़त के परकाले कहाँ-से-कहाँ आ गये हैं ! भगा दो।

इस बार वह सभी से पूछ रहा था—तेरा घर? तेरा घर? तेरा घर?

— अरी ओ, तुम दोनों का घर कहाँ है?

दोनों लड़कियाँ पीछे घूम कर ताकने लगीं।

—कहाँ है घर?

—साउगाँव, बाबू जी !—उन में से एक ने कहा।

—हूँ, यह तुम लोगों के कपड़े की क्या हालत है?

इस बार वे दोनों कातर-करुण भाव से ताकने लगीं। उस भले आदमी ने एक गूढ़ मुसकान के साथ कहा—दूँगा, कपड़ा भी दूँगा।

उन संथाल तरुणियों ने अपना चेहरा झुका लिया।

उस 'भले आदमी' ने पीछे ताका तो पाया कि सभी की आँखों में एक कुत्सित हँसी है। वह चला गया।

थोड़ी देर बाद वह फिर दिखाई पड़ा। एक आड़ वाली जगह में खड़ा हो कर वह उन दोनों लड़कियों की दृष्टि अपनी ओर आकर्षित कर रहा था। उस के हाथ में पुराने कपड़े की रंगीन किनारे की साड़ी थी। केवल अभाव की पूर्ति का साधन ही मन को नहीं बाँधता है, उस वस्तु का सौन्दर्य भी मन को लोलुप बनाता है, पथभ्रष्ट करता है।

दोनों लड़कियों की नज़र भी उधर गयी थी लेकिन संकोच और भय के मारे उन का कलेजा काँप रहा था। बीच-बीच में वे लोलुप दृष्टि से उस की ओर ताक कर भी उधर नहीं बढ़ पा रही थीं। आह, इतना सुन्दर और चिकना कपड़ा है इन दोनों साड़ियों का और कितनी अच्छी किनारी है इन की !

—आ, आ, इधर आ।

अपनी आवाज़ में मिठास घोल कर उस आदमी ने इन लड़कियों को अपनी ओर बुलाया।

दोपहरी, वह भी ग्रीष्म की दोपहरी, आकाश से जैसे लगातार आग बरस रही थी। पैर के नीचे धरती जैसे गरमी से फट जायेगी। भिखारियों

का दल एक झण्ड में एक स्थान पर नहीं था। इधर-उधर जहाँ-तहाँ छाया तने बैठा हुआ था, पेट उन का खाली था और उस भूख की थकान के कारण जैसे वे इधर-उधर ढुलक से पड़ते थे।

बार-बार इधर-उधर ताक कर एक लड़की आगे बढ़ आयी। उस भले आदमी ने बहुत धीमे से कहा—यह ले, नयी साड़ी दूँगा, रुपया भी दूँगा; समझी?

लड़की ने कुछ नहीं कहा।

फिर उस भले आदमी ने कहा—समझी?

लड़की ने गरदन हिलायी।

उस तरफ़ हल्ला-गुल्ला हो रहा था। भयंकर कोलाहल। जूठन बँटने का समय हो गया था।

यह लड़की भी जल्दी से उधर चली गयी।

घोर अँधेरी रात।

जगल में भेड़िये घूम रहे थे, सीलन भरी गलियों में मिट्टी पर निःशब्द इधर-उधर साँप, बिच्छू, केंचुए घूम रहे थे।

इसी के बीच मनुष्य भी इधर-उधर घूमता था, ऐसे ही चुपचाप, दबे पैरों से। अन्धकार, चारों तरफ़ अन्धकार। लेकिन तीखी दृष्टि अँधेरे को चीर कर बहुत दूर तक जा रही थी। वही भला आदमी चारों ओर घूम रहा था। उस के हाथ में एक दोना था।

कहाँ, किस तरफ़? इसी जगह तो रहने की बात थी। कहाँ है?

एक टूटा-फूटा मकान, घर के सामने ही थोड़ी सी साफ़ जगह, उस के बाद भी एक बँधा घाट। इसी घाट पर ही तो रहने की बात थी।

यहाँ कौन सो रहा है? निर्द्वन्द्व कौन सो रहा है?

तीखी दृष्टि से देखने पर पता लगा, यही कानी बुढ़िया है। यह कौन खाँस रहा है घर में? कान लगा कर सुनने पर पता लगा कि कोई मर्द है। फिर भी घर में घुस कर उस ने देखा, देखा तो पता लगा कि मर्द ही है। कौन है, यह समझने की ज़रूरत नहीं थी।

कहाँ, कहाँ?

उन्मत्त सासंसा उस की छाती में उमड़ रही है, धड़-धड़े वह सोचता

है। उस के मस्तक पर आकाश में अगणित नक्षत्र झलमला रहे हैं। बीच-बीच में दो-एक तारे जैसे टूट भी रहे हैं।

शायद उस बनिये के टूटे हुए घर में न हो ?

फिर सावधानी से वह आगे बढ़ता है। हाँ, आदमी की साँस का पता तो लगता है।

आँखें जैसे जल उठती हैं, तीखी दृष्टि और भी तीक्ष्णतर हो उठती है।

हाँ, यही तो है। एँ।

नही, यह नही है; हाँ, यही है।

इस के बाद ?

वह लड़की डर के मारे चिल्ला उठी। लेकिन एक ही क्षण के बाद उस की चीत्कार बन्द हो गयी, उस के मुँह पर हाथ रख दिया उस ने।

—चुप !

लड़की ने सारी शक्ति लगा कर रोका। लेकिन वह रोक नहीं पायी। जैसे उस का दम घुट गया, वह बेदम पड़ गयी।

लड़की रोती थी। फफक-फफक कर। और कितना करुण था यह रोदन ! नीरव अन्धकार जैसे निश्वास ले रहा हो ! आकाश में एक दिपता हुआ उज्ज्वल तारा टूट गया।

—यह ले, रुपया ले। रोती क्यों है ?

रात्रि के गहन अन्धकार में चाँदी के रुपये की चमक दीख पड़ी। लेकिन फिर भी वह रो रही थी।

ओ, एक-एक, ए दोने में कुछ खाने को लाया। यह ले। थोड़ी दूर पर चहारदीवारी के ऊपर दोना रखा हुआ था। उस ने ला कर उस दोने को उसे दे दिया।

लड़की ने उसे हाथ से छू कर अनुभव किया कि यह क्या चीज है।

वह आदमी चला गया।

लड़की ने बैठे-बैठे ही एक टुकड़ा अपने मुँह में डाला। अद्भुत स्वाद है। फिर एक टुकड़ा मुँह में डाला, फिर दूसरा टुकड़ा। इस के बाद उसी अन्धकार में दोने का सारा खाद्य उस ने समाप्त कर दिया। अपनी बगल

मे सोयी हुई बहन तक को नही जगाया। वह बहन चुपचाप सो रही थी।

उसी अन्धकार भरी रात में वह भीषण कुत्सित स्वरूप वाला दुर्भिक्ष बैठे-बैठे मनुष्य के चाम की बही पर हड्डी की कलम से जमा-ख़र्च का हिसाब लिख रहा है। स्याही नहीं है, लाल स्याही ख़त्म हो गयी है, जो कुछ है उस का रंग पानी की तरह हो गया। चमड़े के ऊपर चीर-चीर कर लिखता है वह। उस के चेहरे पर बीभत्स हँसी है, हिंस्र आनन्द से उस के भयंकर दाँत थोड़े फँसे हुए हैं, उस की कुरूप नाक बैठी हुई है। दुर्भिक्ष था वह।

उसे बहुत हिसाब करना है।

दूसरे दिन देखा गया, प्रातःकाल ही था वह, एक कंकाल मात्र जीर्ण वृद्धा को जीवित ही अवस्था मे सियार खींच ले गये थे। प्रायः उसे आधा वे खा चुके थे। सब से पहले उस की छाती के पांजर पर वे जुटे थे। बुढ़िया की आँखें मृत्यु के बाद भी फैली हुई थीं। आतंकित विस्फारित दृष्टि।

इस तरफ़ उस लड़की मे बहुत परिवर्तन हुआ है।

उस के सिर के बाल रूखे नहीं हैं, उस का पहनावा बदल गया है। कपड़े उस के ठाट-बाट से भर गये हैं। उस के चेहरे पर अब उपवास के दुःख की छाप नही है। उस के होठों के कोनों पर अब जैसे हँसी खेलती है।

लेकिन एक महीने के भीतर उस की देह अस्वस्थ हो उठी। जैसे चारों ओर से उदासी आ रही हो। सारी देह में दर्द। कुछ भी अच्छा नहीं लगता और थोड़े ही दिन बाद उस की सारी देह पर छोटे-छोटे दाग़ उभर आये।

लड़की ने शंकित दृष्टि से अपने अंगों की ओर देखा। अन्त में वह रो पड़ी।

रात्रि के अन्धकार में उस ने उस पुरुष से, जो उस का जीवन-देवता था, बिलखते हुए सब कहा।

उस ने आश्वासन दिया कि किसी डर की बात नहीं है। दवा ला देगा वह।

लड़की उसी के भरोसे बैठी हुई थी। रोज सोचती थी, आज आयेगा वह दवा ले कर और सारा रोग किसी जादू के प्रभाव से समाप्त हो जायेगा। सुबह उठ कर वह देखेगी कि उस की देह पहले की तरह सुन्दर

और चिकनी हो उठी है।

लेकिन कहाँ है वह ? वह नहीं आया। उसे खोजने पर भी नहीं पा सकी वह। और पाने पर ही वह क्या करेगी ? दिन की रोशनी में वह कैसी जगी हुई अपना दावा जताएगी ? क्या वह दावा है उस का ? इस कल्पना से ही वह सिहर उठती थी।

कई एक दिन बाद। अब उसे गाँव में नहीं देखा जाता। वह अपने गाँव भाग गयी कि वहाँ शायद कोई देशी दवा काम देगी। तीन साल बाद उसे फिर देखा गया। लेकिन उसे पहचाना नहीं जा सकता था। दुर्भिक्ष नहीं था अब, लेकिन उस की हड्डियों भरी देह, और सारी देह पर बस घाव-ही-घाव। घाव की दुर्गन्ध से आदमी की तो बात ही क्या, जानवर को भी उबकाई आ जाती।

लड़की की गोद में एक बच्चा।

दुर्भिक्ष का वरदान जैसे उस बच्चे को मिला है। दुर्भिक्ष जैसा ही कुरूप चेहरा, उस के ऊपर लँगड़ा, पशु की तरह हाथ और पैरों के बल रेंग कर चलता। उस की आँखें धँसी हुईं, लगातार उस में से पानी बहता हुआ। उस के मुँह में जैसे भाषा न हो। बस केवल एक स्वर ही, उस के मुँह से लगातार लार टपकती रहती।

पशु की तरह चिल्ला कर वह अपनी माँ के स्तनों पर दाँत से आघात करता और रक्तावत दुग्ध को पीता। उस के पेट में अकाल की भूख थी।

उस की माँ भी वेदना से कातर हो कर बच्चे को पीटती।

—अरी ओ औरत, ऐसे बच्चे को क्यों पीट रही है ?

लड़की चौंक उठी, उस का मुखड़ा प्रत्याशा से चमक उठा, उस ने धीमी आवाज में कहा—बाबू !

—ओह, हटो, हटो, हटो। क्या बदबू है !

—मुझे पहचान नहीं रहे हैं बाबू ! मैं···।

—हरामजादी, निकल जा, मैं कहता हूँ। जा···

वह भला आदमी उसे सचमुच ही नहीं पहचान पाया। रोग ने उस औरत को ऐसा ही बना दिया था।

स्त्री ने केवल एक गहरी साँस ली। उस के मन में शाप देने की उग्रता

भी नहीं है। बस एक शिथिल निराशा के कारण जैसे उस के और भी ढीले हो गये। जैसे चोट लगने पर वह कराह भी नहीं सकती।

और पन्द्रह साल बीत गये।

रोगग्रस्ता वह कुत्सित स्त्री बहुत पहले ही मर चुकी थी लेकिन बर्बर पशु की तरह वह लड़का बचा हुआ था। वह हाथ और पैरों के सहारे रेंग कर चलता। उस के मुँह से लार टपकती रहती और आँखों से पानी।

ऐसा लगता था जैसे अपनी माँ के रक्त का विष वह उगल रहा है और जो रुदन उस की माँ के गले में फँसा ही रह गया था, वही रोदन उस की आँखों के पानी में बहता है। बीच-बीच में वह हँसता भी है। हाथ-पैरों के बल चल कर वह गृहस्थों के दरवाज़ों के सामने जा कर बैठ जाता और आँऊ-आँऊ-ऊँ-ऊँ कर के चीखता रहता है।

गृहस्थ हँसते और उस पर दया भी करते, एक दिन भी उसे उपवास नहीं करना पड़ता।

लड़के उसे कहते थे लंगूर और बड़े लोग कहते थे लारू।

लारू इधर-उधर घूमता था। पशुओं के साथ खेलता था, बकरियों और भेड़ों के बच्चों को पकड़ कर उन्हें मारता-पीटता, जब वे चिल्लाते तो उन्हें मारता। जंगलों में जा कर वह लंगूरों को पकड़ने के लिए घूमता।

भूख लगने पर वह गाँव में चला आता। गाँव की लड़कियाँ कहतीं—लारू आया है?

वह कृतज्ञता प्रकाशित कर के बस हँसता।

—ला रे, कुछ जूठन-कूठन ला कर दे दे, लारू आया है।

लारू बड़े सन्तोष के साथ उसे खाता है। बीच-बीच में कुछ अच्छा लगने पर चिल्लाता आँ—आँ।

उसी चीज़ को हाथ में ले कर दिखा कर चिल्लाता और जब तक नहीं पाता तब तक चिल्लाता रहता। वह यह नहीं जानता था कि उस का कितना अधिकार है? यह भी हो सकता है कि वह पिण्ड छोड़ने वाला नहीं था। लड़कियाँ हँसतीं।

कभी-कभी वह रात को पशुओं की चरन में चला जाता और नदी में

कुछ खोजता। वह जानता था कि इन नांदों में सड़ा हुआ बासी भात मिलता है।

हठात् लारू पता नहीं कैसा हो उठा। भूख जैसे उस की कम हो गयी थी, वह अब जंगल में ही बैठा रहता है, दिन भर विमुग्ध हो कर पशुओं का खेल भी देखा करता, बीच-बीच में हाथ से ताली बजाने लगता। कभी-कभी एक विचित्र चंचलता और प्रचण्ड आवेग से वह धरती के वक्षस्थल पर लोट-पोट करता। कभी-कभी वह शीतल जल में आकण्ठ डूबा रहता। रात को जब कुछ दिखाई पड़ता तब वह गाँव में आता और भोजन खोजता, पशुओं के घर में और गृहस्थों के दरवाजों पर। उस दिन अन्धकार में वह आहार खोज रहा था। कहीं भी एक कण नहीं दिखाई पड़ा। लारू बैठा-बैठा सोचता। बीच-बीच में जैसे भूख की चिन्ता समाप्त हो उठती। वह मिट्टी में लोटने-पोटने लगता। फिर थोड़ी देर बाद भूख की ज्वाला सताती और वह इधर-उधर घूमता। बन्द दरवाजों पर आघात करता—आँ, आँ, आँ। लेकिन गम्भीर निद्रा में मग्न था गाँव, कहीं से कोई उत्तर नहीं मिलता। लारू आगे बढ़ता जाता।

एक नाबदान। लारू उस के सामने ही बैठा सोच रहा था। इस के बाद उसी नाली से वह भीतर घुसने की चेष्टा करने लगा। उस की सारी देह—कट-फट गयी। फिर भी उस की चेष्टा नहीं थमी। अन्त में वह घर में घुस ही गया। सामने ही जूठे बर्तन रखे हुए थे। लारू आनन्द से उन्हीं को चाटता रहा। और कहाँ? और कहाँ? उस घर के बरामदे में गया वह। सामने के घर में हलका प्रकाश था। लारू दरवाजे के पास जा खड़ा हुआ। दरवाजा नहीं खुलता। इस बार उस ने ज़ोर लगा कर अपने सिर से दरवाजे को ठोकर दिया। घर के भीतर की सिटकिनी टूट गयी। लारू घर के भीतर घुस गया।

हलके प्रकाश में चौदह-पन्द्रह साल की एक लड़की दिखाई पड़ी। लड़की निद्रामग्ना थी, उस के अगल-बगल दो-तीन बच्चे। निश्चिन्त निद्रा के कारण उस की सारी देह का वस्त्र शिथिल हो कर जैसे उस के नग्न सौन्दर्य को उस के कोमल हलके प्रकाश में उद्दीप्त कर रहा था।

लारू के भीतर क्षुधा का आवेग एक ही क्षण में समाप्त हो गया। उस

पड़ा एक प्रचंड, दुर्निवार्य आवेग। उस के शरीर में एक अद्भुत परिवर्तन दिखाई पड़ा।

इस के बाद?

फूल की तरह कोमल, पवित्र लड़की चीत्कार कर उठी। लेकिन लारू ने जैसे उसे पीस कर रख दिया, उस की वाणी मूक हो गयी। लारू स्तब्ध, जैसे उस के गले की आवाज़ सूख गयी हो।

अदृश्य लोक में, विधाता के खाते में हिसाब के लेन-देन का अन्त एक क्षण को भी नहीं होता। वहाँ जमा-खर्च का हिसाब चलता ही रहता है। उस दिन दोनों ही ओर एक पंक्ति खींच कर जैसे समाप्त कर दिया गया एक हिसाब। खत्म हुआ एक हिसाब।

नीचे हाथ में लगे तीन शून्य।



नहीं

आठ साल पहले जो हत्याकाण्ड हुआ था, उसी हत्याकाण्ड के निर्णय का दिन था। नृशंस हत्याकाण्ड था यह। लम्बे आठ सालों के बाद आज अदालत बैठी थी। कल मृतक कालीनाथ की पत्नी व्रजरानी की गवाही होगी।

व्रजरानी सन्ध्या के अन्धकार में अपने घर के भीतर ध्यानस्थ-सी बैठी थी। हरदास बाबू कचहरी से लौट कर सीधे उसी के घर में घुसे और बोले—अरे व्रज !

व्रज ने कोई उत्तर नहीं दिया, केवल जिज्ञासा थी उस की दृष्टि में। बस अपने भाई की ओर ताका उस ने। हरदास बाबू बोले—कल तेरी गवाही का दिन है। जरा अपना दिल सख़्त रखना। बल्कि मैं तुम्हें सुबह एक बार इजहार अच्छी तरह से समझा दूँगा।

हरदास ने और कोई बात नहीं की और वे चले गये।

अच्छी तरह से सुना दूँगा। समझा दूँगा। व्रजरानी एक गहरी साँस ले कर विचित्र तरह की हँसी हँसी। ओठों के कोनों पर क्षीण रेखाओं में वह हँसी फूट पड़ी। हँसी के साथ-ही-साथ उस की बड़ी-बड़ी आँखें जैसे मन्द होती जा रही थीं। उस के अंग-प्रत्यंग में जैसे बर्फ़ की शीतलता आ रही थी, विचित्र थी वह हँसी।

जिस तरह से मूर्तिकार छेनी और हथौड़ी के आघात पर मूर्ति गढ़ता है ठीक वैसे ही व्रजरानी के मन पर अंकित है

वह मूर्ति, भला वह क्या मिटेगी !

अभागी कालीनाथ की विधवा पत्नी ब्रजरानी ।

ओह ! कितना भयानक था वह शब्द । जैसे मृत्यु की हुंकारध्वनि थी। बार-बार । पहले हाथ टूटा था इस के बाद फिर, इसके बाद फिर, लगातार उस के पति की देह लहूलुहान हो कर उस की आँखों के सामने गिर गयी ।

ब्रजरानी उस मूर्ति के स्मरण मात्र से ही आतंक से चौंक उठी, भय-भीत हो कर घर के बाहर निकल कर वह नीचे चली आयी। अपने पति की वह लहूलुहान देह आज भी जैसे उसे डरा देती है। प्राय रोज ही रात को वह स्वप्न देखती है, चिल्ला उठती है, उस की माँ उस के पास सोयी हुई रहती है, उस के शरीर पर माँ का हाथ अभय स्पर्श की तरह रहता है। उन हाथ की हथेली के आतंक से उस की निद्रा टूट जाती है।

ब्रजरानी को भयभीत कदमों से आता देख कर माँ ने पूछा—क्या है री ? ऐसे क्यों···अपना प्रश्न बीच में ही छोड़ कर वह चुप हो गयी । उस के मन ने ही स्वय उत्तर दे दिया।

उस तरफ बरामदे में ब्रजरानी के भाई की बहू ने जैसे सुना-सुना कर कहा—मेरे बाप ने भी शायद ऐसा डर नहीं देखा होगा। आठ-दस साल हो गया लेकिन···।

माँ ने डाँट कर गम्भीर स्वर मे कहा—बहू !

लेकिन बहू ने मुँह बिराकर एक विचित्र तरह की भंगी में अपना मनोभाव प्रकाशित कर के ही पिण्ड छोड़ा। माँ ब्रजरानी को अपने पास बैठा कर उस के रूखे बालों को सुलझाने लगी। पति की मृत्यु के पश्चात् ब्रजरानी ने आज तक अपने बालो में तेल नहीं डाला है।

ब्रजरानी के बड़े भाई हरदास बाबू आ कर खड़े हो गये—माँ !

माँ ने अपना मुँह उठा कर हरदास की ओर देखा। हरदास ने कहा —अम्मा, एक बात थी।

—क्या बात है ?

—जरा उठ कर इधर आओ।

—यहीं बोल न !

नहीं

जरा सा इधर-उधर कर के हरदास ने कहा—बड़ी अच्छी बात है। व्रज को सुनना जरूरी है।

फिर जरा इधर-उधर कर के उन्होंने कहा—माँ, व्रजरानी के छोटे ममेरे ससुर और उन के समधी आये हैं मिलने के लिए।

ममेरे ससुर ? व्रजरानी के पति को जिस ने जान से मारा था उस के पिता और उसी हत्याकारी के ससुर ? व्रजरानी की माँ की दोनों आँखें जल उठी। व्रजरानी जैसे चंचल हो कर अपने सिर के आंचल को ठीक करने लगी जैसे उस के ममेरे ससुर कही पास ही हो। माँ ने कहा—क्यों ? किस के लिए ? क्या मतलब है उन का ? क्यों ये बार-बार आते हैं ?—और क्रमश. माँ के गले का स्वर बढ़ता ही जा रहा था।

हरदास ने कहा—और भला क्या कहेंगे। बस वही बात है—माफ़ी। जो कुछ हुआ है उस के ऊपर उन का वश नही। अब बस सिर्फ़ क्षमा की भीख चाहते हैं। किसी भी तरह से क्षमा चाहते हैं।

—क्षमा ? माँ की हँसी में व्यंग्य फूट पड़ा। इस के बाद उन्होंने कहा—उन को तुम ने बाहर-ही-बाहर क्यों नहीं लौटा दिया ?

—यह क्या मैं ने नही कहा माँ ! बार-बार मैं ने कहा। लेकिन मेरा हाथ पकड़ कर वे पीछे पड गये। अन्त में पैर पकड़ने पर उतर आये।

—तब जा कर उन से कह दो कि मेरी बेटी व्रजरानी ने आज सम्पे आठ सालों से अपने बालों में तेल नही लगाया है। यह केवल इसी दिन के लिए, वह भला क्षमा कैसे करेगी ?

हरदास चुप रहे, फिर इधर-उधर कर के बोले—अम्मा, एक बात और, मुझे कुछ बुरा मत समझना, मैं उन के साथ वचनबद्ध हूँ। ससुर ने कहा है—मेरी लड़की पर दया करनी होगी। जो कुछ हो गया है उसे तो भगवान् भी आज पूरा नहीं कर सकते। लेकिन मनुष्य द्वारा जो कुछ सम्भव है, जो कुछ किया जा सकता है उसे क्यों नहीं किया जाये ? व्रजरानी का भी भविष्य है, उस के लड़के को तो आदमी बनाना होगा...

माँ ने बीच मे ही टोक कर कहा—यानी रुपया देना चाहते हैं ? यही बात है न ?

धनुष की डोर से छूटे हुए बाण की तरह व्रजरानी दूसरे ही क्षण उठ-

कर खड़ी हो गयी। उस की बड़ी-बड़ी आँखों से जैसे आग की लपटें निकल पड़ीं। उस ने दृढ़ स्वर में कहा—नहीं।

इस के बाद धीरे-धीरे वह उस स्थान को छोड़ कर चली गयी।

अनन्त ममेरा भाई था; कालीनाथ उस के पिता की बहन का बेटा। कालीनाथ उम्र में कुछ बड़ा था। लेकिन यौवन काल में बीस और तीस की उम्र के बीच बिना किसी बाधा के मैत्री हो जाती है। और उन दोनों के बीच तो केवल चार साल का अन्तर था। इसी मैत्री के गठबन्धन से परस्पर स्नेहबद्ध हो कर दोनों बन्धु एक होते जा रहे थे। भिनसार होते न होते अनन्त ने आ कर पुकारा—काली भैया! बाप रे, कितना सोते हो? उस के कन्धे पर तनी हुई थी एक बन्दूक और उस की जेब में थे भरे हुए कारतूस।

कालीनाथ के उठ कर दरवाजा खोल देने के बाद ही वह चूल्हे के पास बैठ कर चूल्हा जलाने लगता। कालीनाथ तब अविवाहित था। भाई-बहन, माँ-बाप आदि कोई नहीं थे। घर के भीतर वे ही दोनों अपना मनमाना राज्य करते। कालीनाथ के हाथ-मुँह धोते-धोते अनन्त चाय तैयार कर लेता और दो प्यालियों में चाय डाल कर, पिछली रात के बासी मांस को नाश्ते के साथ खा-पी कर वे दोनों जंगल की ओर रवाना हो जाते। गाँव पार होते ही कालीनाथ अपनी जेब से चिलम और सिगरेट का मसाला तथा साथ ही कुछ दूसरी चीजें भी निकालता। अनन्त प्यासे की तरह कहता: जल्दी बाहर कर यार, इस के बगैर जम नहीं पाता, आँख का निशाना ठीक नहीं बैठ पाता।

अनन्त बहुत कम पढ़ा-लिखा था, एक प्रकार से मूर्ख कहा जा सकता है उसे। कालीनाथ शिक्षित, विश्वविद्यालय की सर्वोच्च उपाधि से युक्त लेकिन आश्चर्य की बात थी यह कि वह भी इसी नशे का आदी था। केवल आदी ही नहीं, इस विषय में अनन्त का गुरु भी वही था। उन दोनों की मैत्री का आधार-सेतु भी यह नशा ही था।

एक अस्वाभाविक उत्तेजना से उत्तेजित हो कर अनन्त रिपीटर को खोल कर एक बारगी छह कारतूस भर कर कहता बस। चलो इस बार। लेकिन मेरा हाथ छटपटा रहा है—क्या मारूँ?

—चलो एक आदमी ही मार डालो।

—अच्छा ठीक है, तुम खड़े हो जाओ। आदमी के बीच तो तुम्हीं बस नजर आते हो। अनन्त बन्धु को पकड़ लेता। कालीनाथ डर के मारे चिल्ला कर कहता—अरे! अरे, अनन्त देख यह सब मजाक ठीक नहीं है। यह तो साक्षात् यमदूत है, बस जरा-सा गोड-हाथ दबा कि यमराज का दरवाजा खुल गया।

अनन्त ही-ही करते हुए बन्धु को लौटा लेता। कालीनाथ एक कुत्ते अथवा आकाश में उड़ती हुई चिड़िया को दिखा कर कहता—उस को मार न, भला मारने वाली चीज का अभाव है। अनन्त एक क्षण में बन्धु को उठा लेता। मैदान में जाते ही अपरिचित दोनों आदमियों की ओर देख कर भयभीत कुत्ता अपनी पूँछ को और भीतर की ओर लपेटता हुआ डर के मारे कूँ-कूँ करता हुआ धीरे-धीरे भागता। लेकिन अनन्त का निशाना अचूक था। दौड़ता हुआ प्राणी किसी न किसी अंग में चोट खा कर वहीं लोट सा जाता, और एक चीत्कार सुनाई पड़ता। कभी वह जानवर मर जाता, कभी वह अधमरा सा रहता। नहीं मरने पर कालीनाथ कहता—ला, बन्दूक मुझे दे दे। जरा एक बार मैं भी अपना हाथ बैठा लूँ।

और थोड़ी दूर खड़े हो कर गोलियों के बाद गोली दाग कर वह उसे मार डालता और कहता—इसे ही कहते हैं कुत्ता मारना।

—चुप।

—क्या है?

—तुम्हारे सिर पर डैनों की छटपटाहट नहीं सुनाई दे रही है, शायद हारिल उड़े जा रहे हैं। बस यहीं चुपचाप बैठ जाओ।

इस के बाद बन्दूक की आवाज, पक्षियों की भयार्त्त ध्वनि से छोटा सा गाँव जैसे आलोड़ित हो उठता। दौड़ पड़ते बच्चों के झुण्ड, वे आ कर चिड़ियों का मरना देखने, और साथ ही साथ कारतूस की खाली टोपी बीनने।

एक साथ ही दोनों के विवाह का इन्तजाम हो रहा था। ब्रजरानी के पिता का वंश सरकारी नौकरी का खानदान था। सरकारी नौकरी करते-करते काफ़ी धन इकट्ठा कर लिया था उन्होंने। वे लोग सोच रहे थे एक

प्रतिष्ठित घर की सन्तान। वे कलकत्ते के निकटवर्ती किसी पुराने जमींदार घर के आधुनिक ढंग के लड़के खोज रहे थे—जिस के पास विद्या भी हो और जो सभ्य भी हो। विवाह कराने वाला अगुआ जो जगहों से दो वरों को खोज लाया। एक ओर से उस ने अनन्त को और दूसरी ओर से उस ने कालीनाथ को प्रस्तुत किया। अनन्त ने प्रसन्न हो कर कहा—भाई, मैं तुम्हारे लिए तुम्हारी बहू देखने जाऊँगा, और तुम मेरे लिए मेरी बहू ढूँढोगे।

कालीनाथ अनन्त की पीठ पर जोर से एक चपेटा मारता हुआ बोला—एक्सलेंट आइडिया। बहुत अच्छी बात है भाई!

ब्रजरानी को देख कर कालीनाथ मुग्ध हो गया। इस के बाद उस ने दो गुमनाम पत्र लिखे। ब्रजरानी के पिता को लिखा—बड़े आदमी का लड़का है अनन्त, इस में कोई सन्देह नहीं है, लेकिन वह नशेबाज आदमी है, और गँवार और जाहिल है। इस के अलावा हर तरह का नशा करता है वह और सब से बड़ी बात यह है कि वह चरित्रहीन है।

इस के अलावा जहाँ उस का सम्बन्ध होने जा रहा था वहाँ उस ने लिखा कि कालीनाथ एम. ए. पास है लेकिन वह एक साधारण खानदान का लड़का है, उस के पिता सरकारी नौकरी जरूर करते रहे है, लेकिन उस के पास मध्यम श्रेणी के परिवार से बढ़ कर कुछ नहीं है। और इस के अलावा यह लड़का हीन स्वभाव का है। अपने बचपन में कई बार उस ने दोस्तों की किताबें चुरायी हैं। मैं ने आप को यह सब सूचना के लिए लिखा है, आप समझ-बूझ कर सब ठीक करेंगे।

इस के बाद अगुआ के कारण जो कुछ हुआ, वह बड़ा ही विचित्र हुआ। दोनों सम्बन्ध ही अदला-बदली हो गये। अगुए के अनुसार काली-नाथ की अवस्था अच्छी थी, सूर्य के रहने पर भला चन्द्रमा को कौन देखता है, वैसे ही मामा का वश रहने पर भानजे की ओर कौन देखता है। नहीं तो सूर्य की जगह पर चन्द्रमा से ही काम चलता। अनन्त भले ही डिग्री वाला न हो लेकिन उस के पास क्या नहीं है। इस का परिणाम यह हुआ कि वर और कन्या दोनों ही परिवर्तित हो कर विवाहित हुए।

मिट्टी के नीचे अँधेरे तले में पंख वाले दीमक रहते हैं। बीच-बीच में

नहीं

रोशनी के लिए जब वे बाहर आते हैं तब वे पिचकारी की तरह जैसे किसी गड्ढे से बाहर निकल उठते हैं। इन पंख वाले दीमकों की शक्ति वैसे होती कम है लेकिन अहंकार इन का बड़ा विचित्र होता है। अनन्त के ससुर की अवस्था ठीक इन्हीं पंख वाले दीमकों-जैसी थी। जमींदार घरानों की खोल को तोड़ कर जैसे ये इन्हीं दीमकों की तरह फरफरा कर उड़ रहे थे।

सुहागरात के ही दिन बहू ने प्रश्न किया—तुम्हारे पढ़ने-लिखने का घर शायद बाहर है?

अनन्त ने शायद प्रश्न नहीं समझा। बहू के चेहरे की ओर ताक कर कहा—पढ़ने-लिखने का घर?

बहू ने लज्जित भाव से अपने को सुधारते हुए कहा—तुम्हारी लाइब्रेरी की बात मैं पूछ रही हूँ।

लाइब्रेरी? इस के बाद वह चुपचाप अपनी गरदन हिला कर बोला—देखो, वह सब लाइब्रेरी-ताइब्रेरी हमारे पास कुछ नहीं है। बस सरस्वती पूजा के दिन एक बकरा काटता हूँ और उसी दिन एक किताब की पूजा कर देता हूँ।

बहू को जैसे काठ मार गया। इस के बाद वह जो सोयी सो सोती ही रही। वहाँ से हिली-डुली नहीं। अनन्त ने देखा—कि बहू रो रही है।

—क्यों रो रही हो? क्या हुआ तुम्हें? सुन रही हो?—बहू निरुत्तर। अनन्त ने फिर पूछा—क्या हुआ तुम्हें? अरे कुछ बोलोगी नहीं? अरे रानी, जरा बोलो तो सही?

—अरे भाई, क्यों जले पर निमक छिड़कते हो, तुम्हारे पैर पड़ती हूँ।

करुणा भरे स्वर में भी उदासीनता थी। अनन्त को जैसे एक चोट लगी। फिर भी अनन्त ने पूछा—हुआ क्या, मुझे बताओ न?

—मेरे सिर में दर्द है। इस बार बहू ने अपनी नाराजगी और उदासीनता दोनों ही स्पष्ट कर दिये। अत्यन्त क्षोभ से अनन्त पलंग से नीचे उतर आया और एक सिगरेट जला कर जंगले के नीचे खड़ा हो गया। नीरव रात्रि, केवल उन के मकान से चारों तरफ नारियलों की कतारें दीख रही थी और किसी नारियल के पेड़ पर बैठा हुआ एक उल्लू कर्कश स्वर में चिल्ला रहा था। अनन्त वहाँ से उठ आया।

इस के बाद वह कालीनाथ के बारे में सोचने लगा। उस के मन मे आया, एक बार यदि काली भैया को देख आऊँ तो कैसा रहे?

कालीनाथ का भी विवाह इसी मकान में हुआ था। विवाह होने के पश्चात् वर और वहू अगले दिन अपने घर जा कर विवाह के बाद वाले आचार करेंगे। अनन्त कालीनाथ के फूल-सेज वाले कमरे के पास आते ही ठहर गया। भीतर से आवाज सुनाई पड़ी। उस ने कुतूहल से कान लगा कर सुना।

कालीनाथ कह रहा था—मैं तो तुम्हे रानी ही कहूँगा। तुम मेरे हृदय की रानी नही हो क्या?

—धत्, मुझे लाज लगती है। मेरा नाम व्रजरानी है, मुझे जो सब लोग कहते हैं, वही कहा करो।

—वो तो ठीक है, सब के सामने व्रजरानी कहूँगा। लेकिन जब तुम और मैं केवल दोनों ही रहेंगे वहाँ बुलाऊँगा—केवल रानी।

अनन्त ने कालीनाथ को नही पुकारा। अपने घर मे आ कर फिर जँगले के पास आ कर खड़ा हुआ। भाग्य की बात है। नही तो यह लड़की तो उस के कन्धे पर पड़ने की बात नही थी।

नारियल के पेडों के ऊपर उल्लू का स्वर और करकश हो उठा। अकस्मात् अनन्त का सारा क्रोध इस करकश कण्ठ वाले निशाचर पक्षी पर जा पड़ा। अपने घर के कोने से वह बन्दूक उठा लाया, स्थिर भाव से उस ने थोड़ी देर तक निशाना लगाया। हठात् एक स्वर से जैसे रात्रि की नीरवता समाप्त हो गयी, नारियल के उस पेड़ के ऊपर जैसे एक तूफान सा बह गया और कोई चीज धपाक से नीचे गिर पड़ी।

मायके आ कर वहू नाराजगी के मारे जैसे फट सी पड़ी। उस का चेहरा ही देख कर उस की माँ ने कुछ आशंका की थी। उन्होंने अकेले में अपनी लड़की को बुला कर कहा—हाँ री, तेरा चेहरा यह कैसा उतरा उतरा सा है?

एक ही क्षण मे लड़की जैसी बारूद की तरह [illegible] तुम ने एक मूर्ख गँवार के साथ मेरा हाथ पकड़ा दिया है। [illegible] का एक लड़का जो आता है वह भी नहीं [illegible]

नहीं

माँ को जैसे काठ मार गया। लडकी के रूखे गले की ओर ध्यान दे कर वह बिलकुल निस्तब्ध हो उठी। लडकी ने कहा—बस सुबह-शाम बहेलिये की तरह चिड़िया मारता फिरता है। गुण्डे की तरह कभी इस को पीटता है, कभी उस को पीटता है; और इसे ही समझता है कि बड़ा इज्जत का काम है।

अनन्त गम्भीर भाव से बरामदे में बैठा था। सहसा उस का एक साला एक अँगरेजी की किताब ला कर रख गया। उस ने कहा—जीजा जी, जरा यह समझा दीजिए।

अनन्त इस परदे के पीछे वाले खेल को नहीं जान रहा था। लेकिन एक छोटी सी साली ने आ कर एक अँगरेजी का अखबार ला कर उस के सामने फेंक दिया और खिलखिलाती हुई हँस कर बोली—जीजा जी, जरा पढ़ कर सुनाइए न।

एक क्षण के भीतर सब कुछ अनन्त की आँखों के सामने जैसे स्पष्ट हो गया। उस के सिर के भीतर की आँखें जल उठी, लेकिन कोई उपाय नहीं था। वह चुपचाप अपना सिर नीचे किये हुए बैठा रहा।

दिन में खाने-पीने के बाद जरा सा आराम करने के लिए घर दिखा कर उस की सास ने कहा—बेटा एक बात कह रही थी। तुम्हारे श्वशुर की इच्छा है कि तुम'''उस की भी इच्छा है कि अब तुम कलकत्ते रहो। मेरा बड़ा लडका वहीं कलकत्ते में रहता है। कलकत्ता मेरा मकान भी है, वहीं पर तुम रह कर थोड़ी पढ़ाई-लिखाई करो।

अनन्त की इच्छा हुई कि वह जोर से चिल्ला कर कहे—नहीं, नहीं। लेकिन वह ऐसा नहीं कर सका—चुपचाप नीची नजर करके बैठा रहा। उस की सास अनन्त की चुप्पी को स्वीकृति मान कर प्रसन्न हो कर चली गयी।

शाम को उस के श्वशुर ने उसे बुला कर कहा—मैं ने एक बात तुम्हारे पिता को लिख दी है। इतनी कम उम्र में चुपचाप बैठे रहना ठीक नहीं। तुम तो जानते ही हो कि खाली दिमाग शैतान का घर होता है। कलकत्ते में रह कर थोड़ा पढ़ो-लिखो।

अनन्त ने किसी बात का जवाब न दे कर चुपचाप धीरे से स्टेशन का

रास्ता लिया। उसका सरोसामान सब कुछ वहीं पड़ा रह गया। वह अपने घर आया और जैसे गुस्से में ही और नशा शुरू कर दिया।

एक दिन हठात् अनन्त के पिता गुस्से के मारे अपनी स्त्री से बोले—मैं अनन्त की शादी दूसरी जगह करूंगा। क्या छोटे आदमियों की लड़की है यह? लड़की का बाप हो कर साला हमें चिट्ठी लिखता है। जरा यह तो देखो। और यह भी लिखा है कि हम लोगों ने गँवार-अपढ़ लड़के की शादी कर देने के लिए कालीनाथ के विरोध में एक गुमनाम चिट्ठी लिख दिया था। तुम एक चिट्ठी लिख दो समधी महोदय को कि अगर अपनी लड़की यहाँ नहीं भिजवा देते हैं तो मैं अपने लड़के की शादी कर दूंगा।—वे चिट्ठी अपनी औरत के हाथ में दे कर क्रोध के मारे बाहर चले गये।

अनन्त वहीं पास में ही था। सब कुछ उस ने सुना था। उस के पिता जब बाहर चले गये तब वह चुपचाप माँ के कमरे में घुसा और झपट कर वह पत्र अपनी माँ के हाथ से छीन लिया। बड़ी ही कड़वी भाषा में लिखा था···और अन्त में यह भी लिखा था···सबूत के लिए गुमनाम चिट्ठी भी इस के साथ भेज रहा हूँ। मेरा दृढ़ विश्वास है कि यह पत्र आप लोगों के ही इशारे पर लिखा गया होगा।

गुमनाम पत्र पढ़ कर अनन्त जैसे चौंक उठा। यह क्या? यह तो किसी परिचित के हाथ की लिखावट लगती है। यह तो···यह तो···श्वसुर के पत्र को माँ के पैरों के पास फेंक कर उस गुमनाम चिट्ठी को ले कर वह बाहर दौड़ पड़ा। एकाएक कालीनाथ के घर में आ कर उस ने पुकारा—काली भैया!

—कौन है रे, अनू! आ-आ।

अनन्त के आते ही कालीनाथ की पत्नी ब्रजरानी ने घूँघट काढ़ लिया और वह चली गयी। अनन्त ने देखा कि घर के चारों ओर जैसे लक्ष्मी का वास है। सब कुछ जैसे हँस रहा है। हर चीज में जैसे एक छन्द है। क्या स्वच्छता है!

कालीनाथ ने कहा—और तो तू आता ही नहीं।

—आने पर तुम बताओ, खुश हो या नहीं?

हा-हा कर के हँसता हुआ कालीनाथ ने उस बात का जवाब ही नहीं

गया। अनन्त ने प्रश्न किया—तुम्हारी बहू खूब सुन्दर मिली है न ?

बिना किसी भेद-भाव के कालीनाथ ने स्पष्ट कहा—रानी के गुण का बखान भला मैं क्या करूँ ? अनु, देखना नहीं घर-द्वार को जैसे स्वर्ग बना रखा है। तू भी जा कर इस बार अपनी बहू को ला न।

अनन्त चुप हो गया। कालीनाथ ने कहा—इस वेला में कैसे आये ?

अनन्त ने गुमनाम चिट्ठी को कालीनाथ के हाथ पर रखते हुए कहा—यह पत्र तुम्हें दिखाने के लिए लाया हूँ। दिखाने क्या तुम्हें देने ही आया हूँ। यह पत्र तुम रखो, मेरे श्वसुर ने मेरे पिताजी के पास भेजा था। काली-नाथ का चेहरा एक क्षण में उतर गया। अनन्त ने और प्रतीक्षा नहीं की। बाहर चला आया। लेकिन दरवाजे से बाहर जाते ही पीछे से किसी ने पुकारा—देवर जी !

अनन्त ने पीछे ताक कर देखा—व्रजरानी एक तश्तरी में खाने की चीजें ले कर बुला रही है। अनन्त जा नहीं सका और फिर लौट आया। भाभी के हाथ का भोजन तो वह फेंक कर जा नहीं सकता। क्यों काली भइया ! भाभी जी तो स्वर्ग की देवी हैं, तब तो इन के हाथ की बनी चीजें अमृत होंगी।

कालीनाथ एक सूखी हँसी के साथ बोला—निश्चय ही।

अप्रत्याशित भाव से एक दिन अनन्त की पत्नी आ पहुँची। अनन्त के पिता ने जो चिट्ठी लिखी थी उस से बहू के बाप चुप नहीं रह सके। वे स्वयं लड़की को पहुँचा आये।

उस दिन फुटबाल की टीम के साथ अनन्त का मैच देखने जाना था। सुबह ही सुबह एकाएक बहू को बिना बुलाये हुए आता देख कर उस का मन प्रसन्नता से नाच उठा। उस ने ठीक किया, आज वह मैच देखने नहीं जायेगा। लेकिन वही उस टीम का सबसे अच्छा शाट खेल खिलाड़ी है, उस के बाद वह कैप्टन भी है। उस का मन पता नहीं कैसा-कैसा हो गया। अन्त में उस ने निश्चित किया कि गेम समाप्त होते ही वह टैक्सी से लौट आयेगा लेकिन तीन मील का रास्ता कोई हँसी-खेल नहीं है। अगर टैक्सी न मिली तो साइकिल तो है ही। और रात के अँधेरे में यह रास्ता ही नहीं।

क्रमशः

प्रसन्नता के मारे वह अपने सोने वाले कमरे में गया। उस की बहू पीछे घूम कर पता नहीं क्या कर रही थी। अनन्त ने पीछे से आ कर उसे अपनी बाँहों में भर लिया। अनन्त को देख कर वह चकित हो उठी और उस ने जोर से अपने को छुड़ाते हुए कहा—छोड़ो-छोड़ो।

अनन्त ने हँस कर कहा—आखिर इतना क्रोध क्यों?

—क्रोध नहीं है, लेकिन तुम छोड़ दो।

—वाह, यह क्रोध नहीं तो क्या है? लेकिन मैं ने तो नहीं लिखा था कि मैं शादी करूँगा। मेरे पिता ने लिखा है।

—मैं कहती हूँ छोड़ दो, कहती हूँ छोड़ दो। नहीं तो मैं चिल्लाऊँगी।

अनन्त ने अपनी पत्नी को छोड़ दिया लेकिन उस ने कहा—तुम्हारा ऐसा व्यवहार क्यों है?

बहू ने इस बात का कोई जवाब नहीं दिया, केवल क्रोधित आँखों से पति की ओर ताकती रही। अनन्त ने फिर कहा—वह देखो न काली भइया की बहू है, कितना अच्छा मीठा व्यवहार है उस का। अपने पति की कितनी भक्ति करती है···!

उस के मुँह की बात जैसे छीन कर बहू बोल उठी—किस के साथ तुम अपनी तुलना कर रहे हो, कहाँ देवता और कहाँ बन्दर! वह विद्वान् है···।

अनन्त वहाँ नहीं खड़ा रह सका। भनभनाता हुआ बाहर निकल गया। अपने अस्तबल में जा कर उस ने पुकारा—निताई!

निताई गर्दन अपने दोस्तों के साथ चोरी-चोरी देसी ठर्रा पी रहा था। अनन्त एकाएक दरवाजे को खोल कर बोला—हण्टर कहाँ है? हण्टर को ले कर लौटते-लौटते उस ने कहा—देखूं तो।

निताई कुछ समझ न सका—जी हां?

—अरे यह बोतल। और ऐसा कह कर खुद ही आगे बढ़ कर वह बोतल उस ने उठा लिया और उसे पी गया। बिना पानी की शराब उस की छाती के भीतर आग की तरह लपट जैसी जल उठी। उस के मस्तक में अग्नि-शिखाएँ लपलपा उठीं। इस के बाद वह भीतर जा कर अपनी पत्नी के सामने जा खड़ा हुआ और कहा—क्या कह रही थी, अब जरा बताओ।

उस भयंकर रूप को देख कर उस की बहू को काठ मार गया। दूसरे

ही क्षण शराब की बदबू से जैसे वह अपना ज्ञान खो बैठी। बहू ने कहा—तुम शराब पीते हो ? तुम पियक्कड़ हो ?

—*हाँ, पीता हूँ, शराब पीता हूँ, गाँजा पीता हूँ, धतूरा खाता हूँ।* तुम्हारे बाप के पैसे से खाता हूँ।

अपने को भूल कर बहू ने क्रोध से कहा—पियक्कड़, गँवार, उजड्ड कहीं के, निकल जाओ···।

लेकिन उस की बात बीच में ही रह गयी। हण्टर के आघात से वह चीख पड़ी। हण्टर की रस्सी का दाग़ उस के कन्धे से होता हुआ पूरी बाँह पर एक गहरा दाग़ डाल गया। अनन्त हाथ में ही हण्टर लिये हुए बाहर चला आया।

फुटबॉल टीम से लौटते हुए रास्ते में उसे भूख लगी, वह उधर से ही कालीनाथ के घर चला आया। उस ने पुकारा—काली भइया।

कालीनाथ भी बाहर निकल रहा था, उस ने कहा—अरे तू, मैं तो तेरे ही पास जा रहा था।

अनन्त ने कहा—वो सब मैं बाद में सुनूंगा, भाभी कहाँ है, भाभी ?

—तुम्हारी भाभी के ही हुक्म से तुम्हारे यहाँ जा रहा था। उन का आज व्रत है और तुम्हें आज ब्राह्मण के रूप में न्योता दिया है।

—ठीक है वह तो होगा। लेकिन अभी तो कुछ खाने को दो भाभी !

व्रजरानी थोड़ी ही दूर पर खड़ी थी, उस ने कहा—यह क्या ? आज तो तुम्हारी बहू आयी है···।

—ओह, भाभी, ये सब बातें रहने दीजिए। अब ये बताओ कि तुम कुछ खाने को दोगी या नहीं, अगर तुम कहो कि नहीं तो फिर दूसरी जगह जाऊँ। मुझे समय नहीं है। तुम्हारे पिता के शहर में मैच खेलने जा रहा हूँ।

व्रजरानी घबड़ा कर एक बड़े थाल में खाने-पीने का सामान ले कर आयी। कालीनाथ ने प्रश्न किया—लेकिन तुम लौटोगे कब ? परसों तो तेरी भाभी का व्रत है।

भूख शान्त होने पर प्रसन्न भाव से ही अनन्त ने कहा—बस सुबह लौट आऊँगा। परसों के लिए क्यों सोचते हो ? पर व्रत है क्या ?

लज्जित हो कर व्रजरानी ने अपना सिर नीचा कर लिया। कालीनाथ ने उत्तर दिया—सुहागिन रहने का व्रत यानी मेरे आगे ही मरने का पासपोर्ट लेने की व्यवस्था कर रही हैं तुम्हारी भाभी।

—वाह! औरतों की यह बात मुझे बहुत अच्छी लगती है। काली भइया!

इस के बाद व्रजरानी के मुँह की ओर देख कर उस ने कहा—भाभी; स्वर्ग की देवी हो तुम।

लज्जिता व्रजरानी ने बात को दूसरी ओर घुमा कर कहा—लेकिन मेरे पिता के ही घर जा कर तुम रहना, देवर जी! नहीं तो मैं झगड़ा करूँगी। मेरा भी कुछ लाभ होगा, कुछ समाचार मिलेगा। बहुत दिन हुआ, कोई खोज-खबर नहीं लगी।

मैच जीतने के बाद भी अनन्त का मन उदास था। प्रभात की यह तिक्त स्मृति उस के मन को मथ रही थी। वह व्रजरानी के पिता के घर बाहर चुपचाप निर्जीव की भाँति सो रहा था। व्रजरानी के अनुरोध के कारण ही उस ने यह आतिथ्य स्वीकार किया है। उस के दल में लोगों को बहुत आपत्ति थी। उन लोगों ने कहा था—नहीं, नहीं भाई, यह भला कहीं हो सकता है! हम लोगों ने मैच जीता है रात भर जाग कर गप-शप करने, हो-हल्ला करने। तुम कैप्टन हो, भला तुम्हारे न रहने से कहीं चलेगा! हाथ जोड़ कर विनय के साथ अनन्त ने कहा—यह नहीं हो सकता भाई! मैं ने भाभी को वचन दिया है।

—अच्छा तो ठीक है, तब जरा पी कर जाओ। उन लोगों ने बोतल और गिलास बाहर निकाला पर जीभ काटते हुए अनन्त ने कहा—छि छि, भला ये कैसे हो सकता है? परिवार वाले हैं, अपने सम्बन्धी हैं….।

बार-बार अनन्त की आँखों में पानी आ रहा था। उस का मन उदास हो गया था। व्रजरानी की माँ ने आते ही पूछा था—मेरी व्रज तो ठीक है बेटा?

जल्दी से उठ कर अनन्त ने उन का पैर छूते हुए कहा—हाँ माता जी, भाभी अच्छी हैं।

—मेरी व्रज ने कहीं नाम कमाया है कि नहीं? तुम लोगों की खोज-

खबर लेती तो है ?

अनन्त ने भीतर से प्रसन्न होते हुए कहा—इस युग में ऐसी लड़कियाँ नहीं होतीं। माता जी ! सती सावित्री के बारे में पढ़ा था लेकिन भाभी के भीतर उन दोनों को जैसे अपनी आँखों से देख लिया।

व्रजरानी की माँ ने परम तृप्ति के साथ कहा—खुश रहो बेटा, भगवान तुम्हें लम्बी उम्र दे। दरअसल तुम लोग भी अच्छे हो, इसीलिए मेरी व्रज भी तुम लोगों के बीच और अच्छी होती जा रही है।

इस के थोड़ी देर बाद एक कटोरे में दूध ले कर उन्होंने प्रवेश किया और बोली—बेटा !

अनन्त मन ही मन अपने ससुराल की तुलना इस के साथ कर रहा था। उस ने कोई जवाब नहीं दिया। उसे अच्छा नहीं लग रहा था। व्रजरानी की माँ ने उस की चुप्पी देख कर कहा—शायद खेल-कूद कर आया है, चुपचाप सो रहा है।

वे फिर बाहर चली गयीं। घर के भीतर हरदास ने प्रश्न किया—सो गया है शायद ?

—हाँ, थक कर सो गया है, इसीलिए नहीं बुलाया।

—ओह, खूब खेलता है छोकरा। बहुत अच्छा खेलता है। कितना सुन्दर स्वास्थ्य है ! बहुत अच्छा लड़का है।

माँ ने भी बड़ी तारीफ़ की और बताया कि व्रजरानी की प्रशंसा करता है। इस का मतलब यह हुआ कि अच्छे खानदान का लड़का है। वह पत्र शायद किसी ने जलन के मारे लिखा था। पियक्कड़, नशाखोर, चरित्रहीन, गँवार आदि। देखने पर तो ऐसा नहीं लगता। तू हँस रहा है रे ?

—हाँ, हँस रहा हूँ।

—क्यों हँस रहा है, बता ?

—वह चिट्ठी कालीनाथ ने हाथ की लिखी हुई थी। कालीनाथ की इस समय की लिखी हुई चिट्ठियों के साथ मिला कर देखा है। व्रज को देखने वह आया था। उस को बहुत पसन्द आयी थी, इसलिए उस ने ऐसा किया था।

—तो मेरे व्रज की अच्छी तपस्या थी वह। कालीनाथ के रूप में, गुण में सकड़ों दामाद के भीतर एक दामाद है। व्रजरानी को कितना प्यार करता है वो!

अनन्त का मस्तक भीतर से झनझना उठा। रात के अन्तिम पहर में उस ने निश्चय किया वह जरूर पढ़ेगा-लिखेगा। वह जीवन में प्रसन्नता चाहता है, शान्ति चाहता है। अपने अन्तःकरण से उस ने कालीनाथ को क्षमा कर दिया। व्रजरानी को बार-बार उस ने मन ही मन आशीर्वाद दिया—तुम चिर सुखी होओ, आयुष्मती होओ!

लेकिन घर आते ही सब कुछ जैसे गड़बड़ हो गया। उस के पिता ने क्रोध में कहा—मैं तेरा मुँह नहीं देखना चाहता। तू मेरे वंश के लिए कलंक है, तेरे ही लिए इतने बड़े वंश की मर्यादा गयी, तू मर क्यों नहीं गया?

कल ही अनन्त की बहू जिस आदमी के साथ आयी थी, उसी आदमी के साथ अपने माइके वापस चली गयी थी। गिड़गिड़ाने के बावजूद भी अन्त में बहू ने पुलिस की सहायता लेने की जब बात की तब ये लोग चुपचाप उस का रास्ता छोड़ने को तैयार हो गये। बहू ने जो कुछ कड़ी बातें कही थीं, उस के तीखे पन से अभी भी अनन्त की माँ के आँसू सूख नहीं पाये थे। अनन्त का सब कुछ जैसे गड़बड़ा जा रहा था। फिर भी उस ने दृढ़ता के साथ कहा—मैं जा रहा हूँ।

—कहाँ?

—अपनी ससुराल।

उस की माँ चिल्ला उठी—नहीं, नहीं।

—डरने की बात नहीं है माँ, मैं अपने श्वसुर का पैर पकड़ कर गिड़गिड़ाऊँगा

वह बाहर चला गया अपने उन्हीं कपड़ों में बिना खाये-पिये। माँ उस के पीछे आकर भी असगुन के मारे नहीं चिल्ला सकी, पीछे से पुकारने पर अपशकुन माना जाता है न?

अपनी ससुराल जा कर उस ने सचमुच ही अपने श्वसुर के दोनों पैरों को पकड़ लिया। लेकिन उस के श्वसुर एक ही क्षण बाद अपने दोनों पैरों

मही

को खीच कर वहाँ से चले गये। अनन्त वहाँ चुपचाप खड़ा रहा। अकस्मात् दर्द के मारे जैसे वह चौंक उठा—उस ने देखा कि हाथ में हण्टर उठाये हुए उस के श्वसुर लाल आँखों से उस की ओर ताक रहे हैं। अनन्त इस बार वहाँ स्थिर खड़ा रहा, हण्टर की रस्सी बार-बार उस की देह पर सपाक-सपाक पड़ने लगी। उस के मारे वस्त्र चिथड़े हो गये, और खून में सन गये।

—निकल जाओ, अभी निकल जाओ मेरे घर से।

अनन्त चुपचाप खड़ा रहा। अपने हाथ का हण्टर फेंक कर उस के श्वसुर ने आवाज दी—दरबान, निकाल दो इस को। वे वहाँ से चले गये।

दरबान के आते ही अनन्त चुपचाप जल्दी से कदम बढ़ाता हुआ वहाँ से चल दिया।

उस के मस्तक में आग की लपटें जल उठीं, उस का सारा संकल्प टूट गया। उस ने स्थिर किया कि घर से जा कर वह रिवाल्वर लाये और इस घमण्डी आदमी को मार डाले और फिर अपनी आत्महत्या कर डाले। अपने घर के स्टेशन के पास उतर कर उस ने देखा कि उस के आदमी पालकी ले कर प्रतीक्षा कर रहे हैं। लोगों ने समझा था कि बहू को ले कर ही वह लौटेगा। घर का मुन्शी आगे बढ़ कर बोला—बहू···।

—नहीं आयी!

—यह क्या छोटे बाबू! आप की सारी देह!—मुन्शी काँप उठा।

अनन्त जल्दी से स्टेशन छोड़ कर मैदान की तरफ़ चल पड़ा।

एक भीतरी रास्ते से ऊपर जा कर उस ने अपना रिवाल्वर खोजा। थोड़ी देर के ही भीतर उस के मन में यह ख्याल आया कि श्वसुर को मारने से क्या होगा? अपनी बेटी के विधवा होने का कष्ट फिर कौन भोगेगा। बार-बार उस के मन ने कहा—यही ठीक है। उस ने अपना रिवॉल्वर उठा लिया। उस ने देखा—कई कारतूस उस में भरे हुए थे।

—घर में, इसी घर में? नहीं, अगर किसी तरह से यहाँ मैं सफल नहीं हो सका तो फिर कोई उपाय नहीं रह जायेगा, किसी एकान्त जगह में। आत्महत्या का संकल्प ले कर वह अपनी बन्दूक हाथ में लिये हुए घुड़सवार

बाहर चल पड़ा। पागलों की तरह चला जा रहा था वह। उसे यह ख्याल नहीं रहा कि वह किधर जा रहा है।

—अनु ! अनु !!

कालीनाथ के घर के जँगले के पास अनन्त की प्रतीक्षा में व्रतचारिणी व्रजरानी खड़ी थी। कालीनाथ ने कम पानी पिया था, पानी पी कर ही वह अनन्त को बुलाने जाने वाला था। उस तरफ व्रत की सामग्री रखी हुई थी। व्रजरानी ने देखा कि अनन्त हाथ में बन्दूक लिये जा रहा है।—अरे देखती हो, अनु देवर जी रास्ते पर चले जा रहे हैं।

कालीनाथ ने पुकारा—अनु ! अनु !! अनु !!!

—कौन ? कालीनाथ ? अनन्त के मस्तक में जैसे आग की लपटों पर किसी ने घी डाल दिया हो। लपटें जैसे और भी बढ़ गयीं कालीनाथ ! उस के जीवन का दुष्ट ग्रह—उस के ही सुख को छीन कर परम सुखी कालीनाथ ! कालीनाथ !! फिर कालीनाथ !!! उस के जीवन का साथी कालीनाथ ! वह भला अकेला कहाँ जायेगा ?

अनन्त लौट पड़ा और खुले दरवाज़े के भीतर आ कर बोला—अरे !

हो-हो कर के हँसते हुए कालीनाथ ने कहा—आते ही हाथ में बन्दूक ?

—कुत्ते का मारना तुम्हें याद पड़ता है न ? वैसे ही मैं तुम्हें मारूँगा। साथ ही साथ उस ने बन्दूक सीधी कर ली। व्रजरानी ने एक चीख भरी। कालीनाथ ने डर के मारे बन्दूक की नली पकड़ कर दूसरी ओर मोड़ने की चेष्टा की और वह चिल्ला उठा—अनु, मुझे माफ़ करो, क्षमा ···लेकिन भीषण गर्जन के साथ मृत्यु हुंकार दे उठी। कालीनाथ ने जिस हाथ से बन्दूक की नली को पकड़ा था वह हाथ टूट गया। व्रजरानी ने कालीनाथ को ज़ोर से खींच कर पुकारा—देवर !

फिर बन्दूक गरज उठी। कालीनाथ नीचे गिर गया था, लेकिन तब भी वह जीवित था, फिर एक गोली। कालीनाथ का शरीर बिलकुल अचल हो गया।

अनन्त जल्दी से गाँव को पार करता हुआ एक मैदान में आ कर खड़ा हुआ। इस के बाद एक स्थान पर खड़ा हो कर उस ने बन्दूक की नली अपने

नहीं

मुँह में डाल कर अपने पैर से घोड़े को खींच दिया। बस केवल खट-सी आवाज हुई, यह क्या ! बन्दूक को हाथ में ले कर उस ने देखा, उस में कारतूस नहीं थे। तीन ही कारतूस थे बस, वे तो सब खत्म हो गये। खैर, रस्सी तो है। अपने कपड़े को फाड़ कर वह रस्सी बना लेगा। दूसरे ही क्षण वह डर के मारे बन्दूक फेंक कर वहाँ से भागा। जैसे मृत्यु की भयंकर मूर्ति···कालीनाथ की लहूलुहान विकृत मूर्ति फाँसी की डोरी हाथ में लिये हुए उस की ओर चली आ रही थी। वह प्राण हथेली पर ले कर भागा।

दस दिन बाद वह बंगाल के बाहर एक पहाड़ी प्रदेश में पकड़ लिया गया। उस समय वह जैसे पागल-सा हो गया था। आठ साल बाद यह पगला जेल में रहने के बाद जैसे कुछ ठीक हुआ हो, आज अदालत में उसी का फ़ैसला था। कल ब्रजरानी की गवाही है।

आज आठ साल ब्रजरानी ने लगातार अशौच पालन किया है। बिना तेल लगाये नहाना, अपने ही हाथ से पकाया हुआ भोजन और मिट्टी पर सोना···यह सब इसी दिन की प्रतीक्षा के लिए तो किया है ब्रजरानी ने।

माँ ने हरदास से कहा—मैं ने सब समझ लिया बेटा, तीन पहर रात तो बीत गयी। एक-एक कर के अनन्त की माँ और उस की बहू सभी तो आयी लेकिन बोलो तो क्या उपाय है, वह तो कोई बात नहीं सुनती, जा कर तू ही देख आ। चुपचाप आँखें बन्द कर के पड़ी हुई है, दीवार के सहारे बीच-बीच में उस की आँखों से आँसू गिर रहे हैं। वह तो आँखें खोल कर ताकती भी नहीं। नहीं तो जो होना था वह तो होना ही, उस के लड़के का एक भविष्य तो है !

कालीनाथ की मृत्यु के समय ब्रजरानी गर्भवती थी। एक पुत्र इसी के बीच उसे मिला था। हरदास बाबू स्वयं आ कर बोले—ब्रज !

आँखें बिना खोले ही उस ने कहा—नहीं !

—अरे बात तो सुनो !

—नहीं,

माँ ने आ कर कहा—इस बार थोड़ा सो ले तू, ब्रज !

चौंक कर ब्रज ने कहा—नहीं !

सोते ही वही भयंकर मूर्ति ब्रज के सामने आ जाती होगी।

माँ ने कहा—मैं तेरे शरीर पर अपना हाथ रखे रहूँगी।
—नहीं।

अदालत में ठसाठस भीड़ है। ब्रजरानी की गवाही सुनने के लिए जैसे आज भीड़ उमड़ रही है। ब्रजरानी गम्भीर चाल से गवाही के लिए कठघरे में आ कर खड़ी हुई।

उस के सामने वाले कठघरे में एक आदमी खड़ा था···सफेद बाल, जीर्ण-शीर्ण झुर्रीदार देह, आँखें जैसे करुणा से विह्वल, हाथ जोड़ कर बस खड़ा है। उस विह्वल दृष्टि को देख कर जैसे ब्रजरानी स्वयं से ही प्रश्न करने लगी। उत्तर जैसे अति परिचित है और अत्यन्त निकट है पर वह उसे खोज नहीं पा रही थी। ब्रजरानी आश्चर्यचकित थी। सामने वाले उस व्यक्ति में तो वह बलवान्, घमण्डी युवक को नहीं देख पा रही थी? कहाँ है वह? यह क्या वही आदमी है? नहीं, नहीं, यह वह नहीं है, हो नहीं सकता वह। जैसे उस के मन में एक प्रबल आवेग उमड़ आया और उस ने ब्रजरानी को अपने में लपेट लिया। वह थर-थर काँपने लगी। उस की दोनों आँखें भर उठीं। अकस्मात् उस जीर्ण-शीर्ण हतभागे मनुष्य को ब्रजरानी ने अपनी स्मृति में देखा—परम मुग्ध दृष्टि से गम्भीर श्रद्धा सहित वह उस की ओर देख रहा था और बार-बार जैसे अपनी गरदन हिला कर वह कह रहा है—देवी, देवी, तुम स्वर्ग की देवी हो। तुम मेरी भाभी हो।

ब्रजरानी की आँखों से आँसू टपकने लगे। करुणा और ममता से वह सचमुच देवी हो उठी हो।

सरकारी वकील ने ब्रजरानी को सान्त्वना देते हुए कहा—अब रो कर क्या करोगी बेटी! अब विचार की प्रार्थना करो, जिस से उचित न्याय हो, उस के लिए तुम अपनी गवाही दो।

जैसे सारी पृथ्वी की दीनता, पुंजीभूत हीनता, यह जीर्ण-शीर्ण, क्षुब्ध, हतभाग्य यह व्यक्ति, इसी व्यक्ति को गले में फाँसी दे कर लटका देना क्या न्याय है? यह किस के विरुद्ध न्याय है? ब्रजरानी का मस्तक जैसे शून्य हो उठा। सरकारी वकील ने जिरह शुरू की। उस तरफ भीड़ में कुछ आवाजें सुनाई पड़ीं।

—इसे फाँसी नहीं, बन्दूक की गोली से मारना चाहिए।

व्रजरानी की आँखों में आँसू आ गये। उस ने चारों ओर देखा, सारे आदमी क्रूर भाव से क्रोधित दृष्टि से उस हतभागे की ओर ताक रहे हैं। गम्भीर स्वर में न्यायाधीश ने अँगरेज़ी में कुछ कहा, अर्थ नहीं समझने पर भी व्रजरानी ने जैसे उस शब्द की कठिनता अनुभव की।

अदालत के अर्दली ने बार-बार चिल्लाना शुरू किया—चुपचाप रहिए, आहिस्ते !

—इस आदमी की ओर देखिए। इस के चेहरे में परिवर्तन ज़रूर हुआ है। क्या इसी अनन्त ने आप के पति को बन्दूक से मारा था ?—सरकारी वकील ने प्रश्न किया।

व्रजरानी की अन्तरात्मा ने जैसे प्रतिवाद किया और उसी प्रतिवाद की प्रतिध्वनि जनता ने चौंक कर सुनी—नहीं।

इस के बाद बस संक्षिप्त कुछ और जिरह।

व्रजरानी जैसे स्वप्नाहत अवस्था में ही घर लौटी, उस के हृदय में एक प्रगाढ़ शान्ति थी, उस का शरीर, उस का मन, उस का प्राण जैसे सब कुछ हलका हो गया था। उस के साथ थे हरिदास बाबू, उन्होंने कहा—तेरे साथ मामा श्वसुर एक बार मिलना चाहते हैं। एक बार उन से मिल ले व्रज ! वे जो कुछ देना चाह रहे थे, उसे ले ले। भविष्य में काम देगा···।

व्रजरानी ने कहा—नहीं।

उस के घर के भीतर इस बात को ले कर जैसे चारों ओर शोरगुल था। व्रज की माँ तक अपनी बेटी की इस मूर्खता की आलोचना कर रही थी। उन्होंने कहा कि तुम्हीं एक बार जाओ न हरदास ! उस का नाम उस ने कर के। वह गयी कहाँ ?

सन्ध्या के अन्धकार में व्रजरानी लेटी हुई, जैसे वह थकी गयी थी। माँ उसे देख कर नाराज़-सी हो गयीं और बोलीं—अभी स्वप्न में चिल्ला उठेगी। अरे व्रज ! अरे ओ व्रज !! आ-आ, चली आ नीचे सोयेगी, यहाँ अकेले तू नहीं सो सकेगी। डर जायेगी तू।

व्रज ने अपनी निद्रालस आँखों को खोल कर कहा—नहीं।

इस के बाद वह गम्भीर निद्रा में डूब गयी।

पुत्रेष्टि

रामचन्द्रपुर के उत्तरपाड़ा के बन्द्योपाध्याय वंश के मँझले मालिक दालान में बैठे हुए कुछ सोच रहे थे। हठात् उन्हें जैसे कुछ याद हो उठा—चट से एक गुच्छा मूँछें खींच कर उखाड़ ली उन्होंने। बोले—बेटा, तुम दूध की मलाई खाओगे! और फिर एक गुच्छा, फिर दूसरा गुच्छा! लेकिन इस बार उन्हें शान्त होना पड़ा। मूँछों के दोनों ओर हाथों से सहलाते-सहलाते बोले—ओह! इस के बाद कुछ सोच-समझ कर जैसे उन्होंने स्वयं ही प्रश्न किया—सिर तो गंजा हो जाता है पर मूँछें क्यों नहीं गंजी होतीं? इसी समय दरवाजे पर खटखटाहट हुई। दुबला-पतला एक लम्बा बूढ़ा आदमी दरवाजे के सामने ही अपनी चप्पलें उतार कर, एक बहुत बड़ा हुक्का हाथ में लिये घर में घुसा। उस आदमी की आँखों पर एक विशेष प्रकार का मोटे शीशे वाला चश्मा था। चश्मे की दोनों डंडियाँ नहीं थीं, उन की जगह पर सूत लगा हुआ था, जिसे कानों के पीछे बाँधा गया था। घर में घुसते ही बूढ़े ने अपनी क्षीण दृष्टि से अच्छी तरह घर को देखा फिर गरदन हिलायी उस ने। अच्छी तरह से मँझले मालिक को पहचान कर झुकते हुए प्रणाम कर उस ने कहा—बाबमशाई! मैं तमाखू पीऊँ! साथ-ही-साथ आदर के साथ उन के सामने हुक्का बढ़ा दिया। हुक्के से दो-तीन कश खींच कर मँझले मालिक ने कहा—अच्छा, जरा बता तो क्या किया जावे, क्यों रे राम?

राय ने उत्तर दिया—जी, बाजार का खर्च दें।

राय इस घर में बहुत दिनों का पुराना नौकर है। पैरों में फटी हुई एक जोड़ा चट्टियाँ, आँखों पर चश्मा पहने हुए राय को यहाँ बच्चे-बूढ़े-स्त्री सभी जानते हैं। मँझले मालिक ने कहा—हूँ, तो देख-भाल कर बाजार से चीज लेते आओ।

इधर-उधर देख कर राय ने अपने अभ्यास की भाँति धीरे-धीरे कहा—पेड़ पर तो रुपये फलते नहीं कि हिला लाऊँ और मैदान में भी नहीं पड़ा हुआ है कि चुन लाऊँ—दुकान पर तो दाम लगेगा न!

ऊपर के होंठ फुला कर नीचे की ओर अपनी मूँछों को ताकते हुए मँझले मालिक अपने में ही डूबे रहे। राय ने फिर कहा—जी, खर्चा दें।

मँझले मालिक ने हुक्का रख दिया जोर से, क्रोधपूर्वक बोले—खर्च? कैसा खर्च?

राय दबा नहीं, उस ने उसी तरह तपाक से कहा—जी, बाजार का खर्च।

नाराज चेहरे से मालिक बोले—कितना?

राय ने भी जवाब दिया—वह तो आदिकाल से हिसाब किया ही हुआ है। आठ आना! पहले था नौ आना—आठ आना कर दिया आप ने। वही लायें।

मँझले मालिक ने अपनी टेंट से छह आने पैसे राय के हाथ पर रखते हुए कहा—हाँ, यह लो।

उन छह आने पैसे को चश्मे के पास ले जा कर राय ने देखा-परखा फिर कहा—यह भला कैसे होगा? हिसाब के पैसे तो कम करने से नहीं चलेगा। इन छह आने से भला कैसे चलेगा?

मँझले मालिक ने कहा—उतने ही से हो जायेगा, जरा समझ-बूझ कर खर्च करना।

चौकी पर उन छह आने पैसों को रखते हुए राय ने कहा—सब मुझ से नहीं हो सकेगा यह। जो इसे कर सके, उसे ही भेज दें, मैं तो बहूरानी से कह दूँ, बस मेरा काम खत्म।

इस के साथ ही वह घूम पड़ा। मँझले मालिक ने शीघ्रता से कहा—मैं कहता हूँ, सुनो, जरा सुनो। यह लो···ऐसा कह कर धोती के फेंटे के खूँट से इकन्नी बाहर निकाल ली। राय से उन्होंने कहा—बच्चे-कच्चे कुछ भी नहीं हैं, इतना खर्च क्यों आखिर? यह लो सात आने पैसे लो—इसी में सब कुछ निपटा लो। मुझे मत परेशान करो अब।

राय ने तब भी पैसा नहीं लिया। उस ने कहना शुरू किया—मेरी तो मौत नहीं है। मँझले मालिक! मैं भला क्या करूँ? आप इधर खर्चा नहीं देंगे, उधर चीजें अगर कम हो जायें तो बहूरानी मुझी पर फट पड़ेंगी। कौन-सी चीज मैं कम खरीदूँ। आप ही बताइए न?

मँझले मालिक बोले—तुम बहुत बकबक करते हो राय जी! यह लो। इस बार उन्होंने अपनी धोती के दूसरे खूँट से चार पैसे बाहर निकाले, उस में से तीन पैसे राय की हथेली पर रख कर बोले—और नहीं है मेरे पास, और मैं नहीं दे सकता। ऐसा कह कर राय की ओर पीठ कर के वे बैठ गये।

राय ने इस बार झंझट नहीं की। पौने आठ आना ले कर ही फिर एक बार प्रणाम करता हुआ बाहर चला गया। राय के बाहर जाने की आवाज उस के चप्पलों की ढील धीमी-धीमी ध्वनि से पता लग रही थी। मँझले मालिक ने अपनी हथेली का एक पैसा और दुअन्नी ले मुट्ठी में बन्द कर लिया। और बोले कि, यह पैसा मैं किसी को नहीं दूँगा। इस के बाद वे घर के भीतर चले गये और तीन पैसे उस टुकड़े को सन्दूक में डाल आये, यही उन का स्वभाव है। आज बारह साल से ये मधुसूदन की मगर केवल पैसा बचाने के फेर में हैं। रोजाना के खर्च में से अगर कहीं एक पैसा बच जाता है तो वे बचाते और इन बचाये हुए को वे खर्च नहीं करते। इसी तिल-तिल कर संचित राशि का एक पर्वत जैसे जम गया है, अगर पर्वत नहीं तो उसे स्तूप तो कहा ही जा सकता है। लोग कहते हैं कि घनश्री खानदान के उस छोटा वाले मालिक की यह कमाई है। बीच-बीच में ये बातें मँझले मालिक के कानों में आती हैं, लेकिन वे चुप रहते हैं।

दालान के बाद ही बँगले में खम्भे वाली एक इमारत है। उसके दूसरी तरफ ठाकुर का घर और नाट्य-मन्दिर है। और उसी के बाद उस

ज़माने की पक्की इमारत है। मँझले मालिक नाट्य-मन्दिर को पार करके भीतर गये। इस समय घर तीन हिस्सों में बँट गया है। उत्तर की तरफ़ वाला अंश बीच से बाँट दिया गया है। उन के दो तल्ले वाले सोने के कमरे की खाट के सिरहाने पर एक सन्दूक है, जिसमें सिन्दूर से स्वस्तिक चिह्न अंकित किया हुआ है। सन्दूक खोल कर मँझले मालिक ने टाट के बने हुए एक बहुत बड़े थोने में वह पैसे डाल लिये। उसी सन्दूक में काठ के दो छोटे-छोटे बक्स हैं। एक बक्स में इमारत की आमदनी का रुपया रहता है और दूसरी तरफ़ सूद के रुपयों के कार-बार का सोना-चाँदी और गहने आदि। बन्धक का भी व्यापार होता है इस वंश में। सम्पत्ति की ओर ताक कर उन के होठों पर हँसी फूट पड़ी। एक बार उस टाट के थैले को खोल कर उन्होंने अनुमान लगाना चाहा। थैला काफ़ी भारी हो गया था। हो सकता है कि बीस सेर या पचीस सेर रहा हो। लेकिन बीच में ही मँझली मालकिन ने आवाज़ दी—यह क्या हो रहा है?

उन की गोद में एक दूसरा दुबला-पतला शिशु था।

थैले को रख कर जल्दी से सन्दूक का ताला बन्द कर के मँझले मालिक हड़बड़ा से उठे। मँझली मालकिन ने हँस कर कहा—कोई डर की बात नहीं, मैं रुपये-पैसे लेने नहीं आयी हूँ। तुम धीरे-धीरे मज़े से सन्दूक बन्द करो।

मँझले मालिक ने जैसे बीच में ही काट कर कहा—तो, तुम लेती क्यों नहीं, तुम तो कुछ माँगती ही नहीं।

—नहीं, मुझे रुपया नहीं चाहिए। अगर तुम मुझे आज्ञा दो तो मैं इस बच्चे को गोद में लूँ। बड़ा ही सुन्दर लड़का है, देखो न एक बार।

मँझले मालिक स्थिर दृष्टि से मँझली मालकिन की ओर ताकते रहे, बच्चे की ओर उन्होंने नहीं ताका और कोई उत्तर भी नहीं दिया।

मँझली मालकिन ने कहा—मैं जानती हूँ कि बच्चे के लिए तुम्हारे मन में दुख है, मुझ से छिपाने से क्या होगा? मेरी तो आँखें हैं, तुम कैसे से कैसे हो गये! मैं ने कितनी बार तुम से कहा कि तुम दूसरी शादी कर लो, लेकिन तुम ने वह भी नहीं किया। मँझले मालिक का मन जैसे चंचल हो उठा। उन के शरीर की गति देख कर उन की चंचलता का अनुमान

किया जा सकता था। वे कुछ कहने जा रहे थे लेकिन उन की पत्नी ने कहा—चुपचाप ज़रा बैठो तो, मेरे पास भी क्या तुम पागलों की ही तरह तमाशा करोगे?

अपनी सारी देह दोनों हाथों से खुजलाते-खुजलाते मँझले मालिक बोले—कितनी गरमी है, बाप रे बाप!

बिछौने के ऊपर से पखा ले कर मँझली मालकिन ने कहा—बैठो, मैं तुम्हें पखा करती हूँ।

दो बार सूखे गले से खाँसते हुए मँझले मालिक ने कहा—पता नहीं प्रभु क्या कर रहे हैं? मेरा मतलब है कि उन को कुछ खाने-पीने को मिला ही नहीं। अच्छा जाने दो मुझे, रास्ता छोड़ो।

दरवाज़े के सामने खड़ी हो कर मँझली मालकिन ने कहा—मेरी बात समाप्त कर लो, तब जाने दूँगी। सुना, इस लड़के को मैं गोद लूँगी। यह चट्टोपाध्याय का भानजा है, न इस के माँ है न बाप है। कोई नहीं है। मामी भी इस को देख कर पिण्ड छुड़ाना चाहती है—कुछ पैसे ले कर ही दे देंगी।

भीतर के संघर्ष से जैसे चंचल हो कर मँझले मालिक बोल उठे—नहीं, नहीं, नहीं, यह नहीं हो सकता, यह नहीं हो सकता। मैं ऐसे कलमों पेड़ नहीं चाहता। पता नहीं कैसा खानदान है? छोड़ो, मेरा रास्ता छोड़ो।

मँझली मालकिन ने दृढ़ भाव से कहा—नहीं।

मँझले मालिक तब भी बोल रहे थे—पता नहीं चोर है कि बदमाश है या भिखारी खानदान का लड़का है, यह सब नहीं हो सकता। फिर यह मर जायेगा, देखती नहीं हो कैसा उस का चेहरा है।

मँझली मालकिन की आँखों में आँसू आ गये। उन्होंने कहा—तुम सुनो क्यों नहीं, जिन लोगों को दोनों बेला चावल-दाल भी नहीं खाने को मिलता, दूध तो उन के लिए स्वप्न है। उन के घर में रहने पर यह तो मर ही जायेगा।

बिना किसी कारण के पलंग पर की चद्दर को खींचते-खींचते मँझले मालिक बोले—मर जाने दो, मरने के बाद के इसे फेंक देंगे।

मँझली मालकिन ने कहा—छिः छिः, यह बेचारा अबोध शिशु है। इस ने भला तुम्हारा क्या किया है?

मँझले मालिक अपने-आप बक-बक कर रहे थे—दूसरे का लड़का है···दूसरे का लड़का है, यह नहीं हो सकता, यह नहीं हो सकता, लौटा दो, लौटा दो, बल्कि चार आना पैसा···।

मँझली मालकिन बाहर चली गयी। सामने के लम्बे बरामदे में उन के जाने की आवाज क्रमशः धीमी पड़ती गयी और अन्त में सीढ़ियों के पास जा कर विलीन हो गयी। अपने-आप बोलते हुए मँझले मालिक चुपचाप खड़े थे। अपनी पत्नी के जाने के बाद उसी रास्ते की ओर ताकते हुए बोले—अगर मुझे लड़का नहीं है तो तुम्हें क्या? इस के बाद फिर कुछ सोच कर बोले—युधिष्ठिर निर्वंश रहे, भीम निर्वंश रहे, रावण निर्वंश रहा, कृष्ण निर्वंश हो गये, मैं भी निर्वंश हूँ, इस से हुआ क्या? नहीं है तो फिर नहीं है। और ऐसे ही बक-बक करते हुए वे घर से बाहर आ कर दालान की ओर जाने लगे। उन के मकान की चहार-दीवारी के पास ही अमरूदों के पेड़ हैं। मँझले मालिक ने देखा कि बिना हवा के ही अमरूदों के पेड़ हिल रहे हैं। वे समझ गये कि बन्दर चढ़े हुए हैं। वे चिल्लाये—ओ निताई, अरे ओ निताई, अमरूदों के पेड़ पर बन्दर चढ़े हुए हैं, भगा दे, भगा दे उन को और इस के साथ-ही-साथ झपाझप दस-बारह लड़के मिट्टी पर कूद पड़े। मँझले मालिक क्रोध से पागल हो उठे। लड़कों के इस उपद्रव से वे जल उठते हैं। आज भी वे ठीक बच्चों की तरह उन के पीछे दौड़ पड़े। लेकिन किसी को पकड़ नहीं सके। बाहर से बच्चों की हँसी सुनाई पड़ी। इस असफलता के कारण मँझले मालिक का क्रोध और भी बढ़ गया। इसी क्रोध के कारण उन्होंने कई ढेले उठाकर अमरूदों के पेड़ की तरफ फेंकना शुरू किया। अपने-आप ही बोल उठे—आज अमरूदों को ही मारूँगा। लेकिन उन्हें रुक जाना पड़ा। पीछे रखे हुए पुआल के खलिहान के पीछे से पता नहीं कौन रो उठा। लौट कर उन्होंने देखा तो पाया कि पुआलों के दो खलिहानों के बीच की पतली जगह में चार मास का एक सुन्दर लड़का डर के मारे रो रहा है। मँझले मालिक को देख कर उस का रोना भी बन्द हो गया। लड़के की ओर देख कर मँझले मालिक जैसे मुग्ध हो गये···बहुत सुन्दर लड़का था। अर्थात् उन्होंने बच्चे को झपट कर उठा लिया और अपनी छाती से चिपटा कर बार-बार उस का चुम्बन लेते हुए बोले—डर की क्या बात है? लेकिन

दूसरे ही क्षण वे खुद चकित हो उठे। चारों ओर देख कर बच्चे को फिर उसी तरह वे फेंक कर जल्दी से वहाँ से उठ पड़े। दालान में कोई नहीं था, उस एकान्त दालान में आधे प्रकाश और आधे अन्धकार के बीच वे खड़े हो कर हाँफने लगे। उन की दृष्टि पता नहीं कैसी अस्वाभाविक हो उठी थी। हुक्के के चिलम के बीच में धुएँ की तीक्ष्ण रेखा उठ रही थी। मँझले मालिक धीरे-धीरे हुक्का उठा कर चौकी पर बैठ गये। हुक्का उन्होंने पीना नहीं शुरू किया बल्कि चुपचाप उसे पकड़ कर बैठे रहे।

बाहर जूते का शब्द हुआ लेकिन वह आवाज उन के कानों में नहीं गयी। जो वहाँ आया वह बड़े मालिक का लड़का था···मँझले मालिक का भतीजा···मणि, मणि। मणि ने पुकारा—चाचा!

मँझले मालिक ने पता नहीं कैसी अद्भुत दृष्टि से मणि के चेहरे की ओर ताका और आदर सहित उस की अगवानी करते हुए बोले—आइए, आइए, आइए। अच्छे तो थे आप! लीजिए, तम्बाकू पीजिए—ऐसा कह कर उन्होंने हुक्का मणि की ओर बढ़ा दिया।

मणि जैसे चौंक उठा और कई डग पीछे हट कर उस ने ऊँची आवाज में कहा—मैं मणि हूँ। एक बात थी···। उस की बात पूरी नहीं हो सकी। मँझले मालिक हुक्का वहीं छोड़ कर जल्दी से दालान छोड़ कर भाग गये।

मणि ने नाराज हो कर कहा—लोग बड़े शौक से बोलते हैं···जैसे पागल गणेश, गोबर गणेश।

बीस-पच्चीस साल पहले की बात है, मँझले मालिक की तब नयी उम्र थी। बनर्जी खानदान में सब बस यहीं थे। उस समय मँझले मालिक ऐसे नहीं थे। उन का नाम लोगों ने रख दिया था···गणेश बाबू। सब रोज शाम को वे गाने-बजाने की मजलिस में बैठते। मुर्शिदाबाद की मशहूर सितार-जनी, नेवाज खाँ नियमित उन के यहाँ एक बार महीने में आते। मँझले मालिक भी शौक से सितार सीखते थे। मँझले मालिक आचार-विचार, बातचीत, कायदा-कानून सभी में ऊँचे किस्म के आदमी थे। खर्च-वर्च करने में वे दरियादिल थे। दोस्तों को खिलाने-पिलाने में उन के ऐसा कोई आदमी नहीं, उन के बड़े भाई जमींदारी देखते, और भाई मामला-मुकदमा और

इस मँझले भाई पर पोखरा, बगीचा और जमीन देखने-भालने का काम था।

गाँव के उस कोने पर मँझले मालिक की बैठक जमा करती थी। निस्तब्ध रात्रि में छलछलाती हँसी से गाँव वाले सोते से जग पड़ते। लेकिन दूसरे ही क्षण फिर वे निश्चिन्त हो कर सोने चले जाते। वे समझ जाते कि ये मँझले मालिक हँस रहे हैं।

ऐसे ही दस-बारह साल बीत गये। तब मँझले मालिक की उम्र थी तीस साल और उन की पत्नी मँझली मालकिन की उम्र थी पचीस साल। उस दिन नहा-धो कर पूजा-पाठ कर के मँझले मालिक छोटे भाई कार्तिक के मँझले बेटे को अपनी गोद में ले कर नाश्ता कर रहे थे। घर के पाँच लड़कों के बीच यही लड़का निःसन्तान मँझले मालिक को बड़ा प्रिय था। स्वयं भी खाते और उस बच्चे के मुँह में भी एकाध कौर डाल दिया करते।

उस दिन उन की पत्नी मँझली मालकिन ने बिना किसी भूमिका के कहा—देखो, मैं वैद्यनाथधाम जाऊँगी, तुम्हें भी चलना होगा।

मँझले मालिक भतीजे में डूबे हुए थे, यों ही बोले—क्यों?

—धरना दूँगी बाबा के पास।

मँझले मालिक इस बार होश में आ गये। मँझली मालकिन के गले में झूलती हुई ताबीजों और कवचों की ओर ताक कर बोले—बहुत तो तुम ने किया, अब यह फिर क्यों?

मँझली मालकिन की आँखों में आँसू आ गये। उन्होंने काँपते गले से कहा—तुम यह बात कह रहे हो!

मँझले मालिक सूने हुए आँगने की ओर से आकाश की ओर ताकते रहे। मँझली मालकिन ने अपने को किसी तरह सँभालने की कोशिश की। बाबा को पकड़ कर एक बार देखूँगी, देखूँ शायद हमारे पर भी उन की कृपा हो जाए। मँझले मालिक चुपचाप बैठे रहे। उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया। मँझली मालकिन चुपचाप उत्तर की प्रतीक्षा में खड़ी रहीं। छोटा शिशु भोजन की आशा में अपने बड़े चाचा की दाढ़ी खींच कर बोला—हूँ हूँ।

···बच्चे का हाथ सरका कर उन्होंने उदासीन हो कर कहा—ओह!

उत्तर नहीं पा कर मँझली मालकिन ने कहा—अगर तुम नहीं जा

सकने तो फिर मुझे मेरे मायके पहुँचा दो, मैं वहाँ से चली जाऊँगी।

उस तरफ गोद में बैठे हुए बच्चे की चंचलता बढ़ती जा रही थी। इस बार उस ने अपने चाचा की नाक पर उँगलियों से छिटोरते हुए कहा—दे हम। नाराज हो कर मँझले मालकिन ने बच्चों को मँझली मालकिन की तरफ फेंकते हुए कहा—ले जाओ, इस की माँ को दे आओ। मँझली मालकिन बच्चे को अपनी गोद में ले कर उत्तर की आशा से खड़ी रहीं।

थोड़ी देर बाद मँझले मालिक ने मीठी आवाज से कहा—तुम मुन्ने को क्यों नहीं अपनी गोद में ले लेती हो?

मँझली मालकिन ने दृढ़ भाव से कहा—नहीं, एक पेड़ का फल दूसरे पेड़ में कभी नहीं लगता।

मँझले मालिक चुप रहे, अन्त में बोले—अच्छा, चलो।

मँझली मालकिन की देवघर यात्रा की तैयारी हो रही थी। यात्रा पर जाने के एक दिन पहले दोपहर को उन की पड़ोसिन औरतें, छोटी मालकिन और बड़ी मालकिन उन्हें घेर कर बैठ गयीं। एक आदमी ने कहा—बाबा की कृपा का कोई अन्त नहीं है, वहाँ जाने पर बाबा की कृपा होगी ही।

दूसरी ने कहा—भाई, भाग्य ही असली चीज है, भाग्य में यदि है तब तो ठीक है, नहीं तो बाबा…।

इस बीच में ही बाधा दे कर एक दूसरी ने कहा—ऐसी बात मत कहो —बाबा के लिए कुछ भी असम्भव नहीं है। पता नहीं किस का ले कर किस को देते हैं। कोई समझ नहीं सकता? यह जो मुखर्जी खानदान की मझलि की बहू है, उस के दस लड़के मर गये और उस के बाद यह नौकरोढी पैदा हुआ, इसे भला कोई जानता है? एक ही क्षण में वहाँ अड्डा जम गया। श्यामा ठकुरानी ने बाबा को प्रणाम कर कहना शुरू किया—उस मुहल्ले की सुखी दीदी, मोरछला ठकुरानी—अरे उसी का भतीजा मर गया और मझलि की बहू के लड़के के रूप में जन्मा। जानती तो हो सुखी मझलि की बहू के घर में रहती थी, खाना-पीना सब कुछ मझलि की बहू के घर ही, दोनों आदमी में बड़ी मित्रता थी। जब उस के दसों लड़के मर गये तब सुखी वैद्यनाथधाम गयी। और यह अपने लिए नहीं गयी थी। मझलि की बहू के

लिए धरना देने गयी थी। तीन दिन के बाद स्वप्न हुआ— जा जा, उठ जा तू। उन के लड़के अब नहीं होंगे। लेकिन मुकी बाबा का पिण्ड छोड़ने वाली नहीं थी। बोली—नहीं बाबा, देना ही होगा। नहीं देने पर मैं यहाँ से उठूँगी नहीं। दूसरे दिन भी वही स्वप्न आया। मुकी उठी नहीं, बोली—बाबा, मैं यहीं मर जाऊँगी। और तब तीसरे दिन स्वप्न हुआ—और यह देखो भाई, मेरा शरीर रोमांचित हो रहा है।

सचमुच ही श्यामा ठकुरानी का शरीर रोमांचित हो उठा था। सुनने वालों में से सभी की बोलती बन्द। श्यामा ठकुरानी ने फिर शुरू किया—तीन दिन स्वप्न हुआ—अरे उसे नहीं कुछ है, अगर उसे अपना कोई दे तब होगा, तू क्या देगी? मुकी ने कहा कि हाँ बाबा, दूँगी। बाबा बोले—तो ठीक है, तब उस को होगा लड़का। मुकी के पास तो बच्चे-कच्चे थे नहीं, बस केवल उस का भतीजा था और मुकी उसे ही आदमी बना रही थी। पन्द्रह-सोलह साल का स्वस्थ लम्बा-चौड़ा सुन्दर लड़का था। और आठ दिन के भीतर ही वह लड़का छटपटा कर मर गया। और तब मुकी अपनी छाती पीटती हुई बोली—हाय, यह मैं ने क्या किया, यह मैं ने क्या किया? और वही लड़का मरने के बाद उसी साल मणि की बहू की गोद में तीनकौड़ी के रूप में पैदा हुआ।

सभी लोग स्तब्ध हो कर सुन रहे थे। हठात् बड़ी मालकिन ने कहा —क्या हुआ री मँझली? ऐसे क्यों कर रही है?

काँपते हुए हाथों से कान को पकड़ कर मँझली ने कहा—सुरती खाने से मेरा माथा घूम रहा है।

रात को अपने पति से मँझली ने कहा—देखो, अगर भाग्य में है तब तो बच्चा होगा। बैद्यनाथधाम जाने की ज़रूरत नहीं।

मँझले मालिक आश्चर्यचकित रह गये। उन्होंने पूछा—अब क्या हुआ?

मँझली ने सारी बातें अपने पति से बता दीं। वह सकरुण नेत्र अपने पति की ओर ताकती रही। मँझले मालिक स्नेह से बोले—छि-छि, ऐसी चिन्ता नहीं करनी चाहिए। बाबा बैद्यनाथ ने स्वप्न में मँझले मालिक और मँझली मालकिन से क्या कहा, तीसरे किसी व्यक्ति को यह पता नहीं चला।

लौटने के कई दिन बाद मँझले मालिक बड़े भाई के पास जा कर बोले—मेरी एक बात थी भइया ! बड़े मालिक कचहरी का कोई कागज़ पढ़ रहे थे, उसे रख कर बोले—बोलो, क्या कहते हो ?

ज़रा-सा इधर-उधर कर के मँझले मालिक बोले—मैं ने ठीक किया है कि मैं कोई लड़का गोद ले लूं।

बड़े मालिक ने प्रश्न किया—क्या बाबा की दया नहीं हुई ?

मँझले मालिक ने कहा—यह बात रहने दो। अब मेरी इच्छा है, और मँझली बहू की भी इच्छा है कि वह छोटे भाई कार्तिक के मँझले लड़के को गोद···।

बड़े मालिक ने कहा—वह बात तो कार्तिक से जा कर कहो, और छोटी बहूरानी से भी बात करनी होगी, उस की भी स्वीकृति लेनी ज़रूरी है।

मँझले मालिक ने कहा—यह भार मैं तुम्हारे ऊपर देता हूँ।

बड़े मालिक बोले—अच्छा, ठीक है, मैं ही कार्तिक से जा कर कहता हूँ।

और थोड़ी देर बाद बड़े मालिक बोल उठे—यह तो बहुत अच्छी बात तुम ने की है। गणेश, घर की सम्पत्ति घर में रहेगी। एक ही वंश में।

मँझले मालिक हँसते हुए खेतों की ओर चले गये। उसी दिन पोष्यपुत्र के उपलक्ष्य में यज्ञ और ब्राह्मण भोजन का पर्व सम्पन्न हो गया। कुछ लोगों ने कहा—यात्रा और कुछ गाना-बजाना होना चाहिए। कलकत्ते की यात्रा, और दूसरे दल ने कहा—नहीं, खेमटा नाच होना चाहिए।

मँझले मालिक ने कहा—कोई परवा की बात नहीं, वह दोनों ही होगा। एक दिन मजलिस होगी और एक दिन वह सब। खाँ साहब को चिट्ठी लिख देता हूँ, वे सब उस्ताद और बाजों को ले कर आ जायेंगे। दोपहर को घर के फाटक के पास आते ही मँझले मालिक ने देखा—कार्तिक मँझले बच्चे को गोद में ले कर दालान से भीतर की ओर चला गया है। उन्होंने समझा कि बातचीत खत्म हो गयी है। उन्होंने भीतर जा कर अपना हाथ बढ़ाते हुए बच्चे को पुकारा—मुन्ने !

इस का उत्तर देते हुए कार्तिक ने क्रोधपूर्वक कहा—नहीं। इस के

बाद अपने मँझले भाई को सिर से पैर तक तीखी नजरों से देख कर कहा —तुम कितने बड़े चाण्डाल हो, इतनी जलन है तुम में यह मैं नहीं जानता था।—मँझले मालिक स्तम्भित हो उठे। कोई उत्तर न पा कर कार्तिक ने फिर कहा—इस लड़के को मार कर के तुम अपना वंश चाहते हो? छि! छि!!

चारों ओर से जैसे मँझले मालिक के ऊपर आकाश फट पड़ा था। वे करुण स्वर में बोले—कार्तिक!

कार्तिक तब क्रोध के मारे ज्ञानशून्य था। उस ने कहा—तुम्हारे छिपाने से क्या होगा? सच बात कभी छिपी नहीं रहती, समझते हो? हम लोगों ने बाबा के स्वप्न की बात सुनी है। तुम चाण्डाल हो। चाण्डाल हो।

मँझले मालिक हठात् जमीन पर गिर पड़े और दोनों हाथों से पृथ्वी को पकड़ कर चिल्ला उठे—भूमिकम्प! और वहीं पर अचेत हो गये।

उसी दोपहर को मँझले मालिक अपने सोने के कमरे में गये और पूरे दो महीने बाद बाहर निकले। उस दिन वे घर के बड़े मालिक और अपने बड़े भाई के पास जा कर बोले—मेरा हिस्सा बाँट दो।

बड़े मालिक चौंक उठे, लेकिन दूसरे ही क्षण अपने को संयमित करते हुए बोले—बस!

घर के भीतर चहलकदमी करते हुए मँझले मालिक एक जगह पर खड़े हो गये। दीवाल पर उन्होंने झुक कर देखा कि चींटियों का झुण्ड चला जा रहा है। बाप रे बाप! चींटियों का वंश कितना बड़ा है। और सभी के मुँह में एक अण्डे! ऐसा कह कर उन्होंने दोनों हथेलियों से चींटियों की पंक्ति को रगड़ दिया। बड़े मालिक उठ कर आ रहे थे, मँझले भाई की पीठ पर हाथ रख कर उन्होंने पुकारा—गणेश!—लज्जा के मारे कुछ क्षण खड़े रह कर मँझले मालिक घर से बाहर भाग गये। बड़े मालिक ने वैद्य को बुलवाया लेकिन मँझले मालिक ने लौटा दिया। घर से ही उन्होंने कहलवा दिया—मेरी सम्पत्ति पहले बाँट दी जाय। इस के-उस के बच्चों के दूध का दाम मैं क्यों दूँगा? इस के बाद बिछौने के ऊपर एक घूँसा जमा कर बोल उठे—बच्चू बैद्यनाथ के सिर पर एक घूँसा रावण की तरह लगाने का मन

करता है। बेटा वैद्यनाथ को मार-मार कर कचूमर निकाल दूँगा, जमीन मे बैठा दूँगा। देवता नहीं पत्थर है। थोड़े ही दिन बाद सम्पत्ति बँट गयी, यह बारह साल पहले की बात है। इस के बाद मँझले मालिक ऐसे ही व्यवहार करते रहे। एक और भी परिवर्तन उन मे आया था। जब-तब धर्म-कर्म मे उन का प्रेम बढ़ गया। भयंकर जाड़े मे जब लोग रजाई के भीतर दुबके रहते तब मँझले मालिक नंगी देह अपनी छाती पर दोनों हाथ रखे हुए, पता नहीं क्या बड़बड़ाते हुए देवी के मन्दिर मे घर की तरफ़ दौड़ते। जिस रास्ते से सभी लोग आते उस रास्ते से ये नहीं आते। ये एक दूसरा ही रास्ता बना कर चलते।

इस घटना के बाद आज तक कभी भी मँझले मालिक ने गोद लेने की बात नहीं की, यहाँ तक कि सन्तान की बात भी इन के मुँह से कभी नहीं फूटी। बस अर्थ और परमार्थ के बीच उन्होंने यश की कामना दबा दी। लेकिन मँझली मालकिन यह नहीं भूल सकी, उन्होंने अपने पति से विवाह करने के लिए अनुरोध किया था, गोद लेने के लिए भी कहा था, लेकिन उस का परिणाम यह हुआ कि मँझले मालिक का दिमाग़ दिन-प्रतिदिन खराब होता गया। अधिकतर उन का समय रुपया इकट्ठा करने में लगता। अर्थ-संचय की उन की पिपासा बढ़ती ही जाती—अपने सोने के कमरे में जो सन्दूक उन्होंने रखी थी—बार-बार उसे खोल कर देखते। कभी-कभी धर्म-कर्म मे उन का अनुराग बढ़ता। और बिना किसी से कुछ कहे वे तीर्थ-भ्रमण के लिए बाहर चले जाते। यह सब कुछ देख-सुन कर मँझली मालकिन परेशान हो गयीं। बहुत दिन तक उन्होंने कोई बात नहीं की। लेकिन आज चार महीने के बाद हठात् चटर्जियों के इस भानजे को ले कर वह अपने पति के पास आयी थीं, लड़का चूँकि अनाथ था इसलिए वे अपना लोभ नहीं रोक सके। उस बच्चे की मामी नीचे प्रतीक्षा कर रही थी। बच्चे को देख कर उसे कुछ रुपया पाने का लोभ था। मँझली मालकिन ने नीचे आ कर चुपचाप उस की गोद में दे दिया।

चटर्जी की बहू ने प्रश्न किया—क्या हुआ?

मँझली मालकिन ने उस की बात का जवाब नहीं दिया, उन की छाती के भीतर जैसे कोई रुलाई बार-बार उमड़ रही थी। चटर्जी की बहू

आश्चर्यचकित हो उठी और उस ने पूछा—क्या हुआ?

गरदन हिला कर मँझली मालकिन ने बताया नहीं। और वे वहाँ खड़ी नहीं रहीं, एक दूसरे घर में चली गयीं।

दोपहर को बूढ़ा नौकर राय टुक्-टुक् कर के आया और अपने चश्मे से चारों ओर देख कर बोला—बहू रानी।

मँझली मालकिन सोयी हुई थीं। उठ कर बैठ गयीं, अपने सिर पर के कपड़े को जरा खींच कर मधुर स्वर में बोलीं—चलो, आती हूँ। बाबू आये हैं?

खिल्ला कर राय ने कहा—बहू माँ, पगले आदमी का मन वृन्दावन दोनों ही बराबर हैं, क्या कहूँगा मैं। ग्यारह बजे की ट्रेन से वह गंगा स्नान को चले गये। मैं नहीं-नहीं करता ही रहा, वह चले ही गये।

मँझली मालकिन ने कहा—तब तुम लोग जा कर खा लो। महराज को रसोई सँभालने को कह देना।

राय ने कहा—अब तुम नहीं खाओगी बहूरानी, दो कौर तुम भी खा लो।

सस्नेह हँस कर मँझली मालकिन ने कहा—मैं नहीं खाऊँगी बाबा। मेरा सिर दर्द कर रहा है।

राय ने फिर एक बार प्रणाम किया और धीरे-धीरे लौट आया। अपनी चप्पल पहनते हुए, फिर उस ने चप्पल उतार दी और जा कर कहा—नहीं, बहू रानी, ये तुम लोगों की अच्छी बात नहीं है, यह हम को अच्छा नहीं लगता, तुम जरा दो ही कौर तो खा लो। उस पगले के साथ तुम भला क्यों पागल हो रही हो?

धीरे-धीरे लेकिन दृढ़ स्वर में मँझली मालकिन ने आदेश दिया—मैं ने जो कहा है, वही जा कर करो राय जी!

राय ने फिर कोई बात नहीं की, अपने पैरों में चप्पल डाल कर टुक-टुक करते हुए चला गया।

बहुत दिनों के बाद आज मँझले मालिक पता नहीं कैसे चपल हो उठे। उसी घबड़ाहट और चपलता के कारण अपने फनीन्द्र मनि तक को नहीं पहचान सके। दूसरा उन्हें देने जा रहे थे। इस का ख़याल आते ही वे

उमगायट

सजा कर अपने सोने के कमरे में आ कर छिप गये थे। लेकिन वहाँ बैठे नहीं रह सके। लगातार अपने कमरे में चहलकदमी करते हुए वे बोल उठे—दूर हो जा, दूर हो जा। एक बार छोटे घर की ओर ताक कर बोले—घट-घट, मत डका।

दूसरे ही क्षण फिर कह उठे—दूर हो जा, दूर हो जा।

इस के बाद फिर चहलकदमी करते हुए वे बिछौने पर सो गये। लेकिन वह भी अच्छा नहीं लगा। बिछौने से उठ कर वे फिर चचल पग से इधर-उधर टहलने लगे। आले पर से अपना गमछा और कुरता निकाल कर कन्धे पर रखा और बोल उठे—इस को धो कर आ जाऊँ! यहाँ से चार सौ मील की दूरी पर रहता हूँ, एक बार गंगा तो हो आऊँ—और बक्स से कुछ रुपये-पैसे निकाल कर वे बाहर निकल आये। घर के बाहर ही राय साहब से भेंट हो गयी, उस के बगल से जाते-जाते मँझले मालिक ने कहा—गंगा स्नान को जा रहा हूँ, उस से कह देना।

राय वहीं ठमक कर खड़ा हो गया। और प्रणाम करते हुए बोला—रुकिए-रुकिए!

लेकिन उत्तर नहीं दिया उन्होंने। राय ने जोर से पुकारा—मँझले मालिक, मैं कहता हूँ सुनिए। अरे हे! और इस बात का भी जवाब उन्होंने नहीं दिया। राय ने अपनी गरदन उठा कर, आँख फाड़ कर देखा, कोई नहीं दिखाई पड़ रहा था।

स्टेशन से नीचे उतर कर मँझले मालिक बिलकुल गंगा घाट पर जा पहुँचे। घाट पर नहाने वालों की चहल-पहल और भीड़, इस के अलावा घाट के ऊपर जो छोटा-सा बाजार है, उस में खरीदने और बेचने वालों की भीड़। मँझले मालिक घाट के ऊपर बैठ कर उस पार की रेती को ताक रहे थे। धूप में चमकती हुई वह रेती झलमला रही थी। बहुत दूर तक जैसे उस रेती पर हरियाली भी दिखाई पड़ रही थी। उन के आस-पास की आवाज उन के कानों में आ रही थी—आश्चर्यजनक साधु है भाई!

जो भी जा रहा है उस का नाम पुकारता है। किस का कहाँ घर है यह भी बता देता है।

एक दूसरे आदमी ने धीमे से कहा—श्मशान घाट का डोम कह रहा

था कि यह बाबा मुरदा खाता है।

मँझले मालिक ने साग्रह पूछा—कहाँ रे भाई, कहाँ?

दूसरे ने उत्तर दिया—अरे साधु क्या भीड़ मे रहते हैं? वहीं श्मशान पर है।

मँझले मालिक उठ पड़े—गंगा के किनारे से होते हुए घने जंगल के बीच एक पतली सी पगडण्डी चली गयी है, उस पगडण्डी को पकड़ कर श्मशान मे बनी हुई टिन की उस झोंपड़ी के पास जा खड़े हुए। थोड़ी ही दूर पर रेती के ऊपर मधुमक्खियों के झुण्ड जैसी गोलाकार भीड़ जमी हुई थी, उन्होंने समझ लिया कि संन्यासी वहीं पर हैं। वे भी आगे बढ़ कर उसी भीड़ मे मिल गये। जनता की भीड़ के बीच धूनी जलाये हुए एक प्रचण्ड काफी लम्बे-चौड़े सन्यासी बैठे हुए थे। बहुत से लोगों को बहुत-सी बातें वे बता रहे थे। बीच-बीच मे अपरिचित भीड़ के भीतर से वे किसी का नाम ले कर पुकार उठते थे। इसी बीच हठात् सन्यासी की आँखें मँझले मालिक की आँखों से जा मिलीं। थोड़ी ही देर बाद सन्यासी ने हँस कर धीरे से कहा—आओ बाबा गणेश बन्द्योपाध्याय, रामचन्द्रपुर के बनर्जी, मँझले मालिक, आओ। मँझले मालिक आश्चर्य के मारे काठ बन गये। दूसरे क्षण वे डर से सहम गये। सन्यासी ने यदि कहीं उन के मन की बात इस भीड़ के सामने कह दी तो? वे जल्दी से वहाँ से आ कर गंगा घाट पर बैठ गये।

कब तक वे बैठे रहे, उन का उन्हें पता नहीं लगा। हठात् चौंक उठे। बाजार के किसी परिचित दुकानदार ने उन्हें प्रणाम करते हुए कहा—अरे मँझले मालिक, प्रणाम, अच्छे तो हैं?

मँझले मालिक ने अर्थहीन हँसी हँसते हुए कहा—हाँ, अच्छा ही हूँ। और तुम अच्छे तो हो?

दुकानदार ने कहा—जी हाँ, आप लोगों के आशीर्वाद से ठीक ही हूँ। चलिए, स्नान करिए। फूल-माला ला दूँ?

मँझले मालिक आकाश की ओर देख कर पता नहीं क्या सोच रहे थे। सूर्य का बिम्ब रक्ताभ हो रहा था। वे जल्दी से उठ कर बोले—हाँ, जल्दी से फूल-माला ला दो। उस ट्रेन से मैं जाऊँगा। हँस कर उस दुकान-

दार ने कहा—अब वह तो कल सुबह नौ बजे मिलेगी। तीन बजे की गाड़ी तो जा चुकी।

मँझले मालिक धीरे-धीरे चिन्तित भाव से ही गंगा के जल में नहाने लगे।

गम्भीर रात्रि। दुकानदार के बरामदे में मँझले मालिक जाग रहे थे। बार-बार उठ कर बैठते थे और फिर लेट जाते थे। इस बार वे खाट पर से उठ गये और बाहर चले आये। चारों ओर निस्तब्धता थी। गंगा तट पर और विशेषतः उस वन भूमि की तरफ झींगुरों की झंकार आ रही थी। मँझले मालिक श्मशान की ओर चल पड़े। उन की छाती के भीतर धक्-धक् कुछ जैसे हिल-डुल रहा था। श्मशान में पहुँच उन्हों ने देखा कि अग्निकुण्ड के पास बैठा हुआ सन्यासी गंगा की ओर ताक रहा है। थोड़ी दूर पर खड़े हो कर मँझले मालिक ने पुकारा—बाबा!

सन्यासी ने बिना मुँह फेरे ही उत्तर दिया—आओ, बैठ जाओ। सन्यासी को प्रणाम कर के मँझले मालिक बैठ गये। आदमी की खोपड़ी के पात्र में पता नहीं क्या पी कर सन्यासी ने कहा—मन में कोई इच्छा ले कर आये हो बाबा?

मँझले मालिक का कण्ठ जैसे फँसा जा रहा था। जैसे उन का स्वर बाहर नहीं निकल रहा था। सन्यासी ने फिर कहा—क्या चाहते हो बाबा?

बहुत कष्ट के साथ मँझले मालिक ने इस बार उत्तर दिया—बाबा तो अन्तर्यामी हैं

हँस कर सन्यासी ने कहा—लेकिन तुम्हारे मन की बात तुम्हें ही अपने मन से कहना होगा। नहीं तो इस संसार में भला क्या मिलेगा—तुम क्या चाहते हो?

उसी श्मशान भूमि पर लोट कर मँझले मालिक ने कहा—सन्तान! बाबा बैद्यनाथ ने मुझे निराश किया है, तुम दया करो बाबा!

सन्यासी स्तब्ध हो कर बैठे रहे, मँझले मालिक भी नहीं उठे, वैसे ही जमीन पर लेटी अवस्था में पड़े रहे। सन्यासी के चरणों में ही लेटे रहे।

कुछ देर बाद सन्यासी बोले—उठो, उठ कर बैठ जाओ।—ऐसा कह

कर सन्यासी ने अपने झोले में से मिट्टी का एक पुरवा निकाला और थोड़ा-सा तरल पदार्थ उस में डाल कर कहा—यह देवी का प्रसाद है, इसे पी लो। मँझले मालिक शाक्त ब्राह्मण वंशीय थे, बिना किसी शंका के उसे पी गये।

सन्यासी ने स्वयं भी उसे पी कर कहा—भगवान् शंकर की बात को क्या कोई काट सकता है! बोलो, काट सकता है?

मँझले मालिक ने निराश हो कर कहा—नहीं बाबा, नहीं काटी जा सकती शंकर भगवान् की बात।

हँस कर सन्यासी ने कहा—काटी जा सकती है। लेकिन जानते हो, कौन काट सकता है?

मँझले मालिक ने कहा—नहीं बाबा!

खिलखिला कर हँसते हुए सन्यासी ने कहा—शिव की भी बात काट सकती है वे, देवी, काली माँ, बेटा मेरी काली माँ, जो शिव की छाती पर चढ़कर नाचती है!

फिर वही खिलखिलाती हुई हँसी।

उस हँसी की तीक्ष्णता से उस श्मशान का अन्धकार भी जैसे काँप उठा। श्मशान की उस दिन से छायी हुई झोंपड़ी में वह प्रतिध्वनि जैसे अब भी बज रही थी।

मँझले मालिक का सर्वांग रोमांचित हो उठा। सन्यासी ने फिर एक बर्तन में मँझले मालिक को पीने दिया कुछ। और स्वयं पीते हुए बोले—काली माँ को तुम सन्तुष्ट कर सकते हो?

हाथ जोड़ कर मँझले मालिक ने कहा—क्या करना होगा बाबा?

मँझले मालिक के चेहरे के निकट जा कर सन्यासी ने कहा—नरबलि दे सकते हो? जिस के लिए मन्त्र के अनुसार काली के पास पुरोहित का करूँगा।

मँझले मालिक का मुँह प्रसन्नता से चमक उठा। बोले—हाँ बाबा!

सन्यासी ने कहा—लेकिन नरबलि, दे पाओगे तो?

मँझले मालिक का शरीर थर-थर कर के काँपने लगा। इस के साथ ही साथ एक बर्तन में फिर कुछ पीने को सन्यासी ने उन्हें दिया। और बोला—डर की क्या बात है? अमावस्या का अन्धकार है, कोई नहीं जान

सकता। गम्भीर रात्रि है। श्मशान है, यह कोई नहीं जान सकता। मँझले मालिक के मस्तिष्क में सुरा अग्नि-शिखा की भाँति जल रही थी, उन की आँखें भी अंगार की तरह धधक रही थीं।

मँझले मालिक बोले—हाँ, बलि दे सकूँगा।

दूसरे ही दिन मँझले मालिक घर लौटे। बिना किसी कारण के ही बनावटी हँसी-हँस कर अपनी पत्नी को उन्होंने कहा—गंगा स्नान को गया था।

मँझली मालकिन ने कहा—अच्छा किया।

लगता है, इस बात का कोई उत्तर न पा कर मँझले मालिक ने फिर हँसते हुए कहा—इसलिए कह रहा था···।

मँझली मालकिन ने नौकर को बुला कर कहा—जरा जल्दी से रसोई बना दो। कल से बाबू ने कुछ खाया नहीं है। चंचलभाव से कई बार इधर-उधर घूम-फिर कर मँझले मालिक ने कहा—वह लड़का कहाँ गया?

शंकित स्वर में मँझली मालकिन ने कहा—वे तो उसे उठा ले गये।

मँझले मालिक बाहर चले गये। फिर थोड़ी देर बाद आ कर बिना किसी भूमिका के कहा—उस लड़के को रखना चाहता था।

मँझली मालकिन ने पति की ओर ताक कर कहा—किसे?

मँझली मालकिन की ओर लौट कर रसोई में रखे हुए धान को एक मुट्ठी में भर फेंकते हुए बोले—अरे! उसी लड़के को, यही कहो···

मँझली मालकिन ने कोई जवाब नहीं दिया। मँझले मालिक ने उस को बार लौट कर कहा—अरे गोद नहीं लेगी सही पर खाता-पीता और पड़ा रहता।—ऐसा कहते-कहते फिर एक मुट्ठी धान लेकर फेंक दिया।

बीच में ही रोक कर मँझली मालकिन ने कहा—यह धान क्यों फेंक रहे हो? जो कुछ कहना है, जरा ठण्डा हो कर कहो।

मँझले मालिक और नहीं रुके। हड़बड़ाते हुए बाहर निकल आये। दालान में आ कर गम्भीर चिन्ता में डूब से गये। भीतर ही भीतर जैसे उन का हृदय उद्वेलित हो रहा था। दरवाजे के पास उन के नौकर राम के आने की आवाज सुनाई पड़ी। राम ने आ कर उन्हें प्रणाम किया—बाबू जी

आप को बुला रही हैं।

मंझले मालिक ने चौंक कर प्रश्न किया—ऐं-ऐं?

राय ने कहा—दिन-रात इतना क्यों सोचते रहते हैं मालिक? मैं कह रहा हूँ, वह जो आप को बुला रही हैं।

मंझले मालिक उठ खड़े हुए। मैं एक बार काली माई के थान की ओर जा रहा हूँ। राय जैसे घबड़ा उठा। बोला—हे, हे, हे, अरे ये क्या करते हो? अरे मैं कहता हूँ सुनिए।

मंझले मालिक जा चुके थे।

दोपहर को जब मंझले मालिक खाने बैठते थे तो उन की पत्नी उन्हें ताल-पंखे से हवा करती थी। हवा करते हुए उन्होंने कहा—तो चटर्जी के उस लड़के को।—मंझले मालिक बोले···हाँ, खायेगा, पीयेगा, पड़ा रहेगा, आदमी होगा, माने।

दरवाजे के नीचे बनर्जी परिवार के जूठन पर जिन्दा रहने वाली कुतिया बैठी हुई थी। सहसा वह आकाश की ओर मुंह उठा कर ऊँ-ऊँ कर के चिल्लाने लगी। महाराज ने उसे दुत्कार कर कहा—दुर-दुर।

मंझली मालकिन ने कहा—रहने दो, रहने दो, महराज! वह कुतिया अपने बच्चे के लिए रो रही है। कल उस के बच्चे को सियार उठा ले गया। अरे यह क्या, यह क्या? तुम ने तो कुछ खाया ही नहीं!

और मंझले मालिक भोजन छोड़ कर उठ खड़े हुए थे।

दोपहर को सोने के बाद जब मंझले मालिक उठे तब उन्होंने देखा कि गिलास में पानी लिये हुए मंझली मालकिन बरामदे में आ रही हैं, उन के चेहरे पर हँसी है और गोद में वही लड़का है। पति को देख कर उन्होंने कहा—कई बार मैं आयी पर तुम्हारी नींद ही नहीं टूटती, बड़ा अच्छा लड़का है, रोने का तो नाम ही नहीं लेता।

मंझले मालिक का मुँह-हाथ धोना नहीं हो सका। वे चुपचाप नीचे उतर गये। मंझली मालकिन के चेहरे पर एक म्लान हँसी तैरी। लेकिन उन्होंने कोई नाराजी अथवा दुःख नहीं प्रकट किया।

रात को मंझले मालिक बोले—उस लड़के को नौकरानी को दे दो। वह उसे पालेगी-पोसेगी।

मंझली मालकिन ने कहा—ठीक है, वही करूंगी।

खाट पर सोते-सोते भी मंझले मालिक को नींद नहीं आयी। उन का मस्तिष्क जैसे घूम रहा था। तब भी वे नींद का बहाना कर के पड़े रहे। कहीं पत्नी को पता न लग जाये। उन्हें याद पड़ रही थी आने वाली अमावस्या की रात्रि, वह भयंकर संन्यासी, सामने अग्निकुण्ड—और वह लड़का जो आश्चर्य से फटी हुई अपनी आँखों से सब देख रहा है। साथ ही साथ जैसे उन के भीतर एक दूसरा दृश्य दिखाई पड़ता। मंझली मालकिन उस बच्चे के लिए धूल में लोट रही हैं। हठात् फिर लगता जैसे उस बच्चे की स्वर्गीया माँ आ कर कह रही है—लाओ, लाओ, मेरी सन्तान को लौटा दो। और साथ ही साथ तकिये के भीतर वे अपना मुंह घुमेड़ देते। बाहर वह कुतिया चिल्ला रही थी। वे सिहर उठे—ओफ्‌…और धीरे-धीरे फिर मन को दृढ़ करने लगे।

सुबह उठ कर मंझले मालिक ने देखा कि उन की पत्नी कभी की उठ गयी है। उधर का पलग शून्य है। लेकिन ध्यान से देखने पर पता लगा कि उसपर शायद कोई सोया ही नहीं था।

दस दिन के बाद। उस दिन अमावस्या थी। रात को खाने-पीने की कोई झंझट नहीं थी। मंझले मालिक अमावस्या को उपवास करते थे और राय नौकर रात को खाता नहीं था। मंझले मालिक घर पर नहीं थे। आज कई दिनों से उसी सन्यासी के पीछे पागल हैं। सुबह ही घर से चले जाते हैं, लौटते हैं दोपहर को, फिर खाने-पीने के बाद बाहर चले जाते हैं। फिर आधी रात को लौटते हैं। वैसे मंझले मालिक की यह संन्यासी-सेवा कोई असाधारण सी बात नहीं है। इस के पहले भी वे तान्त्रिक मत के अनुसार जप-तप और सुरापान कर चुके थे। अब पति की अनुपस्थिति मंझली मालकिन को भी बुरी नहीं लगती थी। वे उस बच्चे को साथ ले कर खेलती रहती थी। उस दिन सन्ध्या को दोतल्ले वाले बरामदे में लालटेन के प्रकाश में बैठी हुई मंझली मालकिन छोटे बच्चे को दूध पिला रही थी और गा भी रही थी—

(खुकि घुम योले बाद छिले,
माँ मो बोले डाक छिले)
घुम गेर दे, बैठे-बैठे पथ मे

ओरी माँ, ओरी माँ

सदैव का अनाथ शिशु मँझली मालकिन के चेहरे की ओर ध्यानमुग्ध आँखों से ताक रहा था। राय जूते से शब्द करता हुआ आ कर खड़ा हुआ। मँझली मालकिन ने थोड़ा आँचल खींच कर कहा—कुछ कह रहे हो राय जी ?—राय ने थोड़ा झुक कर प्रणाम करते हुए कहा—बहू माँ, पाँव लागी।

फिर धीरे-धीरे उस ने कहा—यह बेटा साधू तो अच्छा नहीं लगता। बाबू को उस ने पागल कर दिया। दिन-रात बस शराब। आज वहाँ से कहलवा भेजा है कि रात होगी लौटने में, सब दरवाजे खुले रहें। मैं यही कहने आया हूँ और एक चिलम में तम्बाकू भी भर कर रखे जा रहा हूँ, नहीं तो फिर चिल्ल-पों मचायेंगे, तुम इतनी लगाम ढीली क्यों रखती हो ? बच्चे को ले कर तुम कैसी-कैसी हो गयी हो, जरा उन्हें सम्हालो।

धीरे से मुसकरा कर कुछ लजाते हुए मँझली मालकिन ने अपना घूँघट थोड़ा और खींच लिया।

रात दोपहर ढल चुकी थी। मँझले मालिक धीरे-धीरे चुपचाप पैरों से घर के भीतर घुसे। गाढ़ अन्धकार था, केवल दो-तीन खुले हुए जंगले के बीच में घर के भीतर का प्रकाश इस अन्धकार में असहाय प्रेत-देह की भाँति काँप रहा था। इतनी सतर्कता के बावजूद भी मँझले मालिक का पैर काँप रहा था। वे धीरे-धीरे भीतर चले गये। पता नहीं कौन रो उठा। मँझले मालिक चौंक उठे। तुम ! थोड़ी देर बाद उन्होंने समझा कि यह दुनिया अपने दुःख को नहीं भूल पायी है। आज श्मशान में उन का पुत्रेष्टि यज्ञ है। नर-बलि के लिए वे आये हैं। सीढ़ी से जा कर वे दो तल्ले पर चले गये। चारों ओर अन्धकार था। नौकरानी के कमरे में लालटेन जला कर देखे, वहाँ वह बच्चा नहीं था। बाहर आ कर वे फिर बरामदे में कुछ सोचने लगे। हठात् उन के मस्तिष्क में बिजली कौंध गयी, उन का अनुमान सत्य था—उन की पत्नी की गोद में ही यह लड़का सो रहा था। धीरे-धीरे अपनी पत्नी की खाट के पास आ कर उन्होंने देखा कि उन की पत्नी के दोनों स्तन खुले हुए हैं। उन की बाँह पर शिशु दोनों हाथों से पकड़ कर और एक स्तन को मुँह में डाले चुपचाप सो गया है। बीच-बीच में जैसे सपने में कोई हँसी

की एक रेखा बच्चे के होंठों पर फूट पड़ती है। उन की पत्नी के मुखड़े पर जैसे तृप्ति की एक हास्य-रेखा किसी ने तूलिका से अंकित कर दी है। मँझले मालिक के मुग्ध प्रभावित मस्तिष्क के भीतर सब कुछ उलटा-पुलटा होता जा रहा था, उन के हाथ-पैर काँप रहे थे फिर भी उन्हों ने अपने को दृढ़ कर के शिशु को कन्धे के ऊपर लाद लिया और बाहर चल पड़े। जल्दी से घर के बाहर आ कर मैदान में वे और तेज चलने लगे।

हठात् अमावस्या के उस अन्धकार को विदीर्ण करता हुआ जैसे कोई रो उठा। मँझली बहू। मँझले मालिक वहीं चुपचाप खड़े हो गए। फिर वही करुण चीत्कार जैसे सारे संसार की पीड़ा उस चीत्कार में पुंजीभूत हो उठी हो। मँझले मालिक की छाती के भीतर जैसे तूफान बहने लगा, फिर भी उन्होंने एक बार चेष्टा की। लेकिन उन्होंने सामने देखा जैसे कोई सफेद मूर्ति उन के सामने खड़ी हो। लेकिन वह कुछ नहीं था बल्कि ताड़ का एक सूखा पत्ता था। वह झूल रहा था। लेकिन मँझले मालिक के मन में हुआ जैसे उस बच्चे की माँ अलक्ष भाव से अपनी सन्तान की भिक्षा माँग रही है। उस तरफ फिर उन के घर से जैसे वही करुण चीत्कार सुनाई पड़ा। उस चीत्कार के कारण उन का हृदय अधीर हो उठा। उन की सारी कामना उड़ गयी। वे लौट पड़े। पागलों की तरह लौट पड़े।—आता हूँ, आता हूँ, मँझली बहू!—ठीक उसी समय चौकीदार आवाज दे रहा था—ओ खबरदार!—मँझले मालिक के मन में हुआ जैसे वह उसी प्रकार मालिक का आह्वान है। वे आर्तकण्ठ से चिल्ला उठे—मँझली बहू! मँझली बहू!!

मँझली बहू के अचल तले आश्रय पाने के लिए वे प्राणपण से छूटे। घर का फाटक खुला हुआ था।

मँझले मालिक की आवाज सुन कर वह दुखिया उन के पास आ अपनी वेदना प्रकट करने लगी धीरे-धीरे रो कर।

मँझले मालिक की आँखों से झर-झर आँसू गिरने लगे। वे बोल उठे—मेरा बच्चा तो मैं ने नहीं लिया है माँ! मेरा बच्चा मैं ने नहीं लिया।

जलसाघर

भोर तीन बजे नियमित समय से शय्या त्याग कर विश्वम्भर राय छत पर टहल रहे थे। पुराना खानसामा अनन्त गलीचे का आसन और तकिया बिछा कर फरशी व तम्बाकू लाने के लिए नीचे चला गया। विश्वम्भर राय ने एक बार आँख उठा कर देखा, किन्तु वे बैठे नहीं। जैसे सिर झुकाए टहल रहे थे वैसे ही टहलते रहे। निकट ही रायवंश के काली-मन्दिर के नीचे शुभ्र-स्वच्छसलिला गंगा क्षीण धारा में बह रही थी।

आकाश के पूर्व-दक्षिण कोण में शुकतारा चमक रहा था। पश्चिम-दक्षिण कोण में उस तारे के साथ मानो दीप्ति की प्रतियोगिता कर के ही इस इलाके के नये अमीर गांगुली बाबुओं के प्रासाद-शिखर पर तेज रोशनी वाला बल्ब अनिमेष जल रहा था। टन्-टन्-टन् कर के गांगुली बाबुओं के छत पर तीन का घण्टा बजाया गया। पहले दो-सौ वर्षों से इस इलाके में राय बाबुओं के घर में घण्टा बजता था पर अब नहीं बजता। अब विश्वम्भर बाबू की नींद टूटती है अभ्यासवश और कबूतरों के गुंजन से। आकाश में शुकतारा दिखते ही उन का कलरव शुरू होता है। भोर की हवा के साथ एक बहुत भीनी महक आ रही है। अब वसन्त समारोह के साथ रायगृह में नहीं आता। रायवंश के पास अब उस के स्वागत करने की शक्ति भी नहीं है। माली के अभाव में फूलों का बगीचा शून्य पड़ा है। केवल

मुचुकुन्द, बकुल, नागेश्वर और चम्पा के कुछ बड़े वृक्ष मात्र बच रहे हैं। वे भी इस वंश की तरह ही शाखा-डालीविहीन हैं, इस विशाल टूटते हुए प्रासाद की तरह ही जीर्ण हैं, वास्तव में कुछ पेड़ के तनों में सुराख भी दिखाई पड़ रहा था। उन जीर्ण शाखाओं के छोर पर वसन्त दिखाई पड़ता है अथवा वे वृक्ष ही वसन्त को पकड़ने की चेष्टा करते हैं—यह पता नहीं।

अस्तबल का एक घोड़ा हिनहिना उठा।

फरशी के ऊपर हुक्का रख कर उस की नली हाथ में ले कर अनन्त खानेसामे ने बुलाया—हुजूर!

विश्वम्भर बाबू की निद्रा टूटी, बोले—हूँ।

धीरे-धीरे गलीचे पर बैठते ही अनन्त ने उन की ओर नली आगे कर दी। नीचे घोड़ा फिर हिनहिना उठा।

नली का दो-एक बार धीरे से कश लगा कर विश्वम्भर बाबू ने कहा—मुचुकुन्द के फूल अब खिलने लगे हैं, आज से शरबत में देना।

सिर खुजला कर अनन्त ने कहा—जी, उस की पंखुड़ियाँ अभी पकी नहीं हैं।

इधर अस्तबल में घोड़ा बेचैनी से हिनहिना उठता था। एक दीर्घ श्वास ले कर राय जरा नाराज हो कर बोले—बुढ़ापे में निते बेटे की नींद बढ़ रही है क्या? जा, जरा निते को बुला तो दे। तूफ़ान बेचैन है, बुला रहा है, सुनता नहीं?

तूफ़ान उस घोड़े का नाम है। रायगृह के नौ अस्तबलों में यह एक घोड़ा अवशेष है। वृद्ध तूफ़ान पचीस वर्ष पहले के असमसाहसी जवान विश्वम्भर राय का विशाल वाहन है। उस जमाने में बल्कि—अभी दो वर्ष पहले भी देश-विदेश के पथिक बादशाही सड़क पर विशाल सफ़ेद घोड़े की पीठ पर सिर पर पगड़ी बाँधे गौरवर्ण वीर आरोही को देख कर इस देश के लोगों से पूछते थे—ये कौन हैं जी?

लोग कहते—हमारे राजा—विश्वम्भर राय हैं। बहुत बड़े शिकारी हैं, शेर मारना उन का शौक है।

अनिश्चित पथिक भय-श्रद्धा से आँख उठा कर देखता—सफ़ेद घोड़ा अपने आरोही को ले कर दूर दिशा में उड़ चुका है। दूर केवल एक धूल

की कुण्डली उड रही है, मानो एक विक्षिप्त चक्रवात घूमता-घूमता दिगन्त मे मिलने के लिए दौडा है। विशाल तूफ़ान प्रतिदिन भोर मे विश्वम्भर राय को ले कर बाहर निकलता था। दो वर्ष पूर्व जिस दिन महाजन गागुली लोगो ने समारोह के साथ ग्राम-ग्राम मे ढोल-शोहरत के द्वारा दखल की घोषणा की, उसी दिन से दिखाई पडा—तूफान की पीठ सवार शून्य है, निताइ साईस लगाम पकड कर तूफान को टहला कर ला रहा है।

नायब ताराप्रसन्न ने एक दिन कहा था—इतने दिन का अभ्यास छोडने मे आप की तबीयत···

विश्वम्भर की दृष्टि देख कर ताराप्रसन्न बात समाप्त न कर सके।

राय ने दो शब्दो मे उत्तर दिया—छि. ताराप्रसन्न !

अनन्त नीचे जा रहा था। विश्वम्भर ने फिर बुलाया—सुनो।

अनन्त लौटा।

राय ने कहा—निताइ कल कह रहा था, तूफान शायद दाना पूरा पा नहीं रहा है।

अनन्त ने कहा—चने की फसल अब की अच्छी नहीं हुई, इसलिए नायब बाबू ने कहा।

—हूँ।

पुन फरशी मे दो-चार बार कश ले कर कहा—तूफान क्या बहुत दुबला हो गया है ?

अनन्त ने मृदु स्वर मे कहा—नहीं। उतना नहीं···

—हूँ।

थोडी देर बाद फिर बोले—दाना पूरा देना, समझा ? नायब को मेरा नाम ले कर कहना। तू जा, निताइ को बुला दे।

अनन्त चला गया। तकिये के ऊपर टेक लगा कर मुँह ऊँचा कर विश्वम्भर बाबू आकाश की ओर देखते रहे। फ़रशी की नली हाथ मे पडी रही। आकाश के तारे एक के बाद एक बुझते जा रहे थे। विश्वम्भर ने शायद अनमने हो कर अपने चौडे सीने पर हाथ फेरना शुरू किया—हाय, दो। पहले दिन तूफान की पीठ पर सवार होते समय इसी सीने मे ही धक्का लगा था। उस दिन तूफान का कितना भयंकर रूप था। काश वह केवल

जलसाघर

बाजे के शब्द से होता था। बाजा बजने पर उस ने कभी बेताल पैर नहीं डाला। गरदन मोड़ कर उस का नृत्य देखने लायक होता था।

विश्वम्भर बाबू उठ खड़े हुए। अतीत की स्मृति तारासमूह की तरह रायवंश की मर्यादारूपी सूर्य-प्रभा में छिपी रहती है। आज ममता की छाया से उस सूर्य में अचानक ग्रहण लग गया। स्मृति का उज्ज्वलतम तारा—तूफान उस आकाश में सब से पहले जल उठा। आज दो साल से वे नीचे नहीं उतरे थे। दो साल बाद तूफान को देखने की इच्छा हुई। खड़ाऊँ पैर में डाल कर राय दुतल्ले पर उतरे। चौक मिले मकान का विस्तृत बरामदा राय के बलिष्ठ पैर के खड़ाऊँ के शब्द से मुखरित हो उठा। बरामदे के खम्भों के सिरे पर खिड़की से कुछ चकित कबूतर फड़फड़ा कर उड़ गये। इधर अंधेरे तालाबन्द कमरों के भीतर भी चमगीदड़ का शब्द सुनाई पड़ रहा था। छत की सीढ़ी के पास ही सोने का कमरा है। रुई का टुकड़ा बरामदे में पड़ा है। उस के बाद ही एक दुर्गन्ध आती है। यह जमीनपोश रखने का कमरा है। कालीन, दरी, गलीचा इस कमरे में रहता है। शायद कुछ सड़ा होगा। बगल के कमरे में चमगीदड़ के पंख के शब्द के साथ झुनझुन शब्द उठ रहा है। यह बत्तीघर है। बेलवारी झाड़ के कलम शायद हिल रहे हैं। इस के बाद ही इस ओर का कोने का कमरा है फ़र्शीवरदार का। इन सब वस्तुओं का भार उस के ऊपर था। यह कमरा खाली पड़ा है।

पूर्व की ओर राय मुड़ गये। यह अमीर भूमिधरों का महल है। राय के दफ्तर में विभिन्न ज़िले के बड़े-बड़े धनी भूमिधर थे। पाँच सौ से पाँच हज़ार रुपया लगान देने वाले भूमिधरों का अभाव नहीं था। उन के आने पर यहाँ उन को ठहराया जाता था। बरामदे की दीवाल पर बड़े-बड़े चित्र टँगे हैं। मुख उठा कर राय ने एक बार देखा। पहले में तसवीर नहीं है, शीशा नहीं है, केवल फ्रेम लटक रहा है। दूसरे का शीशा नहीं है तीसरे चित्र का स्थान शून्य है। एक दीर्घ श्वास ले कर राय फिर सिर नीचा कर चलने लगे। ऊपर कबूतर निरन्तर गूँज रहे थे। पूरब की ओर बरामदे के छोर पर ही सीढ़ी है। सीढ़ी से राय नीचे उतरे। कचहरी घर रायवंश के ढेरों कागदों से भरा है।

सात नावों का इतिहास है। विश्वम्भर राय जमीदार रायवंश के
सप्तम पुरुष हैं। अँधेरे में राय थोड़ा हँसे। उन को रायवंश के आदि-पुरुष
की बात याद आयी। वे कहते थे शायद, लक्ष्मी को बाँधने के लिए सरस्वती
की दया चाहिए। कागज पर स्याही की टिकियों का साँकल बड़ा कठिन
बन्धन है। हिसाब-किताब ठीक रखो—चंचला के हिलने की क्षमता भी
नहीं रहेगी। व थे नवाब के दरबार के कानूनगो।

कागज, कलम, स्याही सब कुछ है पर लक्ष्मी चली गयी है। बरामदे
के आखीर में एक कुत्ता कहीं अँधेरे में सोया था, वह भौंक उठा। राय
परवा न कर के आगे बढ़ गये। कुत्ते का भौंकना बन्द हो गया। वह पूँछ
हिला कर घूम-घूम कर बार-बार राय की प्रदक्षिणा करता हुआ उन के
साथ चलने लगा। कुत्ते को शौकिया किसी ने पाला नहीं था। रायमहल के
उच्छिष्टभोजी कुत्तों की कोई सन्तति थी यह।

कचहरी का चौगट लाँघ कर दायीं ओर गोशाला और बायीं ओर
अस्तबल है। उस के उस ओर देवमन्दिर है।

राय ने बुलाया—निताइ!

सम्भ्रम सहित उत्तर आया—हुजूर!

तूफान की तेज हिनहिनाहट में वह उत्तर सुनाई न पड़ा। उधर से एक
हाथी का गर्जन सुनाई पड़ा।

राय आगे बढ़ कर तूफान के सामने आ कर खड़े हो गये। चंचल हो
कर पैर ठोक कर वृद्ध तूफान शिशु की तरह हो गया। उस के मुख पर हाथ
फेर कर राय ने कहा—बेटा!

तूफान मालिक के हाथ पर सिर घिसने लगा। उधर हाथी भी चंचल
हो उठा था। लगातार झुला कर वह पैर का साँकल तोड़ने की कोशिश कर
रहा था। महावत रहमत स्वामी की आवाज सुन कर उठ कर आ कर
अपने हाथी के पास खड़ा था। उस ने धीमे शिकायत के स्वर में कहा—
हुजूर, छोटीगिन्नी साँकल तोड़ डालेगी।

हथिनी का नाम छोटीगिन्नी है। विश्वम्भर की माँ के विवाह की
दहेज है यह छोटीगिन्नी। तब नाम था मणि। किन्तु मालिक धनेश्वर राय
शिकार में लौट कर मणि कहते पागल हो उठे। मणि ने एक शेर को सूँड़ से

पकड़ कर पैर से रौंदा था। मति के प्रति प्यार का आधिक्य देख कर विश्वम्भर की माँ ने उस का नाम रखा था सौत। मालिक ने कहा था, यही ठीक है रायगिन्नी, उस का भी नाम 'गिन्नी' रहे।

विश्वम्भर बाबू की माँ ने कहा था—केवल गिन्नी नहीं—छोटीगिन्नी, वह तुम्हारी दूसरी शादी की स्त्री है।

रहमत की बात पर विश्वम्भर बाबू तूफ़ान को छोड़ कर छोटीगिन्नी के पास गये। पीछे तूफ़ान का असन्तुष्ट हेषारव ध्वनित होने लगा। राय ने छोटीगिन्नी से कहा—क्या है माँ लक्ष्मी? छोटी गृहिणी ने अपना सूंड टेढ़ा कर राय के सम्मुख रखा। यह उन को सवार होने के लिए अनुरोध था। राय हाथी पर चढ़ते थे सूंड द्वारा।

राय उस की सूंड पर हाथ फेर कर बोले—अभी नहीं माँ! छोटीगिन्नी ने अर्थ समझा। वह सूंड राय के कन्धे पर रख कर सीधी बच्ची की तरह ही शान्त खड़ी रही। राय ने कहा—निताइ, तूफ़ान को घुमा ला।

अत्यन्त संकोच के साथ निताइ ने कहा—तूफ़ान अब जायेगा नहीं आज हुजूर! आप को देखा है, आप के सवार न होने पर...

राय ने इस बात का कोई उत्तर न दिया। छोटीगिन्नी की सूंड पर हाथ फेरते हुए बोले—माँ मेरी बड़ी सीधी लड़की है।

अचानक शान्त उषाकाल की स्तब्धता को तोड़ कर विचित्र संगीत में कहीं बैण्ड बज उठा। चकित राय छोटीगिन्नी का सूंड उतार कर खिसक के आ कर बोले—बैण्ड कहाँ बज रहा है?

निताइ ने धीमे स्वर में कहा—गांगुलीघर में बाबू के लड़के का अन्नप्राशन है।

अभ्यास के अनुसार राय ने कहा—हूँ।

तूफ़ान ने तब गरदन टेढ़ी कर ताल-ताल पर नाचना शुरू किया था। राय थोड़ा हँस कर उस के पास जा कर खड़े हुए। पीछे छोटी गृहिणी के पैर की साँकल भी ताल-ताल पर नूपुर की तरह बज उठी थी—झुम-झुम-झुम।

राय चौपट सौंप कर अँधेरे महल में जा कर घुसे। उन को लगा—कभी भोर के रोशनचौकी के साथ ही इसी तरह से नित्य

करते थे—एक ओर तूफान, दूसरी ओर छोटीगिन्नी।
दुतल्ले पर उठ कर उन्होंने बुलाया—अनन्त!
—हुजूर!
—नायब को बुला दे।
राय छत पर जा कर बैठे। प्रौढ़ नायब ताराप्रसन्न के आ कर चुप-
चाप सामने खड़े होते ही उन्होंने कहा—महिम गांगुली के लड़के का अन्न-
प्राशन्न है?
—जी हाँ।
—शायद निमन्त्रण आया है?
कुण्ठित हो कर ताराप्रसन्न ने कहा—हाँ।
—एक गिन्नी और एक थाली—एक काँसे की थाली ही भिजवा
देना।
ताराप्रसन्न चुपचाप खड़े रहे। प्रतिवाद का साहस उन में नहीं था।
किन्तु यह इन्तज़ाम भी सन्तोषजनक नहीं हुआ।
राय ने कहा—एक मोहर मेरे पास से ले जाना।
नायब चला गया। राय चुपचाप बैठे रहे। अनन्त आ कर हुक्का बदल
कर नली पकड़ कर बोला—हुजूर!
राय ने अभ्यास के अनुसार हाथ आगे कर दिया। उस के बाद
कहा—छोटी गृहिणी की पीठ की गद्दी, कालीन, घण्टा निकाल देना।
नायब गांगुली के घर सामाजिकता करने जायेंगे।
पहले तीन पुरखों में रायों ने संचय किया था। चतुर्थ ने राजत्व किया
था। पंचम और षष्ट पुरुष ने किया भोग और ऋण। सप्तम पुरुष विश्वम्भर
के ज़माने में राय-घराने की लक्ष्मी ऋणसमुद्र में डूब गयीं। विश्वम्भर
लक्ष्मीहीन देवराज की तरह केवल बैठे-बैठे देखते रहे। केवल यही नहीं।
रायवंश का इस सातवें पुरुष में निर्वंश भी हो गया। ज़िले के जजकोर्ट व
हाईकोर्ट के विचार के निर्देशानुसार रायवंश की लक्ष्मी तब रिटायर्ड हाथ
में थीं। घर पर पड़ी थीं। प्रतीक्षा थी केवल प्रिविकाउंसिल के आदेश
की।
पुत्र के उपनयन के अवसर पर रायगुरु विकास उत्सव के मुखरित हो
जलसाघर

उठा था। दान-भोजन, विलास-व्यसन पूर्णिमा के ज्वार की तरह बढ़ उठा था। उस के बाद ही प्रारम्भ हुआ भाटा। भाटा के खिंचाव में रायवंश का सारा प्रवाह समाप्त हो गया था। सातवें दिन विलास विष हो उठा। घर में हैजा का प्रकोप हुआ। उस के बाद सात दिन के बीच में रायगिन्नी, दो पुत्र, एक कन्या, कुछ सम्बन्धी सब समाप्त हो गये। केवल विश्वम्भर राय भगस्त्य प्रत्यावर्तन की प्रतीक्षा की तरह सिर झुकाये मृत्यु की प्रतीक्षा करते बैठे रहे।

गलत कहा गया। मृत्यु की प्रतीक्षा उस दिन से कर रहे थे कि नहीं कौन जाने, किन्तु नतशिर हुए और भी दो साल बाद। जिस दिन प्रिवि-काउन्सिल के फ़ैसले का पता चला—उस दिन। नहीं तो स्त्री-पुत्र-कन्या की मृत्यु के बाद भी इस घर के उत्सव-गृह में रोशनी हुई है, सितार-सारंगी और घुंघरू बजे हैं। विराट् हास्यध्वनि से अन्धकार रात्रि चकित-चमत्कृत हो उठी है। छोटी गृहिणी की पीठ पर शिकार का हौदा चढ़ा है। तूफ़ान ने उस दिन भी रोष और क्षोभ से बन्धन तोड़ा है।

ख़ैर, प्रिविकाउन्सिल के फ़ैसले से रायवंश की भू-सम्पत्ति सब समाप्त हो गयी। रह गया मकान व सायरराज का स्थायी बन्दोबस्त मात्र। राय-वंश के आदिपुरुष ने कागज-कलम से इतने को ऐसा बाँधा था कि उसे छूने की क्षमता किसी की भी नहीं हुई। उसी बन्दोबस्त से ही देवसेवा होती है, छोटीगिन्नी का निश्चित चावल आता है, रहमत को वेतन दिया जाता है। शरीर में अभी भी जो कुछ है वह उसी बन्दोबस्त के ही कल्याण से। हर महीने के प्रारम्भ में ही चावल आता है—महीने भर का बादशाहभोग चावल, प्रतिदिन प्रातः सायरराज तालाब से बन्दोबस्त के कारण मछली आती है, उसी तालाब में ही जलचर पक्षी के बन्दोबस्त के फलस्वरूप पक्षी आता है। यह सब अतीत है पर स्मरणातीत नहीं। इसी कारण उसी टूटे-फूटे हुए राजमहल का नाम अब भी राजमहल है, धनहीन विश्वम्भर राय का नाम ही इस इलाक़े में राय हुजूर है।

यही है नये अमीर गांगुली बाबुओं के क्षोभ का कारण। उन्होंने सारे रुपयों की क़लम से सोने की दीवाल खड़ी की थी। दुनिया उन सारे रुपयों को ही देखती थी, सोने की दीवाल की ओर कोई देखता भी नहीं। उन के

कीमती मोटर से बूढ़ा छोटीगिन्नी की खातिर अधिक है।

महिम गांगुली सोचता है—इस मन्ने हाथी को हमें हटाना ही है।

छोटीगिन्नी की पीठ पर घण्टा बंधते ही वह गर्विणी की तरह अपना शरीर हिलाने लगी। घण्टा बजने लगा—टन्-टन्-टन्।

नायब ताराप्रसन्न आ कर विश्वम्भर बाबू के सामने खड़े हो गये। विश्वम्भर बाबू अन्दर के हॉल-कमरे में बैठे थे। अब यही एक कमरा वे काम में लाते हैं। दीवाल पर रायवंश के मालिक-मालकिनों का चित्र टंगा था। सब की प्रौढ़ावस्था की तसवीर है। सब के शरीर पर काली माता की नामावली है, गले में रुद्राक्ष की माला और हाथ में जपमाला है। विश्वम्भर बाबू उसी तसवीर की ओर देख रहे थे। नायब को देख कर धीरे-धीरे आंख फेर कर बोले—अनन्त, हाथ-बक्स दे तो।

हाथ-बक्स से लोहे के सन्दूक की चाभी ले कर सन्दूक उन्होंने खोल डाला। सन्दूक के ऊपरी स्तर पर रायघराने की लक्ष्मी का पिटारा सुशोभित था। नीचे दो-तीन बक्स थे। राय ने एक अत्यन्त सुन्दर बक्स खींच निकाला। यह उन के मृत पत्नी के गहने का बक्स है। राय ने बक्स खोला। उस का गर्भ करीब शून्य ही था। अलंकारों में एक सींथ-टीका बच रहा था। यह टीका मात्र पुरखों के वधूवरण की मांगलिक सामग्री है। इस के सिवा सब गहना जा चुका है। बगल के एक हिस्से में कुछ मोहरें रखी थीं। इस में से कुछ रायगिन्नी के आशीर्वाद की मोहर हैं, कुछ युवक विश्वम्भर का पत्नी को प्रथम उपहार। विवाह के साल ही वे पहली बार दौरे पर गये। नजराने की मोहरों में से कुछ उन्होंने पत्नी को उपहार में दिया था। उसी में से एक उन्होंने नायब के हाथ पर चुपचाप रख दिया। नायब चला गया।

कुछ देर बाद ही छोटीगिन्नी के घण्टे का शब्द तेज हो गया। राय आ कर खिड़की पर खड़े हुए।

छोटीगिन्नी के माथे पर तेल दिया गया है। ललाट के [illegible] प्रान्त पर सिन्दूर की रेखा है। छोटीगिन्नी हिलती-डुलती चल रही है।

सामने [illegible] गांगुली बाबू का चमचमाता मोटर आ कर रायमहल की टूटी देहलीज पर खड़ा हो गया। गाड़ी से उतर महिम गांगुली उतरे।

[illegible]

नायब ताराप्रसन्न जल्दी-जल्दी बाहर आ कर सादर स्वागत करते हुए बोले—आइए-आइए।

अनन्त ने भी दुतल्ले से यह घटना देखी थी। वह जल्दी-जल्दी नीचे आ कर रायमहल के खास बैठक का किवाड़ खोल कर चला गया।

महिम ने कहा—दादा जी कहाँ हैं—भेंट करनी है।

गांगुली वंश ने ज़माने से राय-दफ़्तर के इलाके में महाजनी की है। महिम के पिता जनार्दन तक ने रायवंश के मालिक को हुज़ूर कहा है। ताराप्रसन्न महिम के बात करने के तरीके से असन्तुष्ट हो उठा था। लेकिन शान्त स्वर में बोला—हुज़ूर अभी उठे नहीं। खा कर सोये हैं।

महिम ने कहा—बुला कर उठाने को कह दीजिए।

ताराप्रसन्न ने सूखी हँसी हँस कर कहा—वह साहस हम में से किसी में नहीं है। न हो आप मेरे से कह जाइए क्या कहना होगा, मैं कह दूँगा।

असहिष्णु हो कर महिम ने कहा—मुझे भेंट करना ही है।

अनन्त ने आ कर चाँदी के गिलास में महिम के सामने शर्बत रखा। गिलास ले कर महिम ने अनन्त से पूछा—दादा जी उठे हैं?

—उठे हैं। आप की सूचना दी है। आप को वे बुला रहे हैं। शर्बत पी कर महिम उठते हुए बोले—वाह, बड़ी अच्छी खुशबू है! किस चीज़ का शर्बत है रे?

अनन्त झूठ बोला—जी, काशी का मसाला है, मुझे ठीक पता नहीं। दुतल्ले के कमरे में घुसते ही महिम ने कहा—कहाँ दादा जी, आप खाना खाने नहीं गये?

विश्वम्भर ने हँस कर कहा—आओ-आओ, भाई!

महिम ने कहा—मुझे बड़ा दुख पहुँचा है दादा जी!

उसी तरह हँस कर विश्वम्भर ने कहा—दादा जी को बुड्ढा जान दूर रखो भाई! बुड्ढा हूँ, नियम का उल्लंघन शरीर को नहीं सहता।

महिम ने कहा—वह दुख तो भूल जाऊँगा, पर रात अपमान ही होगा।

विश्वम्भर गुड़गुड़ा पीने के बहाने मौन रहे।

महिम बोलता गया—बड़ी तमन्ना से लखनऊ से ...

है, उस के गाने की कद्र आप के बिना हम लोग नहीं समझेंगे।

कुछ देर चुपचाप तम्बाकू पी कर हुक्का की नली राय ने रख दिया। उस के बाद बोले—भाई महिम, मेरी तबीयत बहुत खराब है, हृदय में एक दर्द उठता है इधर बीच, वह बीच-बीच में मुझे बहुत परेशान कर डालता है।

महिम कुछ देर चुप रह कर बोले—अच्छा, चलूं दादा जी! मुझे एक बार सदर जाना है। साहबों को ले आना है, वे सब आयेंगे न?

विश्वम्भर ने केवल कहा—दुःख मत करो भाई!

महिम कमरे से बाहर निकल आये। बरामदे में एक बार खड़े हो कर सहसा बोल उठे—घर को क्या बना रखा है दादा जी! मरम्मत की जरूरत है न?

उस बात का किसी ने उत्तर नहीं दिया।

अनन्त केवल बोला—आइए हुजूर!

गांगुलीघर में नाच की बैठक प्रकाश में चमक रही थी। चंदोवे के चारों ओर नाना रंग के बल्ब जल रहे थे। गांगुलियों का अपना डायनमो था। इलेक्ट्रिक तार की लाइन खड़ा कर बिजली की व्यवस्था की गयी है। खूंटियों को पेड़ की पत्तों व फूल से सजाया गया था। रंगीन कागज की माला चारों ओर से झूल रही थी। नीचे दरी पर चादर बिछा कर बैठक लगी है। एक ओर कनात में कुरसियां लगी हैं, दूसरी ओर बिल्कुल किनारे पर साधारण श्रोताओं का स्थान था। थोड़ी ही दूरी पर महिलाओं का आसन था।

रात आठ बजे ही बैठक भर गयी। तबलची, सारंगी वाले अपने-अपने यन्त्रों को कस रहे थे। पश्चिम की तरफ नर्तकी अलंकारों से सज्जित हो कर आ बैठी। बैठक का कोलाहल क्षण में शान्त हो गया।

गाना आरम्भ हुआ। उधर कुरसी पर विशिष्ट श्रोताओं में महिम गांगुली बैठे थे।

दो नर्तकियों में से बड़ी ने उठ कर गाना आरम्भ किया था। रागिनी के दीर्घ आलाप ने बैठक मानो बेजान-सा हो गया। श्रोताओं में धीरे-धीरे बातचीत होने लगी। विशिष्ट श्रोतागणों में किसी बात पर हास-परिहास

चल रहा था। गांगुलियों का चपरासी का दल साधारण श्रोता के पीछे आ कर चुपचाप कहने लगा।

गाना समाप्त होने के प्रारम्भ में महिम सम्भ्रमावश बोल उठे—वाह-वाह!

नर्तकी की नृत्यगति ज़रा धीमी हो गयी। गाना समाप्त कर वह बैठ गयी। तरुणी के साथ थोड़ा मुसकरा कर कुछ बात कर के अब उस को उठने का इशारा किया।

देखते-देखते सभा जम गयी। चपल गति के कण्ठसंगीत और चपल-नृत्य से मानो एक पहाड़ी झरना सभा के मध्य में कूद पड़ा। तारीफ़ों के पुल से सभा में एक शोर मच उठा। विशिष्ट श्रोतामहल से रुपया, नोट का पुरस्कार आया।

उस के बाद फिर-फिर वही। सभा फिर बेजान नहीं हुई। सभा-समाप्ति पर महिम ने बुला कर कहा—सब बहुत खुश हुए हैं।

सलाम कर के ज्येष्ठा ने कहा—आप की मेहरबानी।

सच महिम की मेहरबानी का अन्त नहीं था। तीन दिन के बयाने के स्थान पर पाँच दिन तक गाना हुआ।

विदाई के दिन और भी मेहरबानी उन ने की। विदा कर के कह दिया—यहाँ हम लोगों का राजमहल है, एक बार हो जाना। विश्वम्भर राय समझदार अमीर व्यक्ति हैं। शायद गाना हो सकता है।

ज्येष्ठा ने सम्भ्रम से कहा—उन की बात हम ने सुनी है हुज़ूर, राय-बहादुर के दरबार में ज़रूर जाऊँगी। यह इच्छा मेरी बहुत दिनों से है।

ताराप्रसन्न मन-ही-मन आगबबूला हो उठा। उस ने खूब समझा था—यह उस कुटिल महिम गांगुली की कूट चाल है। आखिर में एक वेश्या द्वारा अपमान की कोशिश की है। उस ने गम्भीर हो कर कहा—बाबू की तबीयत ठीक नहीं—नाच-गाना अभी नहीं होगा।

ज्येष्ठा ने कहा—मेहरबानी कर के…

रोक कर ताराप्रसन्न ने कहा—यह नहीं होगा।

बाई जी ने दुखित हो कर कहा—मेरे नसीब!

वे लोग उठने की तैयारी करने लगीं।

इतने में दुतल्ले से पुकार आयी—ताराप्रसन्न !

ताराप्रसन्न के आते ही विश्वम्भर ने कहा—ये कौन हैं ?

सिर झुका कर ताराप्रसन्न ने कहा—गांगुलियों के घर ये ही लोग मुजरा करने आये थे।

—हूँ।

उस के बाद थोड़ा रुक कर बोले—थाला को लौटा दिया ?

—हुजूर को सलाम पहुँचे। मुसलमानी कायदे से फर्शी सलामी दे कर बाई जी सामने आ कर खड़ी हुईं।

कचहरी घर से इस ओर बरामदे व कमरे का थोड़ा हिस्सा दीखता है। विश्वम्भर का कण्ठस्वर सुन कर बाई जी उठ आयीं।

बिना इत्तला के ऊपर चढ़ आने से विश्वम्भर नाराज हुए थे, पर उन का यह गुस्सा टिका नहीं। बाई जी के सौन्दर्य ने उन का चित्त कोमल कर डाला।

बाई जी ने फिर सलाम कर के कहा—कुसूर माफ करने का हुक्म हो मेहरबान, बिना इत्तला आ पड़ी हूँ।

विश्वम्भर बाई जी का सौन्दर्य देख रहे थे। अनारदाने की तरह रंग, सुरमा लगी बड़ी दो आँखें—मादकता भरी नजर, गुलाब की पंखुड़ी की तरह दो ओठ, थोड़ा लम्बा बदन, क्षीण कटि, नृत्य ने मानो आलस्यवश उस के शरीर में विश्राम लिया है। इस के चपल होते ही यह मुखर हो उठेगा।

विश्वम्भर ने प्रसन्न हास्य के साथ कहा—बैठिए।

निकट के गलीचे पर बाई जी सम्भ्रम सहित बैठ कर बोलीं—हुजूर बहादुर के दरबार में बाँदी गाना सुनाने को हाजिर है।

विश्वम्भर कहना चाहते थे—उन की तबीयत खराब है। पर कुछ लज्जा-सी हुई, एक तवायफ के सामने झूठ बोलने में शायद घृणा हुई।

बाई जी ने कहा—सब के मुँह से सुना है, यहाँ हुजूर बहादुर बड़े समझदार हैं।

तादुर्रा बाबू ने भी कहा—अमीर, यहाँ के राजा आप हैं।

राय के हुक्के की आवाज बन्द हो गयी। मृदु हँस कर बाई जी के कुछ

की ओर देख कर बोले—शाम के समय मुजरा होगा।—उस के बाद बुलाया—अनन्त !

अनन्त बाहर ही था। सामने आते ही बोले—इन लोगों को ठहरने की जगह दो। नीचे तालुकेदार का एक कमरा खोल दो।

अनन्त ने कहा—आइए।

अनन्त का अनुसरण कर के वह चली गयी।

नायब ताराप्रसन्न खड़ा था। निर्वाक् हो कर वह खड़ा ही रहा। थोड़ी देर बाद उस ने कहा—गांगुली बाबू के यहाँ सौ रुपया एक रात का लिया है उन लोगों ने।

—हूँ।

कुछ बार कश लगा कर राय ने कहा—तुम्हारे खाते में कितना··· बात असमाप्त रख कर उन्होंने फिर हुक्का पीना शुरू किया। ताराप्रसन्न ने कहा—देवोत्तर के खाते में केवल डेढ़ सौ के करीब है।

थोड़ी देर चिन्ता कर के राय ने उठ कर लोहे का सन्दूक खोल कर वही बक्स बाहर निकाला। बक्स के मध्य से रायवंश का मांगलिक मांग-टीका उठा कर ताराप्रसन्न के हाथ में दे कर कहा, देवोत्तर के खाते में खर्च लिखो—आनन्दमयी के लिए जड़ाऊ मांग-टीका खरीदा, मूल्य यही डेढ़ सौ रुपया।

आनन्दमयी रायवंश की इष्टदेवी पाषाणमूर्ति काली हैं।

बहुत दिन बाद शान्त रायमहल ताला खोलने के शब्द से मुखरित हो उठा। जलसाघर का खिड़की-किवाड़ खोला गया। रोशनी के कमरे का ताला खुला। कमीन-खोल के कमरे में प्रकाश का प्रवेश हुआ।

अनन्त घर-द्वार साफ़ कर रहा था। निताई व रहमत उन की सहायता कर रहे थे। ठाकुरद्वारे की पुरानी नौकरानी मल रही थी—बड़े-बड़े फ़ानूस, झुमझुम, गुलाबपाश, इत्रदान। नायब ताराप्रसन्न खड़े हो कर सब ओर का मुआइना कर रहे थे।

अनन्त ने कहा—नायब बाबू, शहर आदमी भेजना होगा।

नायब ने कहा—मैं ने लिस्ट बनाया है। सुनो, देखूँ कुछ छूटा हूँ कि नहीं! लिस्ट सुन कर अनन्त ने कहा—सब है, केवल दो चीज छूटी है।

दो तोला के करीब इत्र और विलायती बोतल कुछ।

नायब ने कहा—एक तो था।

—उस में अब थोड़ा ही है। बीच बीच में थोड़ा-थोड़ा पीते हैं न। लेकिन आज यदि मांगें, तो एक बोतल में न होगा नायब बाबू!

नायब ने कहा—लेकिन भेजूं किसे? पैदल जा कर शाम के पहले क्या कोई लौटेगा?

अनन्त ने हिचकिचा कर कहा—तूफान को ले कर निताइ ही न हो आवे।

निताइ ने कहा—हुजूर के हुक्म न करने से···

नायब ने कहा—अच्छा, मैं कह आता हूँ।

विश्वम्भर बाबू सोये थे। नायब के जा कर खड़े होते ही बोले—तुम्हें बुलाने की सोच रहा था। एक बार गांगुलीघर जाओ। महिम को निमन्त्रण कर आओ। और गाँवों में बड़े-बड़े लोगों को चुन-चुन कर निमन्त्रण करना होगा। गांगुलीघर तुम स्वयं जाओ।

नायब ने कहा—वही होगा।

राय ने कहा—छोटीगिन्नी की पीठ पर गद्दी देने को कहो।

नायब ने कुछ देर प्रतीक्षा कर के कहा—तूफान को ले कर निताइ को शहर भेजना जरूरी है।

—हूँ।

थोड़ी देर बाद राय बोले—ठीक है जाये।

और थोड़ी देर बाद तूफान की हिनहिनाहट सुन कर राय ने सामने की खिड़की खोल दी। पर के पीछे से देवदारु छाया से ढँके, रास्ते की लिखी सड़क दिखाई पड़ती है। घोड़े के खुर का शब्द उस सड़क पर बज उठा। वैसी ही दृप्त गरदन, वैसा ही पदक्षेप।

और थोड़ी देर बाद छोटीगिन्नी की पीठ का घण्टा बज उठा। राय उठ बैठे। खिड़की से देखा, हथिनी छोटीगिन्नी चली जा रही है। राय बिस्तर छोड़ कर कमरे की भूमि पर टहलने लगे। देह-मन उन का चंचल हो उठा है।

समारोह! रायमहल में दीर्घकाल बाद समारोह हो रहा है।

उधर के जलसाघर से ही शायद शब्द आ रहा था—ठुन,—ठुन,—ठुं, णं। बेलवारी झाड़ का शब्द। राय कमरा छोड़ कर बरामदे में निकल पड़े। अनन्त झाड़-दीवालबत्ती हर हुक में टँग रहा था। आवाज सुन कर द्वार की ओर उस ने देखा। द्वार पर विश्वम्भर राय खड़े थे। वे देख रहे हैं—दीवाल की तसवीरों की ओर। विराट हॉल-कमरे में चारों ओर की दीवाल पर रायवंश के मालिकों की युवावस्था की तसवीर लटक रही है। आदिपुरुष भुवनेश्वर राय से ले कर उन की अपनी भी—सब की विलास-भोग तसवीर। प्रपितामह रायणेश्वर राय खड़े हैं—शिकार किये शेर पर पैर रख कर, हाथ में है बल्लम, पीठ पर ढाल। पिता धनेश्वर गद्दी पर बैठे हैं, बगल में छोटीगिन्नी। युवक विश्वम्भर तूफ़ान पर सवार हैं।

रायवंश इस कमरे में आँधी के समान खेल खेल गया है। राय को कितनी बात याद आयी। प्रचण्ड रावणेश्वर इस वंश के प्रथम भोगी पुरुष रहे। उन्होंने ही यह जलसाघर बनवाया था। किन्तु भोग करने का साहस उन्हें नहीं हुआ। पहले जिस दिन इस कमरे में मजलिस बैठी, उसी दिन रावणेश्वर के स्त्री-पुत्र सब ख़तम हो गये। बत्तीदान की बत्ती आधी जल कर ही बुझ गयी। उस के बाद फिर उन्होंने साहस कर के जलसाघर का द्वार नहीं खोला।

उसी दिन रायवंश की समाप्ति हो जाती तो अच्छा था। किन्तु रावणेश्वर ने रायवंश की ममता में पुनः अपनी साली के साथ विवाह किया। वे कहते—यह उन को आनन्दमयी का आदेश है। उन्हीं के पुत्र तारकेश्वर राय ने इस जलसाघर का किवाड़ खोल कर पुनः रोशनी की थी। उन्होंने एक रात में इसी कमरे में एक अमीर मित्र के साथ प्रति-योगिता कर के पाँच सौ मोहर एक बाई जी को बख़्शीश दिया था। उन को अपनी बात भी याद आयी—चन्दा, चन्दाबाई! सभा ख़तम होने के बाद मित्रों में छिपा कर चन्दा के साथ दोस्ती हृदय में अमर है। फूल के गुच्छे की तरह थी चन्दा।

अनन्त के हाथ का काम बन्द हो गया। मालिक के मुख की ओर देख कर उस का हाथ हट नहीं रहा था। राय का मुख गम्भीर और लाल था—मानो किसी बन्द शिरा का मुख आज खुल कर रक्त खून की धारा

उछल कर निकल आयी हो।

सन्ध्या के पहले अनन्त ने परात के ऊपर चाँदी के गिलास में शर्बत रख कर राय के सामने चुपचाप रखा। राय ने देखा—अनन्त के शरीर पर ज़रीदार चोबदारों की वर्दी, कमर में पेटी, सिर पर पगड़ी, सीने पर राजघर का बिल्ला है। उन्होंने चुपचाप गिलास उठा लिया। अनन्त चला गया। कुछ देर बाद लौट कर सामने चुन्नटदार धोती, सफ़ेद महीन मुसलमानी कुरता और रेशम का चादर उतार रखा। राय ने पहचाना, पाँच साल पहले मुर्शिदाबाद के ज़मींदार मित्र के घर जाने के लिए यह पोशाक बनवाई गयी थी।

पूछा—सब ठीक है?

मृदुस्वर में अनन्त ने कहा—रोशनी की जा रही है।

—आदमी?

अनन्त ने कहा—नायबराजदार के भण्डारी बाप-बेटे आये हैं। चार सिपाही आये हैं, वे देहली पर हैं।

नीचे मोटर का हॉर्न सुनाई पड़ा।

अनन्त शीघ्र नीचे उतर गया। महिम गांगुली आये हैं। सीढ़ी पर चलने-फिरने का शब्द सुनाई पड़ रहा था। नीचे की मंज़िल पर अतिथि-सत्कार का सादर सम्भाषण सुनाई पड़ रहा था, परस्पर वार्तालाप का गुंजन उठ रहा था। क्रमशः जलसाघर में तारयन्त्र का मृदु स्वर ध्वनित हुआ। तार कसा जा रहा है।

अनन्त ने आ कर किवाड़ के पास खड़े हो कर सुनाया—हुज़ूर! विश्वम्भर वेष बदल कर कमरे में टहल रहे थे। बोले—हूँ!

—सभा जम नहीं रही है।

—हूँ।

कुछ मुहूर्त बाद बोले—सुरा दे।

अनन्त ने कमरे के बीच में खड़े हो कर ज़रा हिचकिचा कर चुपचाप कोने की टेबिल का दराज़ खोल कर बोतल और गिलास बाहर निकाला। दराज़ पर उसे उतार कर वह सुरा निकाल कर सामने बैठा। राय ए

बार रुक गये। फिर टहलने लगे। नीचे यन्त्र संगीत का स्वर क्रमशः ऊँचा उठ रहा था।

अनन्त ने कहा—हुजूर!

राय ने केवल कहा—हूँ।

फिर कुछ दफ़े वे घूमे। वह गति थोड़ी तेज थी। अनन्त प्रतीक्षा में खड़ा था। घूमते-घूमते राय टेबिल के किनारे खड़े हो कर ही बोले—सोडा।

विशाल हॉल के तीन ओर लम्बे टुकड़े की तरह गद्दी बिछा कर उस के ऊपर कालीन बिछा कर श्रोताओं के बैठने का स्थान निश्चित किया गया था। पीछे क़तार में तकिया था। हॉल की छत पर पास-पास तीन बेलवाली झाड़ में बत्ती जल रही थी। दीवार पर दीवालगिरी में बत्ती की रोशनी हवा से थोड़ी काँप रही है।

झाड़ और दीवालगिरी में से कुछ में शेड न रहने के कारण हवा से वे बुझ चुके हैं। दीवाल पर इसी कारण से बीच-बीच में छोटी-सी छाया दीर्घाकार में दिखाई पड़ रही है मानो प्रच्छन्न दुख हो।

सभा बैठ चुकी है पर गति अभी मन्द है। यान्त्रिक बाजे की झनकार अंकुर की तरह सुनाई पड़ रही है। चारों ओर बैठे तीस-चालीस गण्य धीरे-धीरे वार्तालाप कर रहे हैं। चार-पाँच गुड़गुड़े और फ़र्शी में तम्बाकू भरा जा रहा है। दोनों तवायफ़ें चुपचाप बैठी हैं। बीच-बीच में केवल महिम गांगुली का कण्ठस्वर सुनाई पड़ता है। सिगरेट का कश लगा कर वह बुझती हुई बत्ती की ओर देख कर उठा—कुछ बत्ती बुझ जो गयी भाई!—किसी ने इस बात का उत्तर नहीं दिया। उस ने बुलाया—माधव बाबू! ताराप्रसन्न के बिवाह के सामने खड़े होते ही वह बोले—सुनिए, रोशनी ठीक नहीं हो रही है। मेरे ड्राइवर से कह दीजिए, दो पेट्रोमैक्स ले आवे।

माधव चुप रहा। ज्येष्ठा नर्तकी ने केवल उर्दू में मानो स्वोक्ति करते हुए कहा—इस कमरे में वह रोशनी क्या शोभा देगी?

बाहर भारी पैर के जूते की आवाज़ से माधव पीछे मुड़ कर देख कर स्थान से हट गया। मुहूर्त बाद ही अनन्त के पीछे बिवाह के सामने आ

कर खड़े हुए विश्वम्भर राय। दोनों बाई जी सम्मान में खड़ी हो गयीं। मजलिस के सब उठ खड़े हुए। महिम भी अपने अनजान में आधे उठ कर अचानक फिर बैठ गये।

राय थोड़ा हँस कर बोले—मुझे जरा देर हो गयी। फिर उन्होंने आसन ग्रहण किया। तकिया खींच कर महिम ने खिसका दिया। जेब से रूमाल निकाल कर तकिया को कुछ दफा झाड़ कर विरक्त हो कर उस ने कहा—बाप रे बाप, कितनी धूल! ताराप्रसन्न हँसी घोंट गया। सारे गुड़गुड़ा-फर्शी का चिलम बदल कर राय के सामने उन की अपनी फर्शी रख कर अनन्त ने हाथ में नली पकड़ा दी।

बड़ी नर्तकी कोर्निश कर के उठ खड़ी हुई। संगीत प्रारम्भ हुआ। उसी दीर्घ धीर गति में रागिनी का आलाप। लेकिन एक वैचित्र्य था। आज सभा निस्तब्ध थी। राय आँख बन्द कर गम्भीर हो कर बैठे हैं। दीर्घ मन्थर गति की तुलना में उन की विशाल देह थोड़ी हिल रही है। एक बार उन के बायें हाथ ने बगल के तकिये पर एक मृदु आघात किया। ठीक उसी के साथ तबलची का तबला झंकार दे उठा। राय ने आँख खोली, बाई जी के पैर के घुंघरू से धीमी ध्वनि प्रारम्भ हुई थी। नृत्य प्रारम्भ हुआ। कजरारी का नृत्य। आकाश में मेघ देख कर उतावली मयूरी की तरह नृत्यरंगी है। गरदन थोड़ी टेढ़ी है। मयूर-पुच्छ की तरह ताल-ताल पर नाच रही है। घुंघरू की ध्वनि तेज हो उठी।

राय कह उठे—वाह!

साथ ही साथ नर्तकी की चरण चपलता शान्त हो गयी। उधर तबले पर समाप्ति का आघात हुआ।

महिम खिसक कर आ कर राय के कान में बोला—दादा जी, सभा जम नहीं रही है, ऐसा मुझे लगता है। कृष्णाबाई ने सब ठंडा कर दिया।

कृष्णाबाई थोड़ा हँसी—शायद उस ने समझा। अनन्त ने शर्बत ला कर महिम के सामने रखा। महिम ने कहा—रहने दो, कुछ दिन से रात जगने के कारण खुमार है मुझ को।

राय ने थोड़ा हँस कर अनन्त को इशारा किया।

अनन्त लौट कर एक परात में ह्विस्की, सोडा की बोतल और गिलास ले कर द्वार पर आ कर खड़ा हुआ।

पेय प्रस्तुत कर के अनन्त ने महिम को दिया और दूसरा गिलास उठा कर सभा की ओर देखा। सब सिर झुकाये बैठे थे। उन ने विश्वम्भर बाबू के सामने सम्मान के साथ पेय बढ़ा दिया। राय ने चुपचाप गिलास उठा लिया। महिम बहुत देर से छोटी नर्तकी को देख रहा था। सीधा हट कर बैठ कर बोला—पियारी बाई, तुम एक दफे आग फैला दो ज़रा।

पियारी ने गाना प्रारम्भ किया—तीव्र गति थी। राय आँखें मूँदे थे, एक बार अवसर से बोले—ज़रा धीरे से।

लेकिन अभ्यासवश पियारी ने चपल नृत्य और चपल संगीत से मजलिस में मानो फेन के अनगिनत बुलबुले उड़ा दिये। महिम बार-बार हँसने लगा—बहुत अच्छा!

राय साहब की भौंहें सिकुड़ गयी थीं। महिम का दर्प का उच्छ्वास उन्हें पीड़ित कर रहा था।

किन्तु फिर भी वे संगीतमुग्ध अजगर की तरह हिल रहे थे। शरीर में रायवंश की उग्र रक्त-धारा और वेगवती हो गयी थी। पियारी विचित्र वर्णशाली तितली की तरह नाच रही थी। पियारी को देख कर लखनऊ की जोहरा की बात याद आती है। कृष्णा के साथ सादृश्य किसी चन्द्राबाई का है। चन्द्राबाई उन के जीवन का एक अध्याय है। पियारी का नृत्य समाप्त हुआ। राय अतीत की बात सोच रहे थे। रुपये के शब्द से चिन्ता टूट गयी। महिम ने पियारी को इनाम दिया। महिम ने निमन्त्रण किया था। प्रथम इनाम देने का अधिकार गृहस्वामी का है। चकित हो कर राय ने सामने, बगल में देखा। सामने चाँदी का परात नहीं है, रुपया भी नहीं है। ज़मीन की ओर नज़र गाड़ कर वे बैठे रहे। कृष्णाबाई ने तब गाना प्रारम्भ किया। सभा के एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त तक लहर की तरह वह संगीत फैल रहा था। वह गा रही थी। उस के संगीत और नृत्य का उच्छ्वास अपूर्व था। राय सब भूल गये थे। गाना समाप्त हुआ। राय बोल उठे—बहुत अच्छा गाना!

बाँदी ने सलाम करके कहा—बाँदी का नाम कृष्णा बाई है। महिम

ने उधर से बुलाया, कृष्णा बाई थोड़ा इनाम इधर। राय उठ बैठे। धीरे-धीरे सभा से बाहर निकल गये। बरामदे पर से खाली पैरों की आवाज क्रमशः क्षीण हो कर समाप्त हो गयी।

महिम ने कहा—पियारी बाई, अब तुम्हारा एक और।

कृष्णा ने कहा—हुजूर बहादुर को आने दीजिए।

महिम ने कहा—वे आ रहे हैं, इस की क्या बात है! शायद वे आ रहे हैं।

राय नहीं—प्रवेश किया नायब ताराप्रसन्न ने। एक चाँदी का प्लेट सभा में उस ने उतार दिया। प्लेट पर दो मोहरें थीं। नायब ने कहा—बाबू ने इनाम दिया है।

महिम असहिष्णु हो उठा—वे कहाँ हैं?

उन के दिल में दर्द उठा है। वे अब आ नहीं सकेंगे। आप लोग गाना सुनिए। उन्होंने सब से माफी माँगी है। सभा में एक अस्पष्ट गुंजन उठा।

महिम ने उठ कर अलगाये असन्तुष्टि के स्वर में बदन तोड़ कर कहा—चलता हूँ ताराप्रसन्न! कल साहब आयेंगे।

ताराप्रसन्न ने आपत्ति न की। दूसरे भी उठ पड़े। सभा टूट गयी।

कमरे की जमीन पर रायगृहिणी का हाथ-बक्स खुला पड़ा था। उस के अन्दर कुछ नहीं था। राय स्वयं बिना दृग्पात् किये कमरे में सिर ऊँचा किये चक्कर लगा रहे थे। रायवंश की मर्यादा अक्षुण्ण रही। उत्तेजना और सुरा की गर्मी के कारण शरीर का रक्त मानो खौल रहा था। स्थान-काल अब सब बदल गया था। अनजाने ही वे कमरे के बाहर आ पड़े। जलसाघर में प्रकाश की दीप्ति ने उन्हें आकर्षित किया। पुनः उन्होंने जलसाघर में आ कर प्रवेश किया। सभा शून्य है। दीवाल पर केवल राय-वंशधरगण जीवित हैं। विश्वम्भर ने खुली खिड़की की ओर देखा। ज्योत्स्ना में पृथिवी नहा रही है। वसन्तबयार के साथ मुचुकुन्द फूल की खुशबू आ रही है। कहीं किसी पेड़ पर बैठ कर एक पपीहा लगातार पी कहाँ, पी कहाँ की रट लगा रहा है। राय के मन में संगीत गूँज उठा। कुछ दिन पहले की सुनी हुई चन्द्रा के गले का विहाग—सुनु आ सुनु गा लिया—। सिर उठा कर देखा, चाँद मध्य आकाश में है। पैर की आवाज

से पीछे मुड़े। अनन्त बत्ती बुझाने की तैयारी कर रहा है।

राय ने मना करते हुए कहा—रहने दो।

अनन्त चला जा रहा था। राय ने बुलाया—मेरा इसराज ला दो। खिड़की के सामने इसराज गोद में ले कर राय ने कहा—ढालो। परात पर खुला बोतल पड़ा था—राय ने इशारे से दिखा दिया। पेग दे कर अनन्त चला गया।

इसराज के तार पर छड़ी फिराया। शान्त महल में स्वर फैल गया। विभोर हो कर राय इसराज बजाते रहे। इसराज के क्या बोल फूटे? मीठी आवाज तो साफ़-साफ़ सुनाई पड़ रही थी।

गाने के बोल राय के कान में बज रहे थे—निशीथ रात में दुर्भागी बन्दिनी, द्वार के पास पहरे पर खड़ी विषैली ननद, मेरी आँखों में निद्रा नहीं, निद्रा के बहाने मैं तुम्हारा रूप ध्यान करती हूँ, हे प्रिय! तुम ने इस समय क्यों बाँसुरी बजायी?

राय इसराज रख कर उठ खड़े हुए। धीरे से उन्होंने बुलाया—चन्द्रा! चन्द्रा!!

उन की चन्द्रा! यह गाना भी तो उसी का था। बाहर से मधुर कण्ठ से किसी ने बुलाया—जनाब!

राय ने व्यग्र हो कर कहा—चन्द्रा, चन्द्रा आओ, इधर आओ! दोस्त सब चले गये। चन्द्रा!

कृष्णा ने मुस्कराते हुए आ कर अभिवादन कर के अत्यन्त मधुर स्वर में जो गाना उन्होंने इसराज पर बजाया था उसी का अन्तिम पद गाया—हे प्रिय! इस समय क्यों बंशी बजायी?—हँस कर राय ने अपनी भारी आवाज को यथासम्भव दबा कर गाना प्रारम्भ किया—हे प्रिया! इसी पल, मेरे हृदय में विजयोल्लास है, अकेले कैसे रहा जाये?

राय बोतल का कॉर्क खोल रहे थे। हाथ बढ़ा कर कृष्णा बाई ने कहा—जनाब का हुक्म हो तो बाँदी दे सकती है।

थोड़ा हँस कर राय ने बोतल छोड़ दी। कृष्णा ने बोतल खोली और शराब उँड़ेल कर गिलास राय बाबू के हाथ में पकड़ा दिया।

फिर इसराज का स्वर उठा। साथ ही कृष्णा ने मधुर कण्ठ से गाना

प्रारम्भ किया। गाते-गाते वह नाचने लगी। उस ने गाया—हे प्रिय, हरे फूल की माला में नहीं गूंथलो, ऊँची डाली पर जो फूलों का गुच्छा है वह मुझे दो, मुझे तुम पकड़ कर उठाओ, मैं स्वयं तुम्हारे लिए फूल चुनूँगी। मुँह उठा कर हाथ बढ़ा कर वह नाच रही थी। राय ने इसराज फेंक कर हाथ की मुट्ठी में कृष्णा के दोनों पैर पकड़ कर ताल-ताल पर उसे नचा दिया। गाना समाप्त हुआ। कृष्णा गिरने के बहाने चीख पड़ी। दूसरे ही क्षण वह उतर गयी। मदिरा से मत्त राय ने प्यार से बुलाया—चन्द्रा-चन्द्रा—प्यारी!

गाने के बाद गाना। साथ में सुरा। एक बोतल समाप्त हो गयी। दूसरी बोतल भी खतम होने पर थी। थोड़ी देर बाद ही यार्द जी का अचेत शरीर फर्श पर लुढ़क गया। विश्वम्भर तब भी बैठे थे—मस्त नीलकण्ठ की तरह। एक तकिया सम्हाल उस के सिर के नीचे रख कर अच्छी तरह से उसे सुला दिया। और इसराज खींच कर फिर बजाने लगे। दूसरी बोतल भी खतम हो चली। लेकिन रात समाप्त न हुई। इतने में नागुली घर का तीन बजे का घण्टा बोल उठा—टन्-टन्-टन्।

राजमहल के खम्भे-खम्भे से कबूतरों का शोर उठा। राय को होश आया। नित्य इसी शब्द से निद्रा टूटती है। वे उठ खड़े हुए। सोती कृष्णा को एक बार प्यार किया—चन्द्रा-चन्द्रा प्यारी! फिर बरामदे के बाहर आ कर उन्होंने बुलाया—अनन्त!

अनन्त गया था छत पर प्रभु के लिए तकिया-गलीचा बिछाने। नीचे उतर आते ही राय ने उस से कहा—पगड़ी का चादर, सवारी का पोशाक दे। निताइ से कह दे, तूफान की पीठ कस दे—जल्दी।

विस्मय से अनन्त ने स्वामी के मुख की ओर देखा। देखा, राय मूँछों पर ताव दे रहे हैं।

यह मूर्ति उन की अपरिचित नहीं, लेकिन बहुत दिन से देखा नहीं था। उस ने मृदुस्वर से कहा—मुँह-हाथ पर पानी डाल लीजिए।

कुछ देर बाद ही तूफान की हिनहिनाहट से शेष रात्रि प्रसन्न हो उठी। नारायणगन्ज की नींद टूट चुकी थी। खिड़की से देखा—तूफान की पीठ पर विश्वम्भर राय हैं। शरीर पर चुस्त पायजामा, अचकन और जामदार

माथे पर पगड़ी है। अँधेरे में पूरा न देख कर भी ताराप्रसन्न ने कल्पना की—पैर में जरीदार नागरा, हाथ में चाबुक। तूफ़ान कूदता-कूदता बाहर चला गया।

मैदान के बाद मैदान पार कर धूल की चक्रवात उड़ा कर तूफ़ान तूफ़ान के वेग से उड़ रहा था। रात्रि की शीतल हवा राय के तप्त ललाट का स्पर्श कर रही थी। शराब का नशा धीरे-धीरे घटता जा रहा था। मैदान के बाद था ग्राम कुसुमडिहि। बग़ल में सब्ज़ी लाद कर एक गाड़ी आ रही है। उस में दो आरोही थे। शायद वे हाट जा रहे थे। कुछ शब्द उन के कान में आया—गांगुली बाबू लोग ख़रीद कर…

राय ने ज़ोर से लगाम खींच कर तूफ़ान की गति रोक दी। तब भी गाड़ी के आरोही कह रहे हैं—लगान दे कर अब कोई लाभ नहीं है। सुख था राय राजाओं के ज़माने में।

चारों ओर देख कर राय चौंक उठे।

तूफ़ान की पीठ पर! कहाँ!—यह वे कहाँ आ गये। समझ गया, हाथ से निकला इलाका कीर्तिहाट सामने है। क्षण भर में सीधे हो कर, लगाम खींच कर तूफ़ान को मोड़ कर ज़ोर से उसे बेंत मारा। फिर बेंत मारा। तूफ़ान वेग से दौड़ा। अस्तबल के सामने आ कर राय ने चारों ओर आँख उठा कर देखा, पूरब की ओर प्रकाश की रेखा फूट रही है। अभी रात समाप्त नहीं हुई।

राय ने बुलाया—निताइ!

वे हाँफ रहे थे। अनुभव किया, तूफ़ान भी थरथरा रहा है। राय उतर पड़े। देखा, लगाम के खिंचाव से तूफ़ान का मुख फट गया है। उस के सिर पर हाथ फेरा—बेटा-बेटा!

तूफ़ान मुख न उठा सका। शराब का नशा शायद तब भी पूरा गया नहीं था। बोले—ग़लती बेटा, तेरी भी ग़लती, मेरी भी ग़लती। लज्जा किस बात की तूफ़ान, उठ-उठ!

निताइ पीछे खड़ा था। उस ने कहा—बड़ा हाँफ गया है—ठण्डा होने पर ही उठेगा।

चकित हो कर राय ने मुख घुमा कर देखा—निताइ! निताइ के

हाथ में तूफ़ान को सौंप कर राय शीघ्र मकान के अन्दर चले गये। दुमंजिले पर पैठ कर देखा, जलसाघर तब भी खुला है। झाँक कर देखा, कमरा शून्य है, अभिसारिका जा चुकी है। शराब की ख़ाली बोतल कमरे में लुढ़क रही है। झाड़ और दीवालगिरी की बत्ती तब भी जल रही है। दीवाल पर दृप्त रायवंशधरगण हैं, मुख पर मतवाली हँसी है। भय से राय पीछे हट आये। अचानक लगा, दर्पण में अपना प्रतिबिम्ब देखा है—मोह! केवल उन्हीं का नहीं, सात रायों का मोह इसी कमरे में इकट्ठा है।

दरवाज़े पर से ही वे लौट पड़े। रेलिंग पर झुक कर डरे हुए के समान उन्होंने बुलाया—अनन्त-अनन्त!

अनन्त उत्तर दे कर दौड़ आया। प्रभु का ऐसा कण्ठस्वर उस ने कभी नहीं सुना था। उस के आ कर खड़े होते ही राय बोल उठे—बत्ती बन्द कर दो, बत्ती बन्द कर दो—जलसाघर का किवाड़ बन्द करो—

फिर बात सुनाई न पड़ी। हाथ का चाबुक आवाज़ करता हुआ आ कर जलसाघर के किवाड़ पर गिर पड़ा।



भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित

प्रमुख कहानी-संग्रह

अमृता प्रीतम : चुनी हुई कहानियाँ		
: चुने हुए निबन्ध	अमृता प्रीतम	50.00
प्यार की बातें तथा अन्य कहानियाँ	सुरेन्द्र वर्मा	10.00
भूतलीला	हरिमोहन शर्मा	14.00
एक और नीलांजना (द्वि. सं.)	वीरेन्द्रकुमार जैन	8.00
नये बादल (तृ. सं.)	मोहन राकेश	17.00
सतह से उठता आदमी (पुर., च. सं.)	ग.मा. मुक्तिबोध	18.00
काठ का सपना (तृ. सं.)	,,	15.00
बन्द गली का आखिरी मकान (प. सं.) धर्मवीर भारती	पेपर बैक	8.00
	लाइब्रेरी	16.00
बादलों के बीच धूप	कमल जोशी	4.00
तीन सहेलियाँ	पु. शि. रेगे	4.00
एक समर्पित महिला	नरेश मेहता	4.00
प्रतिनिधि संकलन : सिंहल कहानियाँ	सं. : भ. आ. कौसल्यायन	6.00
सवेरा संघर्ष गर्जन	भगवतशरण उपाध्याय	8.00
मुरदा सराय	शिवप्रसाद सिंह	5.00
प्यार के बन्धन (द्वि. सं.)	रावी	5.00
मेरे कथागुरु का कहना है : 2 (द्वि. सं.)	,,	5.00
ज़िन्दगी और गुलाब के फूल (प. सं.)	उषा प्रियंवदा	3.00
एक परछाईं : दो दायरे	गुलाबदास ब्रोकर	5.00
मोतियों वाले (पुर., द्वि. सं.)	करतारसिंह दुग्गल	5.00
[illegible] (पं. सं.)	[illegible]	14.00
काम के पथ (द्वि. सं.)	आनन्दप्रकाश जैन	5.50
अतीत के कम्पन (द्वि. सं.)	,,	6.00

नये चित्र	राजेन्द्र यादव	5.00
कुछ मोती कुछ सीप (पुर., तृ. स.)	अयोध्याप्रसाद गोयलीय	4.00
आकाश के तारे धरती के फूल (प. सं.)	कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर'	पेपरबैक 7.00 लाइब्रेरी 14.00
जलसाघर (दूसरा स)	ताराशंकर वन्द्योपाध्याय	25.00

(अन्य कहानी संग्रह : अभी अप्राप्य)

गुलमोहर के गुच्छे	मंजुल भगत	9.00
अतीत में कुछ	गंगाप्रसाद विमल	7.00
अपराजिता	भगवतीशरण सिंह	4.00
जहर	श्रवण कुमार	4.00
पचपन कहानियाँ	करतारसिंह दुग्गल	14.00
प्राचीन भारत की श्रेष्ठ कहानियाँ (द्वि. स.)	जगदीश चन्द्र जैन	प्रेस में
दो हजार वर्ष पुरानी कहानियाँ (द्वि. स.)	"	" 4.50
ऑस्कर वाइल्ड की कहानियाँ (द्वि. स.)	ताराशंकर वन्द्योपाध्याय	
राजा निरबंसिया (द्वि. स.)	कमलेश्वर	6.00
खोयी हुई दिशायें (द्वि. स.)	"	4.50
कर्मनाशा की हार	शिवप्रसाद सिंह	5.00
झाड़ी (द्वि स.)	श्रीकान्त वर्मा	4.50
बोलता (द्वि. स.)	शैल मादी	5.00
मेरे गयापुर का कहना है . भाग 1	राही	5.00
सूने आँगन रस बरसै	लक्ष्मीनारायण लाल	5.00
हरियाना लोकमंच की कहानियाँ	राजाराम शास्त्री	4.00
सो कहानी सुनो	अयोध्याप्रसाद गोयलीय	3.00
तिन घोड़ा तिन पाइयाँ (प सं.)	"	प्रेस में
गहरे पानी पैठ (प. स.)	"	5.00
खेल खिलौना (द्वि. सं)	राजेन्द्र यादव	4.50
संघर्ष के बाद (पुर., तृ. स.)	विष्णु प्रभाकर	5.00